# बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर की स्थापत्य कलाः सर्वेक्षण और समीक्षा

पी–एच.डी. (इतिहास)

विषय में उपाधि हेतु प्रस्तुत

**शोध प्रबन्ध**

कला संकाय के अंतर्गत


शोधार्थिनी

**परिणीता कुमारी**

नामांकन सं. 161595916223

शोध निर्देशक

**डॉ. जितेंद्र वर्मा**

पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म.प्र.)





**सत्र–2026**


**पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म.प्र.)**

ग्राम– थनरा, पोस्ट– दिनारा, तहसील– करैरा, एन0एच0– 27,
शिवपुरी, (म0प्र0) पिनकोड– 473665

# पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म.प्र.)

University Established Under section 2F of UGC ACT 1956 Vide M.P. Government Act No17 of 2015

## शोध निर्देशक का प्रमाण–पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि पी0के0 विश्वविद्यालय, शिपपुरी (म.प्र.) के इतिहास विषय के अंतर्गत डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी उपाधि हेतु **"बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर की स्थापत्य कलाः सर्वेक्षण और समीक्षा"** शीर्षक शोध अध्ययन **परिणीता कुमारी** द्वारा मेरे निर्देशन में 240 दिन से अधिक उपस्थित होकर शोध कार्य किया गया इनका शोध कार्य मौलिक है।

यह भी प्रमाणित किया जाता है किः–

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध विश्वविद्यालय अनुदान आयोग विनियम 2009 के अनुरूप पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी म.प्र. के पीएच.डी. उपाधि मध्यप्रदेश के सभी अपेक्षाओं को पूर्ण करता है।

शोध–प्रबन्ध में प्रस्तुत कार्य विश्वविद्यालय में पंजीयन के बाद किया गया है।

**शोध निर्देशक**

दिनांकः–.....

स्थानः– शिवपुरी (म.प्र.)

**डॉ. जितेंद्र वर्मा**
**इतिहास विभाग**

# पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म.प्र.)

University Established Under section 2F of UGC ACT 1956 Vide M.P. Government Act No17 of 2015

## शोधार्थी का घोषणा–पत्र

मैं एतद् द्वारा घोषणा करती हूँ कि, **"बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर की स्थापत्य कलाः सर्वेक्षण और समीक्षा"** शीर्षक प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध में सम्मिलित समग्र कार्य मेरा अपना और मौलिक है।

यह शोध–प्रबन्ध (अंशतः या पूर्णतः) किसी भी विश्वविद्यालय में किसी उपाधि हेतु प्रस्तुत नहीं किया गया है।

यह शोध कार्य 240 दिन से अधिक उपस्थित होकर निर्देशक के सानिध्य में पूर्ण किया गया।

शोधार्थी

दिनांकः–.....

स्थानः– शिवपुरी (म.प्र.)

**परिणीता कुमारी**

**नामांकन सं.161595916223**

# पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म.प्र.)

University Established Under section 2F of UGC ACT 1956 Vide M.P. Government Act No17 of 2015

## कॉपीराइट हस्तांतरण प्रामण–पत्र

थीसिस का शीर्षक "बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर की स्थापत्य कलाः सर्वेक्षण और समीक्षा" शोधार्थी : परिणीता कुमारी

कॉपीराइट हस्तांतरण

अधोहस्ताक्षरी एतद्वारा पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी को पीएच.डी. उपाधि प्रदान करने के लिए प्रस्तुत उपरोक्त शोध प्रबंध के सभी कॉपीराइट सौंपते हैं।

शोधार्थी

दिनांकः–.....

स्थानः– शिवपुरी (म.प्र.)

परिणीता कुमारी

नामांकन सं.161595916223

# पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म.प्र.)

University Established Under section 2F of UGC ACT 1956 Vide M.P. Government Act No17 of 2015

## संस्थान के प्रमुख का अग्रेषित पत्र

**थीसिस शीर्षक** : **"बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर की स्थापत्य कलाः सर्वेक्षण और समीक्षा"** **परिणीता कुमारी** द्वारा छह प्रतियों में विश्वविद्यालय को जमा किया जा रहा है। शोधार्थी ने आवश्यक शुल्क का भुगतान कर दिया है और उसके विरूद्ध कोई बकाया नहीं है।

नाम.....सील.....

दिनांक.....

स्थान.....

( संस्था के प्रमुख के हस्ताक्षर जहां उम्मीदवार पीएचडी डिग्री के लिए पंजी.)

निर्देशक के हस्ताक्षर

दिनांकः–

दिनांक.....

स्थान.....

पता.....

.....

.....

DrillBit

The Report is Generated by DrillBit Plagiarism Detection Software

| | |
|---|---|
| *Selected Language* | Hindi |

*Submission Information*

| | |
|---|---|
| Author Name | परिणीता कुमारी |
| Title | बाबा वैद्यनाथ धाम मंदिर की स्थापत्य कला: सर्वेक्षण और समीक्षा |
| Paper/Submission ID | 5437119 |
| Submitted by | library.pku@gmail.com |
| Submission Date | 2026-04-07 14:37:55 |
| Document type | Thesis Chapter |

*Result Information*

Similarity **2%**

A Unique QR Code use to View/Download/Share Pdf File

LIBRARIAN
P.K. University
Shivpuri (M.P.)

AIScanner

P.K.UNIVERSITY
SHIVPURI (M.P.)
University Established Under section 2f of UGC ACT 1956 Vide MP Government Act No 17 of 2015

Ref. no.: PhD/PKU/2026/05/49 Date: 29/05/2026

## Pre – Ph.D. Submission Presentation Certificate

This is to certify that **Parinita Kumari, Enrollment No: 161595916223,** research scholar under the supervision of **Dr. Jitendra Verma**, Department of History, **Faculty of Arts** has given his/her open Pre-Ph.D. submission presentation on the approved "बाबा वैद्यनाथ धाम मंदिर की स्थापत्य कला : सर्वेक्षण और समीक्षा" on Date 29/05/2026 at Time 11:00AM in the P.K. University, Shivpuri (M.P.).

**Dean Academic**
**P.K. University**
**Shivpuri (M.P.)**

DEAN ACADEMIC
P.K.UNIVERSITY
SHIVPURI (M.P.)

ADDRESS: VILL: THANRA, TEHSIL: KARERA, NH-27, DIST: SHIVPURI, M.P. 473665,
MOB: 7241115088, Email:registrar.pkuniversity@gmail.com

AIScanner

University Result (P.K. University | Shivpuri (M.P) www.pkuniversity.org)

Enter Your Roll Number 161595916223

Select Course Ph.D. in History (Course Work) Select Semester 1

Submit Details

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| **Enrollment Number** | 161595916223 | **Course** | Ph.D. in History (Course Work) | **Candidate Name** | PARINITA KUMARI |
| **Father's /Husband Name** | ASTI NARAIN | **Year/Sem** | 1 | | |
| **Mother Name** | HIRA SINHA | | | | |
| **Session** | 2021-22 | | | | |

| Subject Name | Internal T | Internal T | Internal P | Internal P | External T | External T | External P | External P | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| Research Methodology | N/A | N/A | N/A | N/A | 50 | 34 | N/A | N/A | 34 / 50 |
| Subject Specialization | N/A | N/A | N/A | N/A | 100 | 65 | N/A | N/A | 65 / 100 |
| Review of Literature | N/A | N/A | 100 | 68 | N/A | N/A | N/A | N/A | 68 / 100 |

Marks Obtained 167 Result Pass Max Marks 250

- Student must pass in Theory and Practical separately.
- For pass the candidate is required to obtain 40% marks in each paper and 50% marks in aggregate.

# आभार

किसी शोध कार्य के लिए आभार व्यक्त करना उन सभी के संयुक्त प्रयासों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने का अवसर है जो प्रेरणा और समर्थन के स्रोत रहे हैं और जिन्होंने ज्ञान की खोज में सफलता प्राप्त करने के लिए अमूल्य योगदान दिया है। अत्यंत विनम्रता और गर्व के साथ, मैं उन प्रेरक व्यक्तियों को याद करती हूँ जिन्होंने मेरे कार्य को आगे बढ़ाया है, और मैं उनकी अटूट निष्ठा के लिए अपार प्रसन्नता, कृतज्ञता और धन्यवाद से परिपूर्ण हूँ। सर्वप्रथम, मैं सर्वशक्तिमान ईश्वर को इस परियोजना को पूरा करने के लिए मुझे प्रदान की गई दृढ़ता, साहस और शक्ति के लिए धन्यवाद देना चाहती हूँ।

सर्वोच्च, मैं अपने आदरणीय पर्यवेक्षक, **डॉ0 जितेंद्र वर्मा इतिहास विभाग**, पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी, (मध्य प्रदेश) के प्रति अपनी गहरी कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ, जिनके बिना यह कार्य संभव नहीं हो पाता। उनका असाधारण मार्गदर्शन, अटूट समर्थन, दयालु सहयोग और अनुकूल कार्य वातावरण प्रदान करना अमूल्य रहा है। मैं उनके प्रति ऋणी हूँ जिन्होंने मुझमें उत्कृष्टता की निरंतर खोज, ईमानदारी की प्रबल भावना और हमारे पेशे को संचालित करने वाले नैतिक सिद्धांतों के प्रति सम्मान की भावना पैदा की।

इसके अतिरिक्त, मैं श्री जगदीश प्रसाद शर्मा, कुलाधिपति, पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (मध्य प्रदेश) को अपने शोध कार्य के दौरान आवश्यक बुनियादी ढांचा और सुविधाएं प्रदान करने के लिए हार्दिक धन्यवाद देती हूँ। मैं प्रो. (डॉ.) मुकेश चानसोरिया, कुलपति, पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (मध्य प्रदेश) के प्रति भी अपनी गहरी कृतज्ञता, आस्था और श्रद्धा व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने मेरे शोध के दौरान उदार और बहुमूल्य सहयोग प्रदान किया।

मैं इस सुखद अवसर पर परम पूज्य डॉ. जितेंद्र कुमार मिश्रा, कार्यकारी निदेशक, पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (मध्य प्रदेश) के प्रति अपनी गहरी कृतज्ञता और

श्रद्धा व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने निरंतर प्रोत्साहन दिया और मुझे आवश्यक सुविधाएं प्रदान कीं, जिससे मैं अपना परियोजना कार्य पूरा कर सका।

पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (मध्य प्रदेश) के रजिस्ट्रार डॉ. जितेंद्र मलिक का मैं तहे दिल से आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने अपने व्यस्त कार्यक्रम के बावजूद इस कार्य की शुरुआत से ही मुझे प्रोत्साहन और समर्थन दिया है। शोध कार्य के दौरान उनके स्नेहपूर्ण व्यवहार और धैर्य के लिए मैं उन्हें धन्यवाद देने के लिए शब्दों की कमी महसूस करती हूँ।

मैं पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (मध्य प्रदेश) की डीन एकेडमिक्स डॉ. ऐमन फातिमा का भी आभार व्यक्त करती हूँ।

मैं पी.के. विश्वविद्यालय, मध्य प्रदेश के पीएचडी सेल के प्रभारी डॉ. मनीष कुमार का भी हार्दिक आभार और प्रशंसा व्यक्त करती हूँ।

मैं पी.के. विश्वविद्यालय की लाइब्रेरियन सुश्री निशा यादव, सहायक लाइब्रेरियन श्री आनंद कुमार और अन्य स्टाफ सदस्यों का भी आभार व्यक्त करती हूँ। मैं पी.के. विश्वविद्यालय के सूचना प्रौद्योगिकी प्रकोष्ठ के श्री पंकज सिंह, श्री आलोक खरे और श्री प्रुषोत्तम यादव की भी आभारी हूँ।

अपने शोध कार्य के दौरान अपने प्रिय माता-पिता, भाइयों और पति के प्रेम, समर्थन और निरंतर प्रोत्साहन के लिए मैं अपनी कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए शब्दों में क्षीण हूँ।

अंत में, मैं इस बात के लिए हार्दिक आभार व्यक्त करना चाहती हूँ कि मुझे पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (मध्य प्रदेश) में उच्च शिक्षा प्राप्त करने का अवसर मिला। मैं इस विश्वविद्यालय की ऋणी रहूँगी; इसने मेरे जीवन को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और मेरे हृदय में इसका विशेष स्थान है।

अपने शोध कार्य के दौरान अपने परिवार के सदस्यों के सहयोग और अटूट प्रेम के लिए मैं उनका भी आभार व्यक्त करती हूँ। अंत में, मैं सर्वशक्तिमान ईश्वर की कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने मुझे जीवन के सबसे कठिन समय का सामना करने का साहस और शक्ति प्रदान की और मेरी प्रार्थनाओं का विशेष रूप से उत्तर दिया। मैं अपने जीवन में अब तक जो कुछ भी हासिल किया है, उसके लिए आभारी हूँ।

तारीख:...../...../.....

स्थान शिवपुरी : म .प्र.

परिणीता कुमारी

नामांकन संख्या :161595916223

# अनुक्रमणिका


| अध्याय क्रम | अध्याय शीर्षक | पृष्ठ संख्या |
|---|---|---|
| अध्याय–1: | परिचय | 01–07 |
| अध्याय–2: | साहित्य समीक्षा | 08–18 |
| अध्याय–3: | अनुसंधान पद्धति, उद्देश्य, परिकल्पना, अध्ययन क्षेत्र एवं अनुसंधान क्रिया विधि | 19–74 |
| अध्याय–4: | बैद्यनाथ धाम मंदिर का विश्लेषण | 75–116 |
| अध्याय–5: | बैद्यनाथ धाम मंदिर का वास्तु और तकनीकी विश्लेषण | 117–168 |
| अध्याय–6: | साक्षात्कार का विषयगत विश्लेषण | 169–196 |
| अध्याय–7: | निष्कर्ष एवं सुझाव | 197–205 |
| परिशिष्ट 01 | संदर्भ ग्रंथ सुची | 206–210 |
| परिशिष्ट 02 | अनुसूची / प्रश्नावली | 211–214 |
| परिशिष्ट 03 | सेमिनार प्रमाण–पत्र | 215–216 |
| परिशिष्ट 04 | शोध–पत्र प्रकाशन | 217–231 |

# तालिका


| तालिका संख्या | तालिका शीर्षक | पृष्ठ संख्या |
|---|---|---|
| 5.01 | आयु के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण | 170 |
| 5.02 | शैक्षणिक स्थिति के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण | 171 |
| 5.03 | परिवार की मासिक आय के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण | 172 |
| 5.04 | लिंग के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण | 173 |
| 5.05 | पेशा के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण | 174 |
| 5.06 | देवघर जिला में आधारभूत सुविधाओं (सड़क, बिजली, रेलवे, अस्पताल, शिक्षण संस्थान इत्यादि) की स्थिति | 175 |
| 5.07 | चिकित्सा की आपातकालीन व्यवस्था संबंधी जानकारी | 176 |
| 5.08 | स्वास्थ्य केंद्र पर मुफ्त में दवाईयां मिलने संबंधी जानकारी | 177 |
| 5.09 | क्या आपलोग बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर के महत्व को जानते हैं ? | 178 |
| 5.10 | आपलोग बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर कब से | 179 |

| | | |
|---|---|---|
| | आते हैं? | |
| **5.11** | क्या आपलोगों का बैद्यनाथ धाम मंदिर पर विश्वास है? | **180** |
| **5.12** | आपलोग मंदिर क्यों आते हैं ? | **181** |
| **5.13** | क्या भगवान शिव की पूजा करने से आपलोगों की पूर्व में की गई कामना की पूर्ति हुई है ? | **182** |
| **5.14** | क्या आपलोग सावन में कॉवर यात्रा के दौरान दी गई सुविधाओं से संतुष्ट हैं ? | **183** |
| **5.15** | क्या आपलोग मंदिर परिसर में प्रदत्त सुविधाओं से संतुष्ट हैं ? | **184** |
| **5.16** | क्या आपलोग मंदिर परिसर में पुलिस एवं प्रशासन के व्यवहार से संतुष्ट हैं? | **185** |
| **5.17** | क्या आपलोग मंदिर परिसर में पंडा/पुजारी के व्यवहार से संतुष्ट हैं ? | **186** |
| **5.18** | मंदिर परिसर में सामाजिक वातावरण से संबंधित विवरण | **187** |
| **5.19** | मंदिर परिसर का सांस्कृतिक वातावरण से संबंधित विवरण | **188** |
| **5.20** | मंदिर के अलंकरण एवं साज सजा से संबंधित विवरण | **189** |
| **5.21** | मंदिर परिसर को प्रभावित करने वाले | **190** |

| | | |
|---|---|---|
| | सामाजिक कारक | |
| **5.22** | मंदिर से रोजगार के अवसरों पर पड़ने वाले प्रभावों से संबंधित विवरण | **191** |
| **5.23** | मंदिर का आर्थिक विकास पर पड़ने वाले प्रभाव | **192** |
| **5.24** | क्या आपलोग महिला सुरक्षा से संतुष्ट हैं? | **193** |
| **5.25** | शादी, मुंडन जैसे शुभ कार्यों पर बाबा मंदिर में कम खर्च होता है, इसपर आपलोगों का क्या विचार है ? | **194** |

# चित्र


| चित्र संख्या | चित्र शीर्षक | पृष्ठ संख्या |
|---|---|---|
| **5.01** | आयु के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण | **170** |
| **5.02** | शैक्षणिक स्थिति के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण | **171** |
| **5.03** | परिवार की मासिक आय के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण | **172** |
| **5.04** | लिंग के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण | **173** |
| **5.05** | पेशा के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण | **174** |
| **5.06** | देवघर जिला में आधारभूत सुविधाओं (सड़क, बिजली, रेलवे, अस्पताल, शिक्षण संस्थान इत्यादि) की स्थिति | **175** |
| **5.07** | चिकित्सा की आपातकालीन व्यवस्था संबंधी जानकारी | **176** |
| **5.08** | स्वास्थ्य केंद्र पर मुफ्त में दवाईयां मिलने संबंधी जानकारी | **177** |
| **5.09** | प्रतिशत विवरण | **178** |

| | | |
|---|---|---|
| **5.10** | प्रतिशत विवरण | 179 |
| **5.11** | प्रतिशत विवरण | 180 |
| **5.12** | प्रतिशत विवरण | 181 |
| **5.13** | प्रतिशत विवरण | 182 |
| **5.14** | प्रतिशत विवरण | 183 |
| **5.15** | प्रतिशत विवरण | 184 |
| **5.16** | प्रतिशत विवरण | 185 |
| **5.17** | प्रतिशत विवरण | 186 |
| **5.18** | प्रतिशत विवरण | 187 |
| **5.19** | प्रतिशत विवरण | 188 |
| **5.20** | प्रतिशत विवरण | 189 |
| **5.21** | प्रतिशत विवरण | 190 |
| **5.22** | प्रतिशत विवरण | 191 |
| **5.23** | मंदिर का आर्थिक विकास पर पड़ने वाले प्रभाव | 192 |
| **5.24** | प्रतिशत विवरण | 193 |
| **5.25** | प्रतिशत विवरण | 194 |

# प्राक्कथन

स्थापत्य कला अथवा वास्तुकला, भवनों के डिजाइन तथा निर्माण से जुड़ी हुई कला है। इसमें वास्तु विद्या, कारीगरी तथा भवन बनाने की कला भी शामिल है। स्थापत्य कला में, विस्तृत एवं सटीक मापन के कारण गणित तथा अभियंत्रिकी का अध्ययन भी शामिल होता है। इस कला में, विशेष तौर पर कई तरह की सामग्री या उनके मिश्रण का प्रयोग किया जाता है यथा– पत्थर, लकड़ी, कांच, धातु, रेत आदि।

भारत के स्थापत्य कला की जड़ें यहाँ के इतिहास, दर्शन तथा संस्कृति में निहित है। भारत की वास्तुकला यहाँ की परम्परागत तथा बाहरी प्रभावों का मिश्रण है। भारतीय वास्तुकला की विशेषता यहाँ की दीवारों के उत्कृष्ट तथा प्रचुर अलंकरण में है। भित्तिचित्रों तथा मूर्तियों की योजना, जिसमें अलंकरण के अतिरिक्त अपने विषय के गंभीर भाव भी व्यक्त होते हैं, भवन को बाहर से कभी–कभी पूर्णतया लपेट लेती है। इसमें वास्तु का जीवन से संबंध के साथ–साथ आध्यात्मिक जीवन भी अंकित है। न्यूनाधिक उभार में उत्कीर्ण अपने अलौकिक कृत्यों में लगे हुए देश भर के देवी–देवता तथा प्रचीन पौराणिक गाथाएँ, मूर्तिकला को प्रतीक मानकर दर्शकों के सम्मुख अत्यंत रोचक कथाओं तथा मनोहर चित्रों की एक पुस्तक सी खोल देती है।

वास्तव में **वास्तु** शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत भाषा के **वस्** धातु से हुई है जिसका अर्थ बसना होता है। चूंकि बसने के लिये भवन की जरूरत होती है अतः वास्तु का

अर्थ **रहने हेतु भवन** से है। वस् धातु से ही वास, आवास, निवास, बसति, बस्ती इत्यादि शब्द बनकर तैयार हुए हैं।

भारतीय स्थापत्य कला के इतिहास में हिन्दू देवी–देवता के मन्दिर का विशेष स्थान है। प्रत्येक हिन्दू मंदिर में अन्दर एक गर्भगृह होता है, जिसमें मुख्य देवता की मूर्ति स्थापित रहती है। गर्भगृह के ऊपर टॉवर की आकृति होती है जिसे शिखर अथवा विमान कहते हैं। मन्दिर के गर्भगृह के चारों तरफ परिक्रमा करने के लिये स्थान होता है। इन सबके अलावा मंदिर में सभा के लिये कक्ष भी होता है।

मन्दिर शब्द संस्कृत वाङ्मय में बहुत अधिक प्राचीन नहीं माना गया है। महाकाव्य तथा सूत्रग्रन्थों में मंदिर की अपेक्षा देवालय, देवायतन, देवकुल, देवगृह इत्यादि शब्दों का प्रयोग खुब हुआ है। मंदिर का सर्वप्रथम उल्लेख शतपथ ब्राह्मण नामक पुस्तक में मिलता है। शाखांयन स्त्रोत सूत्र में प्रासाद को दीवारों, छत, एवं खिड़कियों से युक्त कहा गया है वहीं वैदिक युग में प्रकृति देवों की पूजा का विधान भी था। इसमें दार्शनिक विचारों के साथ–साथ रूद्र एवं विष्णु का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद में रूद्र प्रकृति, वनस्पति तथा पशुचारण के देवता और विष्णु यज्ञ के देवता माने गये हैं। बाद में चलकर, उत्तरवर्ती वैदिक साहित्य में विष्णु देवताओं में श्रेष्ठतम माने जाने लगे।

यह शोध प्रबंध 'समष्टिगत समस्याओं' पर एक 'व्यष्टिगत अध्ययन' है। इस शोध प्रबंध को निम्नलिखित अध्यायों में विभक्त किया गया हैः–

**प्रथम अध्याय में** स्थापत्य कला एवं बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर से संबंधित तथ्यों का विश्लेषण किया गया है।

**द्वितीय अध्याय** साहित्य समीक्षा के अन्तर्गत पूर्व के साहित्यों का समीक्षा किया गया है।

**तृतीय अध्यायं** में अनुसंधान पद्धति, उद्देश्य, परिकल्पना,अध्ययन क्षेत्र एवंअनुसंधान कियाविधि का वर्णन किया गया है।

**चतुर्थ अध्याय** में वैद्यनाथ धाम मंदिर का विश्लेषण किया गया है।

**पंचम अध्याय** में बैद्यनाथ धाम मंदिर का वास्तु और तकनीकी विश्लेषण का वर्णन किया गया है।शोध से स्पष्ट हैं कि वैद्यनाथ मंदिर उत्तरी भारत के प्रचलित मंदिर स्थापत्य को स्वरूप दिया गया है जिसे चतुष्कोणात्मक मंदिर के रूप में जाना जाता है। इस स्वरूप का अपवाद कम ही मिलता है।

**षष्ठम् अध्याय** में साक्षात्कार का विषयगत विश्लेषण का वर्णन किया गया है।

**सप्तम् अध्याय** में निष्कर्ष एवं सुझाव वर्णन किया गया है।

इसप्रकार प्रस्तुत शोध में हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर का स्थापत्य कला मुख्य रूप से बौद्धकालीन स्थापत्य कला से मिलती–जुलती है। विशेषकर गिद्धौर के शासक और राजा पूरणमल सिंह का इस मंदिर के विकास में अत्यधिक सहयोग रहा। लेकिन यहाँ हमें इस बात को भी स्वीकारना होगा कि इस मंदिर के विकास में शासक वर्ग के साथ– साथ आम

जनता का भी भरपूर सहयोग मिलता रहा है। इस मंदिर का देवघर के आर्थिक विकास के साथ–साथ सांस्कृतिक विकास में भी अहम भूमिका रही है।

अंत में एक शोधार्थी के रूप में मैं कहना चाहूंगी कि भारत, अपने समृद्ध सांस्कृतिक और धार्मिक इतिहास के साथ, कई प्राचीन मंदिरों और तीर्थ स्थलों का घर है। भारत के झारखंड राज्य के देवघर जिले में स्थित बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर एक ऐसा ही महत्वपूर्ण तीर्थ स्थल है। बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक के रूप में, मंदिर भगवान शिव को समर्पित है और हिंदू भक्तों के लिए बहुत महत्व रखता है। मंदिर परिसर की वास्तुकला और तकनीक समय के साथ विकसित हुई है, जो इस क्षेत्र में रहने वाले समुदायों की धार्मिक मान्यताओं और प्रथाओं को दर्शाती है।

अध्याय–1

# परिचय

स्थापत्य कला अथवा वास्तुकला, भवनों के डिजाइन तथा निर्माण से जुड़ी हुई कला है। इसमें वास्तु विद्या, कारीगरी तथा भवन बनाने की कला भी शामिल है। स्थापत्य कला में, विस्तृत एवं सटीक मापन के कारण गणित तथा अभियंत्रिकी का अध्ययन भी शामिल होता है। इस कला में, विशेष तौर पर कई तरह की सामग्री या उनके मिश्रण का प्रयोग किया जाता है यथा– पत्थर, लकड़ी, कांच, धातु, रेत आदि।[1]

भारत के स्थापत्य कला की जड़ें यहाँ के इतिहास, दर्शन तथा संस्कृति में निहित है। भारत की वास्तुकला यहाँ की परम्परागत तथा बाहरी प्रभावों का मिश्रण है। भारतीय वास्तुकला की विशेषता यहाँ की दीवारों के उत्कृष्ट तथा प्रचुर अलंकरण में है। भित्तिचित्रों तथा मूर्तियों की योजना, जिसमें अलंकरण के अतिरिक्त अपने विषय के गंभीर भाव भी व्यक्त होते हैं, भवन को बाहर से कभी–कभी पूर्णतया लपेट लेती है। इसमें वास्तु का जीवन से संबंध के साथ–साथ आध्यात्मिक जीवन भी अंकित है। न्यूनाधिक उभार में उत्कीर्ण अपने अलौकिक कृत्यों में लगे हुए देश भर के देवी–देवता तथा प्रचीन पौराणिक गाथाएँ, मूर्तिकला को प्रतीक मानकर दर्शकों के सम्मुख अत्यंत रोचक कथाओं तथा मनोहर चित्रों की एक पुस्तक सी खोल देती है।

वास्तव में **वास्तु** शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत भाषा के **वस्** धातु से हुई है जिसका अर्थ बसना होता है। चूंकि बसने के लिये भवन की जरूरत होती है अतः वास्तु का अर्थ **रहने हेतु भवन** से है। वस् धातु से ही वास, आवास, निवास, बसति, बस्ती इत्यादि शब्द बनकर तैयार हुए हैं।

भारतीय स्थापत्य कला के इतिहास में हिन्दू देवी–देवता के मन्दिर का विशेष स्थान है। प्रत्येक हिन्दू मंदिर में अन्दर एक गर्भगृह होता है, जिसमें मुख्य देवता की मूर्ति स्थापित रहती है। गर्भगृह के ऊपर टॉवर की आकृति होती है जिसे शिखर अथवा विमान कहते हैं।

मन्दिर के गर्भगृह के चारों तरफ परिक्रमा करने के लिये स्थान होता है। इन सबके अलावा मंदिर में सभा के लिये कक्ष भी होता है।

मन्दिर शब्द संस्कृत वाङ्मय में बहुत अधिक प्राचीन नहीं माना गया है। महाकाव्य तथा सूत्रग्रन्थों में मंदिर की अपेक्षा देवालय, देवायतन, देवकुल, देवगृह इत्यादि शब्दों का प्रयोग खुब हुआ है। मंदिर का सर्वप्रथम उल्लेख शतपथ ब्राह्मण नामक पुस्तक में मिलता है। शाखांयन स्त्रोत सूत्र में प्रासाद को दीवारों, छत, एवं खिड़कियों से युक्त कहा गया है वहीं वैदिक युग में प्रकृति देवों की पूजा का विधान भी था। इसमें दार्शनिक विचारों के साथ–साथ रूद्र एवं विष्णु का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद में रूद्र प्रकृति, वनस्पति तथा पशुचारण के देवता और विष्णु यज्ञ के देवता माने गये हैं। बाद में चलकर, उत्तरवर्ती वैदिक साहित्य में विष्णु देवताओं में श्रेष्ठतम माने जाने लगे।

भारत की प्राचीन स्थापत्य कला में मंदिरों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है।[2] भारतीय संस्कृति में मंदिर निर्माण के पीछे यह सत्य छुपा हुआ था कि ऐसा धर्म स्थापित हो जोकि जनता को सहजता व व्यवहारिकता से प्राप्त हो सके। इसी उद्धेश्य की पूर्ति के लिए मंदिर स्थापत्य कला का प्रार्दुभाव हुआ। इससे पूर्व भारत में बौद्ध तथा जैन धर्म द्वारा गुहा, स्तूपों और चैत्यों का निर्माण किया जाने लगा था। कुषाणकाल के बाद विशेषकर गुप्त काल में देवताओं की पूजा के साथ ही देवालयों का निर्माण भी प्रारंभ हो गया।

प्रारंभिक काल के मंदिरों का वास्तु विन्यास बौद्ध बिहारों से काफी प्रभावित था। इनकी छत थोड़ी चपटी एवं इनमें गर्भगृह भी होता था। मंदिरों में रूप विधान की कल्पना की गई तथा कलाकारों ने मंदिरों को साकार रूप प्रदान करने के साथ ही साथ देहरूप में स्थापित किया। चौथी सदी में भागवत धर्म के अभ्युदय के बाद इष्टदेव अर्थात भगवान की प्रतिमा स्थापित करने की आवश्यकता प्रतीत हुई। अतएव वैष्णव मत को मानने वाले मंदिर निर्माण की योजना बनाने लगे। साँची में पाया गया दो स्तम्भयुक्त कमरे वाला मंदिर गुप्तमंदिर के प्रथम चरण का माना जाता है। बाद में गुप्त काल में बड़े पैमाने पर मंदिरों का निमार्ण किया गया जिनमें वैष्णव एवं शैव दोनों धर्मो के मंदिर हैं। प्रारम्भ में ये मंदिर

बिल्कुल सादा थे एवं इनमें स्तंभ अलंकृत नहींहोते थे। शिखरों के स्थान पर छत सपाट होती थी और गर्भगृह में भगवान की प्रतिमा, काफी ऊँची होते थे। गर्भगृह के समक्ष स्तंभों पर आश्रित एक छोटा या बड़ा बरामदा भी मिलने लगा था। लगभग यही परम्परा बाद के काल खंडों भी में प्राप्त होती है।

बैद्यनाथ धाम का मंदिर सदियों से तीर्थ यात्रा का केंद्र रहा है, देश भर से लाखों भक्तों को आकर्षित करता है। मंदिर का समृद्ध इतिहास और स्थापत्य महत्व इसे धार्मिक विश्वासों और स्थापत्य कला के बीच प्रतिच्छेदन के अध्ययन के लिए एक आदर्श विषय बनाता है। बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर में कई संरचनाएं हैं, जिनमें भगवान शिव को समर्पित प्राथमिक मंदिर, छोटे मंदिर, सभाओं के लिए सभामंडप और सहायक भवन शामिल हैं। इन संरचनाओं को आंगनों के चारों ओर व्यवस्थित किया गया है, जिससे भक्तों को अनुष्ठान करने, ध्यान लगाने और धार्मिक चर्चाओं में शामिल होने के लिए जगह मिलती है। मंदिर परिसर में रास्तों और गलियारों का एक जटिल जालतन्त्र है, जो पवित्र स्थान के भीतर भक्तों की आवाजाही को सुविधाजनक बनाता है। धार्मिक संरचनाओं के अलावा, मंदिर परिसर में अतिथिशाला, प्रशासनिक कार्यालय और भंडारण स्थान जैसी सुविधाएं भी शामिल हैं। ये सहायक भवन मंदिर के दैनिक कामकाज को समर्थन देने, धार्मिक आयोजनों के सुचारू निष्पादन को सुनिश्चित करने और मंदिर में आने वाले भक्तों की जरूरतों को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर, क्षेत्र की समृद्ध सांस्कृतिक और धार्मिक विरासत को दर्शाते हुए कई कलात्मक तत्वों और शास्त्रों से सुशोभित है। मंदिर की दीवारों, स्तंभों और छतों को हिंदू पौराणिक कथाओं के दृश्यों को चित्रित करने वाली जटिल नक्काशी और मूर्तियों से सजाया गया है, जिसमें भगवान शिव, पार्वती और अन्य देवताओं से संबंधित कहानियां शामिल हैं। ये कलात्मक तत्व भक्तों के बीच हिंदू धर्म की गहरी समझ और प्रशंसा को बढ़ावा देते हुए धार्मिक संदेशों और कहानियों को व्यक्त करने का काम करते हैं।मंदिर परिसर में विभिन्न शास्त्रीय तत्व भी हैं, जैसे कि पवित्र प्रतीक और भगवान शिव और अन्य देवताओं से जुड़े रूपांकन। ये प्रतीक गहरा आध्यात्मिक महत्व रखते हैं, जो मंदिर और इसके आगंतुकों के लिए दिव्य आशीर्वाद और सुरक्षा का आह्वान करते हैं।

मंदिर पर प्रारंभिक अध्ययनों में से एक 'The Temples of Deoghar' द्वारा 'Late Rajendra Laal Mitra' में आयोजित किया गया था, जिसने मंदिर परिसर का विस्तृत विवरण प्रदान किया, जिसमें इसकी वास्तुकला और तकनीक विशेषताएं शामिल थीं। इस अध्ययन ने मंदिर के बनावट और निर्माण में मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान की, जिसमें इसके निर्माण में प्रयुक्त सामग्री और तकनीक भी शामिल थी। "The Baidnyanath Glory" द्वारा 'Dr- Pradip Kumar Sinhgha Deo' में किए गए एक अन्य अध्ययन में उन धार्मिक विश्वासों की जांच की गई, जिन्होंने मंदिर के निर्माण और बनावट को प्रभावित किया है। इस अध्ययन ने समुदाय को मंदिर के महत्व और इसके निर्माण और बनावट को प्रभावित करने वाले धार्मिक विश्वासों की एक मूल्यवान समझ प्रदान की। अधिक हाल के अध्ययनों ने मंदिर के अध्ययन में आधुनिक तकनीक के उपयोग पर ध्यान केंद्रित किया है। " Banwari Laal Kanchhal " ने मंदिर परिसर और इसकी वास्तुकला और तकनीकी बनावट का विस्तृत विश्लेषण प्रदान करने के लिए वास्तुशिल्प छायांकन का उपयोग किया। इस अध्ययन ने मंदिर परिसर की एक मूल्यवान समझ प्रदान की, जिसमें इसके स्थापत्य और तकनीकी बनावट, और समय के साथ इसे प्रभावित करने वाले धार्मिक विश्वास शामिल हैं।

### भवन निर्माण सामग्री और निर्माण तकनीक

बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर के निर्माण में स्थानीय रूप से निर्मित निर्माण सामग्री, जैसे कि बलुआ पत्थर और चूना गारा का उपयोग शामिल था। इन सामग्रियों का चुनाव स्थानीय पर्यावरण के बारे में भवन निर्माता के ज्ञान और क्षेत्र की जलवायु परिस्थितियों को सहन करने वाली सामग्रियों का चयन करने की उनकी क्षमता को दर्शाता है। मंदिर के निर्माण में नियोजित निर्माण तकनीक पत्थर की चिनाई की महारत को प्रदर्शित करती है, जैसे मंदिर के कुछ हिस्सों में गारा के उपयोग के बिना सटीक नक्काशी और पत्थर के सांचो को ठीक से बिठाकर जमाना। भवन निर्माताओं ने मंदिर के जटिल और जटिल बनावट को बनाने के लिए उन्नत तकनीकों, जैसे कैंटिलीवर संरचनाओं और कॉर्बेल्ड मेहराबों को भी नियोजित किया।

## मंदिर में अनुष्ठान और समारोह

बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर पूजा का एक सक्रिय स्थल है, जिसमें प्रतिदिन विभिन्न अनुष्ठान और समारोह होते हैं। इन अनुष्ठानों में प्रार्थना की पेशकश, पवित्र भजनों का पाठ, और विशेष संस्कारों का प्रदर्शन शामिल है, जैसे कि अभिषेकम, एक अनुष्ठान जहां शिवलिंग को पानी, दूध या अन्य पवित्र पदार्थों से स्नान कराया जाता है। मंदिर में साल भर विभिन्न त्योहारों का भी आयोजन होता है, जिसमें हजारों भक्त आते हैं जो उत्सव में भाग लेते हैं और देवता से आशीर्वाद मांगते हैं। मंदिर परिसर के बनावट और विन्यास को इन अनुष्ठानों और समारोहों के प्रदर्शन की सुविधा के लिए संरचित किया गया है, विशेष रूप से विभिन्न धार्मिक गतिविधियों के लिए निर्दिष्ट स्थान के साथ। मंदिर की वास्तुकला में ऐसी विशेषताएं भी शामिल हैं जो इन घटनाओं के दौरान भक्तों के सुचारू प्रवाह की सुविधा प्रदान करती हैं, जैसे कि विस्तृत गलियारे, विशाल प्रांगण और अलग प्रवेश द्वार और निकास।

## मंदिर का सामाजिक–सांस्कृतिक महत्व

बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर स्थानीय समुदाय और व्यापक हिंदू आबादी के लिए अत्यधिक सामाजिक–सांस्कृतिक महत्व रखता है। यह धार्मिक समारोहों, सांस्कृतिक कार्यक्रमों और सामुदायिक गतिविधियों के लिए एक केंद्र बिंदु के रूप में कार्य करता है, भक्तों के बीच एकता की भावना और साझा पहचान को बढ़ावा देता है। मंदिर स्थानीय अर्थव्यवस्था में भी एक आवश्यक भूमिका निभाता है, धार्मिक आयोजनों और त्योहारों के दौरान भक्तों की आमद से क्षेत्र में व्यवसायों को बढ़ावा मिलता है। एक सांस्कृतिक और धार्मिक स्थल के रूप में मंदिर का संरक्षण और प्रचार समुदाय के सामाजिक और आर्थिक कल्याण में योगदान देता है।

## बैद्यनाथ धाम मंदिर का आर्थिक और सामाजिक प्रभाव

स्थानीय समुदाय पर बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर के आर्थिक प्रभाव की भी साहित्य में जांच की गई है। जोशी (2014) ने आसपास के क्षेत्र पर मंदिर के आर्थिक प्रभावों पर

एक अध्ययन किया, जिसमें इस बात पर ध्यान केंद्रित किया गया कि मंदिर ने पर्यटन, रोजगार के अवसरों और बुनियादी ढांचे के विकास के माध्यम से स्थानीय अर्थव्यवस्था में कैसे योगदान दिया है।[3]

शोध से पता चला कि मंदिर परिसर स्थानीय आबादी की आजीविका का समर्थन करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और क्षेत्र के समग्र विकास में योगदान देता है। यहां प्रतिदिन लाखों की संख्या में श्रद्धालु भक्तजन आते हैं जो पुजा अर्चना के साथ – साथ यहां से अनेक प्रकार के समाग्री खरीद कर ले जाते हैं। यहां मंदिर प्रांगन और उसके आस – पास में विवाह, यज्ञोपवित, मुण्डन संस्कार आदि के लिए भी लोग आते हैं। इससे यहां के व्यपार में काफी वृद्धि होती है। वास्तव में यदि देखा जाए तो संपूर्ण देवघर शहर और उसके आस–पास के क्षेत्र की आर्थिक गतिविधियां प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से बाबा मंदिर पर निर्भर करता है। जहां तक सामाजिक वातावरण का प्रश्न है तो देवघर शहर का सामाजिक वातावरण मिला जुला वातावरण है। यहां का सामाजिक वातावरण झारखण्ड के अन्य शहरों की तुलना में बिल्कुल अलग है।

## निष्कर्ष

बैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग भारत के जो वर्तमान में झारखण्ड प्रदेश (संयुक्त बिहार प्रदेश) के संताल परगना के पर्वतीय क्षेत्र में अवस्थित है। तीर्थों की धार्मिक परंपरा में इसका महत्वपूर्ण स्थान है।[4] देवघर का इतिहास देवघर के मंदिरों का इतिहास है। आज देवघर जो कुछ भी दिखलाई पर रहा है, वह बाबा मंदिर का ही परिणाम है। अतीत के झरोखे से झांकने के बाद ऐसा लगता है कि देवघर सदैव समस्त भारतीय संस्कृति का वाहक रहा है। कम से कम 12 सौ वर्षों की ऐतिहासिक सामग्री से यह साफ स्पष्ट होता है कि देवघर जनपद नहीं होने के बावजूद भी आम लोगों के हृदय मंदिर में पवित्र मुर्ति के समान रहा, राज्य नहीं रहने पर भी हमेशा देश के राजाओं, महाराजाओं और छोटे–छोटे सामंतों की इष्टदेव की भूमि के रूप में आदर प्राप्त करता रहा और गंगा के किनारे नहीं रहने पर भी सदैव गंगा जल से धुलता रहा है। पूर्वांचल में बाबा बैद्यनाथ मंदिर ऐतिहासिक बोध की

आधार भूमि है। धार्मिक साहित्य में इसके इतिहास के संबंध में बहुश्रुत सामग्रियाँ है। संपूर्ण भारत में द्वादश ज्योतिर्लिंग के मंदिरों की श्रृखला में इसके ऐतिहासिक संदर्भ को सभी स्वीकार करते हैं। इस ज्योतिर्लिंग का उल्लेख साधना की परंपरा में भी प्रतिष्ठित है।

**अध्याय–2**

# साहित्य समीक्षा

''**बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर की स्थापत्य कलाः सर्वेक्षण और समीक्षा** '' नामक शोध कार्य में निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए साहित्य समीक्षा बहुत ही आवश्यक है। साहित्य समीक्षा, जिस चीज की हम जाँच कर रहे होते हैं और जो हमारे अध्ययन व विषय क्षेत्र में पहले से ही जाँच की जा चुकी है, दोनों के बीच संबंध बनाने में बहुत ही मददगार साबित होता है। साहित्य समीक्षा के माध्यम से हम पहले के साहित्य में कमियों को भरते है तथा उसे और अधिक समृद्ध बनाने का प्रयास करते हैं। साहित्य समीक्षा का मुख्य उद्देश्य पूर्व के शोध कार्यों के साथ अपने शोध अथवा निष्कर्ष की तुलना करना, अपने शोध कार्य को समाजिक मूल्यों से जोड़कर तैयार करने का प्रयास करना, भविष्य में शोधकर्त्ताओं के लिए शोध की पृष्ठभूमि तैयार करना आदि है। बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर का भारतीय संस्कृति और स्थापत्य कला से सीधा संबंध है। इस तथ्य के संबंध में अनेक विद्वानों तथा शोधकर्त्ताओं ने अपना अलग– अलग मत व्यक्त किए हैं जो इस प्रकार है –

**उपाध्याय, डॉ0 उदयनारायण एवं तिवारी, प्रो0 गौतम (2007)** अपनी पुस्तक भारतीय स्थापत्य एवं कला में लिखते हैं कि किसी भी देश की संस्कृति स्वयं को धर्म, दर्शन, साहित्य एवं स्थापत्य कला व वास्तु कला के रूप में अभिव्यक्त करती है। भारतीय संस्कृति के उत्थान एवं उसे लगातार अक्षुण्ण बनाए रखने में यहाँ की पारंपरिक कलाओं का अत्यधिक योगदान रहा है। यही कारण है कि डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल ने धर्म तथा कला को भारतीय संस्कृति का दर्पण कहा है।[5]

**कंछल, बनवारी लाल, (2020)** ने अपनी पुस्तक बाबा बैद्यनाथधाम महिमा, इतिहास, विशेषता, तिर्थ और मंदिर में लिखते हैं कि बैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग झारखण्ड राज्य के देवघर शहर में स्थित है। इसकी प्रसिद्धि शास्त्र एवं लोक दोनों में है। मंदिर की स्थापना के संबंध

[5]उपाध्याय, डॉ0 उदयनारायण एवं तिवारी, प्रो0 गौतम (2007), भारतीय स्थापत्य एवं कला, मोतिलाल बनारसीदास प्रकाशन, जवाहर नगर दिल्ली, पृ0सं0 –01

में यह कथा कही जाती है कि एक बार राक्षसराज रावण ने हिमालय पर्वत पर जा कर भगवान शिव का दर्शन प्राप्त करने हेतु घोर तपस्या किया। उन्होंने एक एक करके अपने सभी सिर काटकर भगवान शिव पर चढ़ाना शुरू किया। 9 सिर काट कर चढ़ाने के बाद जब वे अपना 10वाँ सिर काटकर चढ़ाने के लिए उद्यत हुआ तभी भगवान शंकर अति प्रसन्न होकर उनके समक्ष प्रकट हो गये और रावण का हाथ पकड़कर सिर काटने से रोक दिया। रावण के सभी सिर पहले की तरह हो गया और भगवान प्रसन्न होकर उनसे वर मांगने को कहा। उन्होंने वर के रूप में भगवान शंकर से उस लिंग को अपनी राजधानी लंका लेजाने की अनुमति मांगी। भगवान ने यह वरदान तो दे दिया लेकिन इसके साथ एक सर्त भी लगा दी। सर्त यह थी की तुम इसे ले जा सकते हो लेकिन यदि रास्ते में इसे कहीं रख दोगे तो यह वहीं अचल हो जाएगा। रावण इस बात को स्वीकार कर लिया और शिवलिंग को उठाकर लंका के लिए चल दिया। काफी चलने के बाद रास्ते में उसे लघु संका करने की आवश्यकता महसूस हुई। वह उस शिवलिंग को एक अहिर के हाथों में रखकर लघुसंका करने लगा। काफी देर होने पर अहिर को शिवलिंग का भार बहुत अधिक लगा और उसे संभाल नहीं सका मजबूर होकर अहिर ने शिवलिंग को वहीं भूमि पर रख दिया। जब रावण लघुशंका से निवृत होकर आया तब बहुत प्रयास करने पर भी उस शिवलिंग को नहीं उठा सका। अंत में निराश होकर उस पवित्र शिवलिंग पर अपने अंगुठे का निशान बनाकर वहीं छोड़कर अपनी लंका को चला गया।

बाद में ब्रह्मा, विष्णु आदि देवताओं ने वहां आकर उस शिवलिंग का पुजन किया। यही ज्योतिर्लिंग बाबा बैद्यनाथ के नाम से जाना जाता है। यह ज्योतिर्लिंग ग्यारह उँगली उँचा है और इसके उपर अगूँठे के आकार का गड्ढ़ा है।[6]

**आदित्य पब्लिकेशन, श्री बैद्यनाथ महातम्य** में लिखता है कि बाबा बैद्यनाथ की स्थापना भगवान विष्णु के द्वारा झारखण्ड की पवित्र भूमि में कि गई थी। लेकिन स्थापना क्यों की गई थी इसके पीछे का तथ्य यह है कि द्वादश ज्योर्तिलिंगों के लिए दिशा विशेष का निर्धारण शिव पुराण में साफ–साफ किया गया है। उसके अनुसार कैलाश पर्वत से

[6]कंछल, बनवारी लाल, (2020), बाबा बैद्यनाथधाम महिमा, इतिहास, विशेषता, तिर्थ और मंदिर, मनोज पब्लिकेशन्स, दिल्ली, पृ0 सं0 39

झारखण्ड प्रक्षेत्र से एक दो जिला आगे पिछे ही बाबा बैद्यनाथ की स्थापना हो सकती थी। इसके उत्तराधिकारी, भागलपुर, गोड्डा इत्यादि भी हो सकते थे। तो अब प्रश्न उठता है कि बाबा बैद्यानाथ की स्थापना देवघर जिले में ही क्यों हुई ? इसका एक ही उत्तर दिया जा सकता है कि माता सती के हृदय में भगवान शिव समाए हुए थे। अर्थात् मां सती का सम्पूर्ण शरीर शिवमय था और उनका हृदय यहीं गिरा था। यही कारण है कि देवघर को ही बाबा बैद्यनाथ की स्थापना के लिए चयन किया गया। बाबा बैद्यनाथ शिवलिंग की स्थापना माघ महिने के पूर्णिमा को की गई थी। इसीलिए इस शिवलिंग का नाम माघेश्वर ज्योर्तिलिंग पड़ा।[7]

**आदित्य पब्लिकेशन, कहानी बाबाधाम की** में लिखता है कि चिता भूमि पर अवस्थित शिव ज्योर्तिलिंग में एक महत्वपूर्ण ज्योतिर्लिंग बाबा बैद्यनाथ पर काँवर से गंगाजल लाकर चढ़ाने की प्रथा सर्वप्रथम बिहार के मिथिलांचल से प्ररंभ हुई थी। कहा जाता है कि एक बार महादेव तथा काल भैरव में किसी बात को लेकर लड़ाई हो गयी थी। काल भैरव गुस्सा कर के मिथिलांचल चले गए थे और वहीं भैरव लिंग के रूप में स्थापित हो गए। मिथिलांचल के मधुबनी जिले के झंझारपुर तथा लोहना रोड पर कोठिया गांव में वह भैरव लिंग आज भी स्थापित है। भैरव जी को मनाने के लिए बाबा वैद्यनाथ ने अपने अनेक दूतों को भेजा लेकिन लौट कर नहीं आए। भैरो बाबा ने शिव से क्षमा मांगने के लिए सवालाख कांवड़ियों के द्वारा कांवड़ से लाए हुए गंगाजल चढ़ाकर क्षमा मांगी एवं उन्हें प्रसन्न करने की चेष्टा की। तब से लेकर आज तक मिथिलावासी बाबा वैद्यनाथ की शरण में आते रहे है। भारत के विभिन्न क्षेत्रों के तीर्थ यात्री यहाँ आकर अपना जन्म सफल मानते हैं।[8]

**कुमार, निरंजन एवं बालाजी, उमेश** अपनी पुस्तक क्यों होती है पूरी भक्तों की कामना बाबाधाम में नामक पुस्तक में लिखते हैं कि प्राचीन काल से ही विदेशी आक्रमण कारियों के द्वारा हिन्दू देवी देवताओं के मंदिरों तथा उनकी धार्मिक मान्यताओं पर लगातार आक्रमण होते रहे हैं। उससे वैद्यनाथ धाम भी अछूता नहीं रहा। उस समय काला पहाड़ एक बहुत ही शक्तिशाली दूर्दांत लुटेरा था वह पहले हिन्दू था लेकिन बाद में चलकर

[7]वृहद रावणेश्वर वैद्यनाथ महातम्य, आदित्य पब्लिकेशन, कैलाश नगर दिल्ली, पृ0सं0 06
[8]कहानी बाबा धाम की, आदित्य पब्लिकेशन, कैलाश नगर दिल्ली, पृ0सं0 21

विशेष कारणों से अपना धर्म बदल लिया। इतिहास में उसे काला पहाड़ के नाम से जाना जाता है। उसे हिन्दू धर्म तथा हिन्दूओं के मंदिरों से बहुत अधिक घृणा थी। वह हर समय हिन्दू धर्म के नुकसान की बात ही सोचता रहता था। इसी क्रम में उसने असंख्य निरपराध हिन्दूओं की हत्या करवा दी और अनेकों हिन्दू मंदिरों को नष्ट कर दिया। उस निरंकुश काला पहाड़ को रोकने के लिए उस समय गुलाम भारत में भगवान के अलावे दूसरा कोई नहीं था। उसका आतंक इतना था कि लोग सिर्फ उसके आने की खबर मात्र से ही अपना घर–बार, खेती–बाड़ी, सभी छोड़कर भाग जाते थे। उनकी कुदृष्टि बाबा धाम पर पड़ी तथा अन्य तीर्थ स्थानों की तरह इस पवित्र धाम में भी लूट पाट एवं तोर फोर के लिए काला पहाड़ की सेना आ पहुंची। देवघर से जसीडिह आने के रास्ते में एक नदी मिलती है जो ढ़रवा नदी के नाम से जाना जाता है। उस समय भी वह नदी थी परंतु उस पर पुल नहीं बना था।

काला पहाड़ की सेना ढ़रवा नदी के समीप जब पहुंची तब उस समय नदी में पानी बहुत कम था। अतः काला पहाड़ की उस आतंकी सेना को नदी पार करने में भी कोई कठिनाई की आशंका नहीं थी। लेकिन बाबा की मर्जी से कुछ और ही होना था। जैसे ही काला पहाड़ की सेना उस नदी के निकट पहुंची उस नदी का पानी काफी गर्म होकर खौलने लगा। जैसे ही उसकी सेना उस नदी में उतरी उसके पैरों में काफी जलन होने लगा जिससे उसको पार करना उस अत्याचारी सेना एवं काला पहाड़ के लिए असंभव हो गया। अतंतोगत्वा उस अत्याचारी लुटेरा ने अपने बाबाधाम के कार्यक्रम को स्थगित कर दिया। बाद में स्वयं काला पहाड़ ने इस पवित्र धाम को प्रणाम कर इसकी महत्ता को स्वीकार किया। जसीडिह से बाबाधाम के रास्ते में वह नदी आज भी अवस्थित है।[9]

**पारिजात, शिवशंकर सिंह, (2019)**, अपनी पुस्तक लोक आस्था का महाकुंभ श्रावणी मेला में लिखते हैं कि श्रावण महिने में बाबा भोले को प्रसन्न करने के लिए बहुत बड़ी संख्या में शिव भक्तों का हुजूम सुल्तानगंज के उत्तरवाहिनी गंगा का पवित्र जल भरकर देवघर की तरफ प्रस्थान करता है। कोई साधना युक्त भक्ति पुर्वक कामर लेकर बम बम

[9]कुमार, निरंजन एवं बालाजी, उमेश, क्यों होती है पूरी भक्तों की कामना बाबाधाम में, ज्ञान गंगा एण्ड को0 पब्लिशर्स, कैलाश नगर, दिल्ली, पृ0सं0 46

का नारा लगाते हुए तीन चार दिनों में बाबाधाम पहुंचता है तो कोई डाकबम बनकर निरंतर दौर लगाते हुए जल उठाने के चौबिस घंटे के भीतर ही शिवधाम पहुंच जाते हैं, कोई पूरी काँवर यात्रा में बिना कहीं बैठे खड़ा बम के रूप में निरंतर चलता रहता है तो कोई रस्ते भर अपार कष्ट सहते हुए दण्डवत करते हुए दण्डीबम बन कर जाते हैं। इस प्रकार जैसे शिव भक्त बाबा भोले की आराधना में अनेक प्रकार का यत्न करते हैं, ठीक वैसे ही भगवान भोले शंकर भी अनेक प्रकार से अपने श्रद्धालुओं पर कृपा, आर्शिवाद एवं अनुकंपा बर्साते हैं।[10]

**संताल परगना गजेटियर (1910)**, में सन् 1695 से 1699 के मध्य लिखित उर्दू पुस्तक खुलासतू–त्–तबारीख' का उद्धरण देते हुए लिखा गया है कि मुंगेर जिला की पहाड़ि वादियों बैजनाथ नामक स्थान है वह महादेव का पवित्र स्थल है। यहाँ एक चमत्कारीक घटना होती है जो आम लोगों को अचंभे में डाल देती है। वह घटना इस प्रकार है कि इस मंदिर में एक पीपल का पेड़ है, जिसके बारे में किसी को पता नहीं है कि यह कब से खड़ा है? उस समय मंदिर में आने वाले किसी श्रद्धालु को अपनी जरूरतों की पूर्ति के लिए पैसे की काफी जरूरत पड़ती थी, लेकिन उसे कोई रास्ता नहीं मिलता था। तो वह अन्न जल त्याग कर मंदिर के प्रांगन में उस पीपल के पेड़ के निचे बैठ जाता था तथा अपनी मनोकामना की पूर्ति के लिए बाबा भोले की प्रार्थना में लीन हो जाता था। भक्तों की श्रद्धा भक्ति का असर होने पर दो अथवा तीन दिनों के पश्चात् उस पीपल के पेड़ से एक पत्ता गिरता था जिसपर किसी अदृश्य कलम से देवनागरी से मिलती जुलती लिपी में आदेश के रूप में कुछ वाक्य लिखी होती थी। यह आदेश दुनिया के किसी भी व्यक्ति के नाम हो सकता था जिसमें यह लिखा रहता था की बैद्यनाथ धाम से 500 कोस दूर ही क्यों न हो, पिपल के उस पत्ते पर संबंधित व्यक्ति का और उसके बच्चे, पिता, पत्नी तथा दादा के नाम स्पष्ट रूप से लिखे होते थे। मंदिर के प्रधान पुजारी पीपल के उस पत्त पर लिखे हुए विवरणी को बाबा का आदेश मानते हुए उसे कागज पर लिखकर धरणा देने वाले भक्त को दे देते थे। यह कागज **बैद्यनाथ की हुण्डी (चेक)** कहलाती थी। भक्त लोग

[10]पारिजात, शिवशंकर सिंह, (2019), लोक आस्था का महाकुंभ श्रावणी मेला, युनिवर्सिटि प्रकाशन आगरा, पृ0 सं0 88

इस हुण्डी को लेकर उसपर लिखे निर्देशों के अनुसार उस व्यक्ति के पास चला जाता था। जिसके नाम यह लिखा होता था और वह व्यक्ति बिना किसी टालमटोल के प्रसन्नता पूर्वक उसमें लिखित राशि का भुगतान इसके धारक को कर देता था। पुस्तक के लेखक ने यह भी लिखा की एक बार एक ब्राह्मण इसी तरह की बैजनाथ की हुण्डी लेकर उनके पास आया था और उन्होंने इसे बाबा की कृपा का शुभ संकेत समझ कर उसमें लिखित पूरी राशि का भूगतान कर दिया था और उसे सभी तरह से संतुष्ट करके वापस भेजा था। [11]

**प्रभात खबर (2023) लिखता है कि** संताल परगना का क्षेत्र तथा पहाड़ीयाँ पुरानी सभ्यता के प्रमाणों को अपने में समाहित किए हुए हैं। कभी बौद्ध बज्रयान उपासकों की साधना का मुख्य केन्द्र संताल परगना रहा था। राज महल के कांकजोल में भगवान गौतम बुद्ध ने अपना उपदेश दिया था। इस इलाके में कभी बौद्ध अनुयायियों की बहुतायत हुआ करती थी। कुछ इतिहासकार तो इस क्षेत्र में जगह मिलने वाले षोड्शपद्म चक्र को इस बात का साक्ष्य मानते हैं। देवघर भी बौद्ध अनुयायियों का मुख्य केन्द्र बिंदु था। [12]

**चौधरी, राधाकृष्ण,(1986)** अपने पुस्तक प्राचीन भारत का आर्थिक इतिहास में लिखते हैं किभारतीय इतिहास के पूर्व मध्यकाल में आर्थिक क्षेत्र में मन्दिरों की बड़ी प्रमुख भूमिका रही है। मन्दिर सम्पति के भंडार होते थे। मन्दिरों में सिक्कों, गहनों जवाहरात, सोने की छड़ों के रूप में सम्पत्ति का अम्बार लगा रहता था। मन्दिरों के स्वामित्व में दुकाने होती थी और वे कई स्रोतों से दान प्राप्त करते थे। मन्दिर मानो स्वतन्त्र नगर का एक लघु रूप होता था जहाँ इसके कार्यों के संचालन के लिए भरा – पूरा कर्मचारी– वर्ष रखा जाता था। वह बैंक के रूप में भी काम करता था, दोनों ओर धर्मस्वों का निक्षेप प्राप्त करता था। जिस धन का वह न्यासी होता था। धर्मस्व में व्यापार पर लगने वाले कर का हक भी शामिल होता था।[13]

---

[11]संताल परगना गजेटियर, 1910

[12]प्रभात खबर, दैनिक समाचार पत्र, 22–12–2023, पृ0 सं0 – 13

[13]प्राचीन भारत का आर्थिक इतिहास, लेखक : राधाकृष्ण चौधरी, प्रकाशक : जानकी प्रकाशन, नई दिल्ली, वर्ष – 1986, पृ.सं.–264

**झा नलिन, श्री नकुल प्रसाद, (2003),** अपनी पुस्तक श्री वैद्यनाथ भक्ति मंजरी, में लिखते हैं कि भक्त राज रावण शिव के अनन्य भक्त थे क्योंकि शिव उनके इष्ट देव थे। यही कारण है कि शिव पुजा उनके दैनिक कर्म का एक हिस्सा था। फलतः वह इस कार्य को संपादन करने के लिए घर से बाहर रहने पर वे सचल मुर्ति साथ लेकर चला करते थे। शिवलिंगार्चनव्रती भक्त राज रावण जब तक हिमालय पर रहे उन्हें भगवान शिव के दरवार में सम्मिलित होने और कैलाश पुरी जाने में कोई खास असुविधा नहीं रही लेकिन जब से उनका निवास स्थान बदल कर हिमालय से लंका हो गया तब से उन्हें शिव दरबार में शामिल होने में काफी कठिनाई होने लगी। अतः भक्त राज रावण ने भगवान शिव को हीं लंका ले चलने का निश्चय कर उनको मनाने के लिए तपस्या करने लगे। तपस्या से प्रसन्न होकर भोलेनाथ ने जब वरदान मांगने को कहा तो असुर राज रावण ने वरदान में उनसे लंका चलने को कह दिया। भगवान भोलेनाथ वचनबद्ध थे लेकिन वे लंका नहीं जाना चाहते थे, अतः वे शर्त लगाते हुए अपनी स्वीकृति दी की हे असुर राज यदि तुम मुझे लंका ले जाना चाहते हो तो मेरे इस दिव्य ज्योर्तिलिंग को ले जाओं, लेकिन रास्ते में इसे कहिं नहीं रखना अन्यथा यह वहीं रह जाएगा।

लंकापति भक्त राज रावण ने भगवान भोले नाथ की यह बात स्वीकार कर ली और उस दिव्य ज्योर्तिलिंग को लेकर शिघ्रता से लंका की तरफ चल पड़े। रावण द्वारा उस द्विव्य ज्योर्तिलिंग को चलते ही सुर समुदाय चिंतित हो गए तथा व्याकुल होकर भगवान विष्णु की शरण में जा पहुंचे। हमेशा से देवताओं को संकट से उबारने वाले भगवान विष्णु ने उन्हें आस्वस्त कर घर भेज दिया तथा वे जल के देवता वरूण के साथ चिता भूमि की ओर चल पड़े। दूसरी तरफ दिव्य ज्योर्तिलिंग को लिए प्रसन्न भक्तराज रावण के पैर जैसे ही चिता भूमि की पावन धर्ती पर पड़े कि उन्हें बड़ी तीव्र लघुसंका लग गई।

शिवलिंग को हाथ में रख कर लघु संका नहीं किया जा सकता था तथा शिव के वचनों को स्मरण रखते हुए उसे कहीं रखा भी नहीं जा सकता था। ऐसी विषम परिस्थिति में रावण को झारखण्ड के घनघोर जंगल की झाड़ियों से निकल कर आता एक गोप दिखाई दिया मुत्रवेग से परेसान रावण उस गोप को कह सुन के उसके हाथों में दिव्य शिवलिंग को रखकर जलाशय के पास जाकर लघुसंका करने लगा। लघुसंका के बाद

रावण पुनः पवित्र हो जब उस गोप के पास आए तो गोप गायब था। वस्तुतः पामरो के उद्धार करने के लिए सती की चिता भूमि पर उस दिव्य शिवलिंग को स्थापित करने हेतु भगवान विष्णु ने हीं गोप का रूप धारण किया था। पृथ्वी पर रखे उस शिवलिंग को लंका ले चलने के लिए आतुर रावण जैसे ही उसे उठाना चाहा, आकाशवाणी हुई हे भक्तशिरोमणि, अब तुम पहले की प्रतिज्ञा का स्मरण कर मुझे यहां से उठाकर लंका ले जाने का प्रयत्न छोड़ दो। क्योंकि दाक्षायणी सती के अंग राज हृदय का यहां पतन होने से यह स्थान मुझे सर्वाधिक प्रिय है। परमाराध्य भगवान भोलेनाथ की इस बात को शिरोधार्य कर रावण उस शिवलिंग की पुजा कर मनोवांछित वर पाकर लंका चले गये। [14]

**झा, योगेन्द्र (2018), अपनी पुस्तक देवघर : तब और अब में लिखते हैं कि** प्राप्त लेखों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि 8वीं अथवा 9वीं शदी में भगवान वैद्यनाथ धाम मंदिर पूर्वी भारत का एक महत्वपूर्ण तीर्थ स्थलों में से एक था इसे मगद के इतिहासकारों ने भी अपने इतिहास में अंकित किया है। वास्तव में कोई भी महत्वपूर्ण स्थल तब और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। जब उसे राज सत्ता का सहयोग तथा संरक्षण मिलता है। मुगलकाल में गिद्धौर एक प्रमुख शक्तिशाली राज्य था जहां के राजा बाबा वैद्यनाथ के भक्त थे। राजा गिद्धौर के समय में बाबा वैद्यनाथ मंदिर अपने वैभव के चर्मोत्कर्ष पर था। आधुनिक काल खासकर ब्रिटिश काल में भी चाहे ईस्ट इंडिया कंपनी का शासन हो या ब्रिटिश सम्राट का, वैद्यनाथधाम की अपनी खास मान्यता थी और इस क्षेत्र को वैद्यनाथधाम के नाम से हीं जानते थे। बाद में चलकर इस क्षेत्र का नामकरण देवघर के रूप में हुआ। [15]

**मित्रा (1879)** द्वारा किया गया एक अध्ययन मंदिर परिसर का विस्तृत विवरण प्रदान करता है, जिसमें इसकी वास्तुकला और तकनीकी विशेषताएं शामिल हैं, जो इस शोध के लिए एक मूल्यवान प्रारंभिक बिंदु के रूप में कार्य करता है। मित्रा का काम मंदिर के

[14]झा नलिन, श्री नकुल प्रसाद, (2003), श्री वैद्यनाथ भक्ति मंजरी, प्रकाशक अभय त्रिविक्रम झा, राधिका कुंज रक्ती साखां देवघर, पृ0 सं0 214

[15]झा, योगेन्द्र (2018), देवघर : तब और अब, पराग, प्रकाशन, गंभीरा निवास देवघर, पृ0 सं0 06

बनावट पर क्षेत्रीय शैलियों के प्रभाव पर जोर देता है और मंदिर परिसर के विभिन्न निर्माण चरणों पर प्रकाश डालता है।[16]

**सिंह देव (2002)** द्वारा किया गया एक अन्य अध्ययन उन धार्मिक विश्वासों की पड़ताल करता है जिन्होंने मंदिर के निर्माण और बनावट को प्रभावित किया। लेखक मंदिर के ऐतिहासिक संदर्भ, स्थानीय समुदाय के लिए मंदिर के महत्व और इसके निर्माण और बनावट को सूचित करने वाले धार्मिक विश्वासों की जांच करता है। यह कार्य ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर के धार्मिक महत्व की बहुमूल्य अंतर्दृष्टि प्रदान करता है।[17]

**कंछल (2013)** ने मंदिर परिसर और इसकी वास्तुकला और तकनीकी बनावट का विस्तृत विश्लेषण प्रदान करने के लिए वास्तुशिल्प छायांकन का इस्तेमाल किया। अध्ययन ने मंदिर परिसर की एक मूल्यवान समझ प्रदान की, जिसमें इसके स्थापत्य, तकनीकी बनावट, और समय के साथ इसे प्रभावित करने वाले धार्मिक विश्वास शामिल थे। मंदिर की संरचनात्मक विशेषताओं के अधिक गहन विश्लेषण के लिए उन्नत तकनीक के उपयोग की अनुमति दी गई, जिससे धार्मिक विश्वासों और स्थापत्य संरचना के बीच जटिल परस्पर क्रिया को बेहतर ढंग से समझने में मदद मिली।[18]

**जोशी (2014)** द्वारा किया गया एक अध्ययन स्थानीय अर्थव्यवस्था में मंदिर की भूमिका और आसपास के समुदाय के सामाजिक ताने–बाने पर इसके प्रभाव की पड़ताल करता है। लेखक का काम धार्मिक सभाओं, सांस्कृतिक कार्यक्रमों और सामुदायिक

---

[16]मित्रा, आरएल(1879) देवघर के मंदिर, जर्नल ऑफ द एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल, 48(1), 1–20

[17]सिंह देव, पीके(2002) बैद्यनाथ महिमा, बिहार एसोसिएशन फॉर एडवांसमेंट ऑफ साइंस एंड टेक्नोलॉजी।

[18]कंछल, बीएल (2013) बाबा बैद्यनाथ धामः 3डी स्कैनिंग और वास्तु छायांकन का उपयोग कर वास्तु संरक्षण पर एक अध्ययन, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ हेरिटेज आर्किटेक्चर, 4(3), 278–287

गतिविधियों के केंद्र के रूप में मंदिर के महत्व और पर्यटन और तीर्थयात्रा के माध्यम से स्थानीय अर्थव्यवस्था पर इसके प्रभाव पर जोर देता है।[19]

**गिरि (2015)** ने मंदिर परिसर के भीतर होने वाले विभिन्न अनुष्ठानों और धार्मिक प्रथाओं का विश्लेषण किया, जिसमें देवता की दैनिक पूजा, त्योहारों का पालन और विशेष समारोहों का प्रदर्शन शामिल है। अध्ययन ने अपने भक्तों के आध्यात्मिक जीवन में मंदिर की भूमिका और अनुष्ठान अभ्यास के माध्यम से धार्मिक विश्वासों को लागू करने के तरीकों के बारे में बहुमूल्य अंतर्दृष्टि प्रदान की।[20]

**वर्मा (2017)** ने सामाजिक सद्भाव और पारस्परिक संवाद को बढ़ावा देने में बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर की भूमिका का पता लगाया। शोध ने विभिन्न समुदायों के बीच एकता और सहिष्णुता की भावना को बढ़ावा देने, विभिन्न धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराओं के अभिसरण के लिए एक स्थान के रूप में मंदिर के कार्य पर प्रकाश डाला। अध्ययन ने विभिन्न धार्मिक और सांस्कृतिक समूहों के बीच सामाजिक सामंजस्य और संवाद को सुविधाजनक बनाने में मंदिर के महत्व पर भी जोर दिया।[21]

**शर्मा (2019)** ने बैद्यनाथ धाम मंदिर पर विशेष ध्यान देने के साथ हिंदू धर्म में बारह ज्योतिर्लिंगों के आध्यात्मिक महत्व की गहन जांच की। अध्ययन में प्राथमिक तीर्थ स्थलों के रूप में ज्योतिर्लिंगों के महत्व और हिंदुओं के बीच आध्यात्मिक और धार्मिक भक्ति को बढ़ावा

---

[19]जोशी, एम (2014), स्थानीय समुदाय पर बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर का सामाजिक–आर्थिक प्रभाव, साउथ एशियन जर्नल ऑफ टूरिज्म एंड हेरिटेज, 7(2), 56–69

[20]गिरी, एस. (2015), बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर में अनुष्ठान और धार्मिक प्रथाएं, जर्नल ऑफ इंडियन कल्चर एंड ट्रेडिशन, 12(2), 235–247

[21]वर्मा, ए. (2017), सामाजिक सद्भाव और आपसी संवाद को बढ़ावा देने में बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर की भूमिका, जर्नल ऑफ पीस स्टडीज, 24(2), 123–137

देने में उनकी भूमिका पर प्रकाश डाला गया। शोध ने हिंदू धर्म में सबसे पवित्र स्थलों में से एक के रूप में बैद्यनाथ धाम मंदिर के सांस्कृतिक महत्व पर भी जोर दिया।[22]

इसके महत्व के बावजूद, मंदिर अपनी वास्तुकला और तकनीक के व्यापक अध्ययन का विषय नहीं रहा है। इस शोध का उद्देश्य मंदिर परिसर के बनावट, निर्माण और तकनीकी सहित गहन विश्लेषण प्रदान करके इस अंतर को भरना है।

[22]शर्मा, आर. (2019), बारह ज्योतिर्लिंगों का आध्यात्मिक महत्वः बैद्यनाथ धाम के विशेष संदर्भ में एक अध्ययन, धर्म और आध्यात्मिकता का अंतर्राष्ट्रीय जर्नल, 5(1), 23–33

**अध्याय–3**

# अनुसंधान पद्धति, उद्देश्य, परिकल्पना, अध्ययन क्षेत्र एवं अनुसंधान क्रिया विधि

## अनुसंधान पद्धति

प्रस्तुत शोध कार्य **"बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर की स्थापत्य कलाः सर्वेक्षण एवं समीक्षा"** एक गुणात्मक, ऐतिहासिक, वर्णनात्मक तथा विश्लेषणात्मक अध्ययन पर आधारित है। इस शोध में सर्वेक्षण एवं प्रश्नावली अथवा सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग भीं किया गया है। अध्ययन का मुख्य उद्देश्य बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर की स्थापत्य संरचना, निर्माण तकनीक, धार्मिक–सांस्कृतिक महत्व तथा ऐतिहासिक विकास का समग्र एवं तथ्यपरक विश्लेषण प्रस्तुत करना है।

यह शोध मुख्य रूप से स्थापत्य सर्वेक्षण, स्थल निरीक्षण, साहित्य समीक्षा तथा तुलनात्मक अध्ययन पर आधारित है।

### 1. अध्ययन की प्रकृति

यह शोध एक विशिष्ट अध्ययनात्मक प्रकरण पर आधारित है, जिसमें बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर को एक स्वतंत्र स्थापत्य एवं धार्मिक इकाई के रूप में चयनित किया गया है। अध्ययन में मंदिर की योजना, संरचना, गर्भगृह, शिखर, मंडप, मूर्तिकला, अलंकरण तथा धार्मिक उपयोग का विस्तृत परीक्षण किया गया है। शोध की प्रकृति व्याख्यात्मक है, जिसमें स्थापत्य रूपों को उनके ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संदर्भ में समझने का प्रयास किया गया है।

### 2. शोध दृष्टिकोण

प्रस्तुत शोध में ऐतिहासिक दृष्टिकोण तथा वर्णनात्मक–विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण को अपनाया गया है। इसके अंतर्गत मंदिर के ऐतिहासिक विकास क्रम, स्थापत्य शैली, निर्माण प्रणाली तथा धार्मिक परंपराओं के साथ स्थापत्य के संबंध का अध्ययन किया गया है। इस

दृष्टिकोण के माध्यम से मंदिर की स्थापत्य विशेषताओं को कालक्रमानुसार समझने का प्रयास किया गया है।

### 3. स्रोत सामग्री का उपयोग

इस शोध में प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार की स्रोत सामग्री का प्रयोग किया गया है।

### (क) प्राथमिक स्रोत

- मंदिर परिसर का प्रत्यक्ष स्थल निरीक्षण
- स्थापत्य संरचना, योजना एवं अलंकरण का प्रत्यक्ष अवलोकन
- मंदिर के विभिन्न स्थापत्य घटकों का प्रत्यक्ष अध्ययन
- सर्वेक्षण एवं प्रश्नावली अथवा सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग

### (ख) द्वितीयक स्रोत

- प्रकाशित ग्रंथ, शोध प्रबंध तथा शोध पत्र
- भारतीय स्थापत्य कला, मंदिर वास्तुकला एवं धार्मिक इतिहास से संबंधित साहित्य
- पूर्ववर्ती विद्वानों द्वारा किए गए अध्ययनों की समीक्षा

### 4. सर्वेक्षण एवं स्थल अध्ययन

शोध कार्य के अंतर्गत बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर का व्यवस्थित स्थल आधारित सर्वेक्षण किया गया। इस प्रक्रिया में मंदिर की स्थापत्य योजना, निर्माण सामग्री, संरचनात्मक स्वरूप तथा तकनीकी विशेषताओं का निरीक्षण किया गया। स्थल अध्ययन के माध्यम से स्थापत्य संरचना को व्यावहारिक रूप में समझने में सहायता प्राप्त हुई।

### 5. विश्लेषण की विधि

प्राप्त तथ्यों का गुणात्मक विश्लेषण किया गया है। इसके अंतर्गत स्थापत्य तत्वों का संरचनात्मक परीक्षण, शैलीगत विशेषताओं की पहचान तथा उत्तर भारतीय मंदिर स्थापत्य

परंपरा के संदर्भ में उनका मूल्यांकन किया गया है। विश्लेषण के दौरान ऐतिहासिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक संदर्भों को विशेष रूप से ध्यान में रखा गया है।

### 6. तुलनात्मक अध्ययन

जहाँ आवश्यक समझा गया, वहाँ बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर की स्थापत्य विशेषताओं की तुलना अन्य प्रमुख भारतीय मंदिरों से की गई है, जिससे इसकी विशिष्टता, स्थापत्य परंपरा में स्थान तथा ऐतिहासिक महत्व को स्पष्ट किया जा सके।

### 7. स्वतंत्र अध्ययन

प्रस्तुत शोध एक स्वतंत्र अध्ययन है, जिसमें शोधार्थी द्वारा स्वयं अध्ययन, विश्लेषण एवं निष्कर्ष प्रस्तुत किए गए हैं। शोध कार्य के दौरान शोध निर्देशक से समय–समय पर मार्गदर्शन प्राप्त किया गया है, किंतु संपूर्ण शोध कार्य शोधार्थी की स्वतंत्र अकादमिक दृष्टि पर आधारित है।

**ऐतिहासिक शोध पद्धति (Historical Research Methodology):** उचित पद्धति का चयन और प्रयोग किया गया, जैसे तुलनात्मक अध्ययन (Comparative Study), केस स्टडी (Case Study) आदि।

इस शोध हेतु ऐतिहासिक शोध और कार्यक्षेत्र विधियों के संयोजन का उपयोग किया गया । ऐतिहासिक शोध में एक व्यापक साहित्य समीक्षा शामिल है, जबकि कार्यक्षेत्र में मंदिर के दौरे और पुजारियों और अन्य विशेषज्ञों के साक्षात्कार शामिल है।

इस शोध की कार्यप्रणाली बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर के वास्तुशिल्प, तकनीकी और धार्मिक पहलुओं पर आंकड़ा एकत्र करने के लिए ऐतिहासिक शोध और क्षेत्र काम के संयोजन को नियोजित कर निम्नलिखित विधियों का उपयोग किया गया–

1. **साहित्य समीक्षा:** मंदिर के इतिहास, धार्मिक विश्वासों और स्थापत्य और तकनीकी सुविधाओं की व्यापक समझ प्रदान करने के लिए बैद्यनाथ धाम मंदिर पर मौजूदा साहित्य की व्यापक समीक्षा की गई। साहित्य समीक्षा मौजूदा शोध में अंतराल की पहचान करने और मंदिर परिसर के विश्लेषण के लिए एक संदर्भ प्रदान करने में मदद की।

2. **क्षेत्र कामः** मंदिर के वास्तुशिल्प और तकनीकी पहलुओं पर प्राथमिक नमूना एकत्र करने के लिए बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर का क्षेत्र दौरा किया गया। कार्यक्षेत्र में मंदिर परिसर का विस्तार से दस्तावेजीकरण करने के लिए वास्तुशिल्प छायांकन और वास्तुशिल्प चित्र शामिल किया गया। ये विधियां मंदिर परिसर की वास्तुकला और तकनीकी सुविधाओं की विस्तृत समझ प्रदान की।

3. **साक्षात्कारः** मंदिर के पुजारियों, विद्वानों और अन्य विशेषज्ञों के साथ अर्ध–संरचित साक्षात्कार आयोजित किए गए ताकि मंदिर के इतिहास, धार्मिक विश्वासों और वास्तुकला और तकनीकी प्रथाओं के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सके। साक्षात्कार मंदिर परिसर के वास्तुशिल्प और तकनीकी पहलुओं को आकार देने में धार्मिक विश्वासों की भूमिका को समझने में भी मदद की।

4. **दस्तावेज विश्लेषणः** मंदिर के निर्माण और उसके बाद के संशोधनों के ऐतिहासिक संदर्भ को समझने के लिए ऐतिहासिक दस्तावेजों, जैसे शिलालेख, मंदिर के आंकड़े और अन्य प्राथमिक स्रोतों का विश्लेषण किया गया।

वास्तु और तकनीक, तकनीकों का उपयोग करके साहित्य समीक्षा और कार्यक्षेत्र से एकत्र किए गए आंकड़ा का विश्लेषण किया गया। वास्तुकला की तस्वीरें और वास्तुशिल्प चित्रों का उपयोग मंदिर परिसर की विस्तृत समझ प्रदान करने के लिए किया गया, जिसमें इसकी वास्तुकला और तकनीक बनावट भी शामिल है। मंदिर परिसर को विस्तार से दस्तावेज करने के लिए वास्तुशिल्प तस्वीरों का उपयोग किया गया, जबकि निर्माण तकनीकों का उपयोग मंदिर के वास्तुशिल्प और तकनीक बनावट की विस्तृत समझ प्रदान करने के लिए किया गया। मंदिर के वास्तुशिल्प और तकनीक बनावट को अधिक विस्तार से दस्तावेज करने के लिए वास्तुशिल्प चित्रों का उपयोग किया गया। साहित्य समीक्षा और कार्यक्षेत्र से एकत्रित आंकड़ों का विश्लेषण यह समझने के लिए किया गया कि धार्मिक विश्वासों ने मंदिर परिसर की वास्तुकला और तकनीक को कैसे प्रभावित किया।

**अनुसंधान का उद्देश्यः** इस शोध के मुख्य उद्देश्य हैं–

- बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर की ऐतिहासिक और स्थापत्य पृष्ठभूमि की जांच करना, निर्माण के विभिन्न चरणों और मंदिर के बनावट पर विभिन्न क्षेत्रीय शैलियों और धार्मिक मान्यताओं के प्रभाव का पता लगाना।

- मंदिर के स्थापत्य और तकनीकी पहलुओं का विश्लेषण करने के लिए, जिसमें इसके विन्यास, निर्माण सामग्री, निर्माण तकनीक, और धार्मिक शास्त्रो और प्रतीकवाद का समावेश शामिल है।

- मंदिर से जुड़े अनुष्ठानों, समारोहों और त्योहारों और मंदिर के बनावट, विन्यास और समग्र कामकाज पर उनके प्रभाव का अध्ययन करना।

- धार्मिक विश्वासों, सामुदायिक प्रशासन, और मंदिर निर्माण के बीच परस्पर क्रिया में नई अंतर्दृष्टि प्रदान करके, साथ ही साथ प्राचीन मंदिरों के अध्ययन में आधुनिक तकनीक के उपयोग के महत्व पर प्रकाश डालते हुए वास्तुकला के इतिहास और भारत में प्राचीन मंदिरों की समझ के क्षेत्र में योगदान देना। .

इन उद्देश्यों को पूरा करके, इस शोध का उद्देश्य धार्मिक विश्वासों, वास्तुशिल्प बनावट और सामाजिक–सांस्कृतिक कारकों के बीच जटिल संबंधों पर ज्ञान के मौजूदा निकाय में योगदान देना है। इस अध्ययन से प्राप्त अंतर्दृष्टि भविष्य में मंदिर वास्तुकला और धार्मिक अध्ययन के क्षेत्र में अनुसंधान और संरक्षण के प्रयासों के लिए एक मूल्यवान संसाधन के रूप में भी काम करेगी।

**परिकल्पनाः** अनुसंधान उद्देश्यों और प्रारंभिक साहित्य समीक्षा के आधार पर, इस शोध के दौरान निम्नलिखित परिकल्पनाओं का परीक्षण किया जाएगा–

1. बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर की वास्तुकला और तकनीकी संरचना समय के साथ इस क्षेत्र में रहने वाले विभिन्न समुदायों की धार्मिक मान्यताओं और प्रथाओं को दर्शाता है। यह परिकल्पना मानती है कि मंदिर के बनावट और संशोधन स्थानीय आबादी की बदलती धार्मिक मान्यताओं और प्रथाओं से प्रभावित थे, जिसके

परिणामस्वरूप एक मंदिर परिसर बना जो क्षेत्र के विविध धार्मिक इतिहास का प्रतीक है।

2. बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर वास्तुशिल्प और तकनीकी सुविधाओं का एक अनूठा मिश्रण प्रदर्शित करता है जो भारतीय मंदिर वास्तुकला की व्यापक परंपरा का प्रतिनिधित्व करता है। इस परिकल्पना से पता चलता है कि मंदिर परिसर भारतीय मंदिर वास्तुकला में नियोजित सामान्य संरचना तत्वों, निर्माण सामग्री और तकनीकों को प्रदर्शित करता है, साथ ही उन अनूठी विशेषताओं को भी प्रदर्शित करता है जो इसे भारत के अन्य मंदिरों से अलग करती हैं।

3. बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर के वास्तुशिल्प और तकनीकी पहलुओं को आकार देने में धार्मिक मान्यताओं और प्रथाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस परिकल्पना का प्रस्ताव है कि धार्मिक विश्वासों और प्रथाओं ने मंदिर परिसर के बनावट, निर्माण और संशोधनों को प्रभावित किया, जिसके परिणामस्वरूप एक पवित्र स्थान बना जो उन समुदायों के धार्मिक और सांस्कृतिक मूल्यों का प्रतीक है जिन्होंने मंदिर का निर्माण और रखरखाव किया।

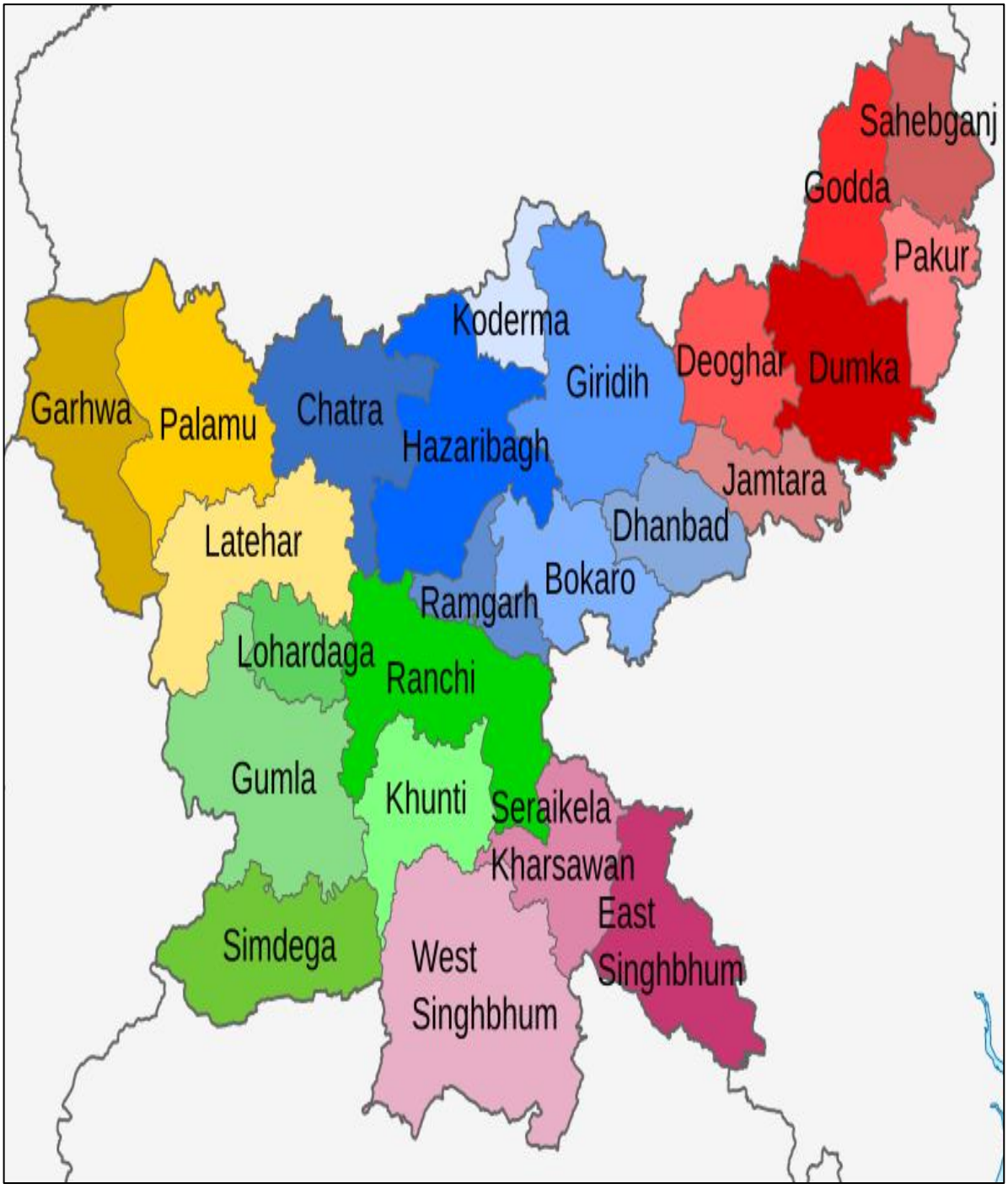
इन परिकल्पनाओं का परीक्षण वास्तुकला छायांकन, वास्तुकला चित्रों, साक्षात्कार प्रतिलेख और ऐतिहासिक दस्तावेजों के विश्लेषण के जरिए किया जाएगा। शोध के निष्कर्ष या तो इन परिकल्पनाओं का समर्थन या खंडन करेंगे, बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर और इसके वास्तुशिल्प, तकनीक और धार्मिक पहलुओं की व्यापक समझ में योगदान करेंगे।

प्रस्तुत शोध को निम्नलिखित अध्यायों में बाँटकर अध्ययन किया गया है–

1. **परिचय**
2. **साहित्य की समीक्षा**
3. **अनुसंधान पद्धति, उद्देश्य, परिकल्पना, अध्ययन क्षेत्र एवंअनुसंधान कियाविधि**
4. **वैद्यनाथ धाम मंदिर का विश्लेषण**
5. **बैद्यनाथ धाम मंदिर का वास्तु और तकनीकी विश्लेषण**

6. **साक्षात्कार का विषयगत विश्लेषण**
7. **निष्कर्ष और सुझाव**

## अध्ययन क्षेत्र




**अध्ययन क्षेत्रः देवघर जिला– एक विस्तृत परिचय**

## 1. सामान्य परिचय

बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर की स्थापत्य कला पर केंद्रित शोध अध्ययन के संदर्भ में देवघर जिला भूगोल, संस्कृति, धार्मिक आस्था और ऐतिहासिक महत्त्व के अद्वितीय समन्वय का क्षेत्र है। झारखंड राज्य के संथाल परगना प्रमंडल में स्थित देवघर न केवल भारत के प्रमुख तीर्थ स्थलों में अग्रणी है, बल्कि यह सामाजिक–सांस्कृतिक विविधता, पारंपरिक शिल्प–कला और क्षेत्रीय आर्थिक गतिविधियों का समृद्ध केंद्र भी है। 'देवों का घर' नाम से प्रसिद्ध यह जिला पुरातात्विक विरासत और धार्मिक पर्यटन की दृष्टि से राष्ट्रीय महत्व रखता है। इसलिए शोध प्रबंध में इसे अध्ययन क्षेत्र के रूप में चयनित करना अत्यंत उपयुक्त एवं प्रासंगिक है।

## 2. भौगोलिक स्थिति एवं प्राकृतिक संरचना

देवघर जिला भौगोलिक रूप से एक मिश्रित भू–आकृतिक क्षेत्र है, जिसमें पठारी विस्तार, निम्न पहाड़ियाँ, उपजाऊ समतल भूमि तथा वन क्षेत्र सम्मिलित हैं। जिला पूर्वी भारत के उत्तर–पूर्वी पठार का हिस्सा है, जहाँ जलवायु सामान्यतः उष्णकटिबंधीय है। गर्मी के मौसम में तापमान 40°C के आसपास पहुँच जाता है, जबकि सर्दी में यह 8°Cतक नीचे चला जाता है। मानसून काल में पर्याप्त वर्षा होने के कारण क्षेत्र कृषि के लिए अनुकूल है।

मुख्य जल स्रोतों में अजयनदी, जयती नदी एवं कई छोटे जलप्रवाह शामिल हैं, जो जिला भू–जल पुनर्भरण में विशेष भूमिका निभाते हैं। भौगोलिक विविधता के कारण देवघर न केवल प्राकृतिक सौंदर्य से सम्पन्न है, बल्कि स्थापत्य कला के विकास के लिए उपयुक्त शिलाओं और निर्माण सामग्रियों की उपलब्धता भी सुनिश्चित करता है।

## 3. ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि

देवघर की पहचान बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर से जुड़ी है, जिसे देश के बारह ज्योतिर्लिंगों में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। यह क्षेत्र प्राचीन काल से ही शैव एवं शक्ति उपासना का प्रमुख केंद्र रहा है। पौराणिक कथा के अनुसार रावण द्वारा शिवलिंग स्थापित किए जाने की कथा इसे विशिष्ट धार्मिक महत्त्व प्रदान करती है।

इतिहास में यह क्षेत्र पाल, सेन और मुगल शासन के अधीन विभिन्न अवधियों में महत्वपूर्ण प्रशासनिक और सांस्कृतिक केंद्र रहा। स्थापत्य शैली में इन सभी कालों का प्रभाव स्पष्टतः देखा जा सकता है। मंदिर परिसर, इसके उप–मंदिर, शिलालेख, मूर्तिकला और पारंपरिक कारीगरी स्थानीय संस्कृति का जीवंत दस्तावेज प्रस्तुत करते हैं।

देवघर के धार्मिक मेलाकृविशेषकर श्रावणी मेलाकृभारत के सबसे बड़े धार्मिक आयोजनों में शामिल है, जो लाखों श्रद्धालुओं को आकर्षित करता है। इस व्यापक सांस्कृतिक गतिविधि ने स्थानीय वास्तुकला, व्यापार और शिल्प पर गहरा प्रभाव डाला है।

## 4. जनसंख्या एवं सामाजिक संरचना

देवघर जिला जनसंख्या की दृष्टि से विविधतापूर्ण है, जिसमें ग्रामीण और शहरी दोनों तरह की सभ्यताओं का मिश्रित स्वरूप मिलता है। यहाँ संथाल, पहाड़िया जैसी जनजातियाँ और विभिन्न सामाजिक पृष्ठभूमि के लोग निवास करते हैं। यह विविधता सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों, लोक–कला, पारंपरिक स्थापत्य शैली और धार्मिक गतिविधियों में स्पष्ट दिखाई देती है। स्थानीय समाज में धार्मिक आस्था अत्यधिक प्रबल है, जिसके कारण धार्मिक स्थलों एवं मंदिरों का निर्माण क्षेत्र की सांस्कृतिक पहचान का प्रमुख आधार बनता है। यह सामाजिक संरचना मंदिर स्थापत्य अध्ययन के लिए एक विशिष्ट संदर्भ प्रदान करती है।

## 5. आर्थिक स्थिति एवं पर्यटन का प्रभाव

देवघर की अर्थव्यवस्था कृषि, सेवाक्षेत्र, सूक्ष्म व्यवसाय एवं पर्यटन पर आधारित है। यहाँ की कृषि मुख्यतः मानसून आधारित है और धान, मक्का, दालें एवं सब्जियाँ प्रमुख फसलें हैं।

पर्यटन, विशेषकर धार्मिक पर्यटन, जिले के आर्थिक विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण है। बाबा मंदिर की यात्रा, कांवड़ियों का श्रावणी मेला तथा स्थानीय धार्मिक स्थलों के कारण होटल उद्योग, परिवहन, हस्तशिल्प एवं व्यापार में व्यापक विकास हुआ है।

पर्यटन की वृद्धि से मंदिर परिसर और इससे संबद्ध संरचनाओं के संरक्षण, विस्तार और आधुनिकीकरण की आवश्यकता भी निरंतर बढ़ रही है, जिसके कारण स्थापत्य कला का विकास अध्ययन का महत्वपूर्ण विषय बन जाता है।

### 6. स्थापत्य कला के संदर्भ में देवघर का महत्त्व

देवघर का धार्मिक एवं सांस्कृतिक वातावरण इसे मंदिर स्थापत्य का एक जीवंत प्रयोगशाला बनाता है। बाबा बैद्यनाथ धाम की स्थापत्य संरचनाकृमुख्य गर्भगृह, सभा–मंडप, प्रांगण, उप–मंदिर, तीर्थ सरोवर और परकोटाकृक्षेत्रीय वास्तु परंपरा एवं कारीगरों की निपुणता का प्रतीक है।

स्थानीय निर्माण सामग्री जैसे ग्रेनाइट, बलुआ–पत्थर, चूना और पारंपरिक लकड़ी के उपयोग ने इस क्षेत्र की वास्तुकला को विशिष्ट पहचान प्रदान की है। साथ ही नए निर्माणों में आधुनिक तकनीक और इंजीनियरिंग के सम्मिश्रण ने पारंपरिक एवं आधुनिक स्थापत्य शैलियों का अनूठा मेल प्रस्तुत किया है।

**निष्कर्ष**

अतः देवघर जिला ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक और स्थापत्य दृष्टि से अत्यंत समृद्ध क्षेत्र है। इसकी विशिष्टता इसे बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर की स्थापत्य कला पर आधारित शोध के लिए आदर्श अध्ययन क्षेत्र बनाती है। यहाँ की प्राकृतिक परिस्थितियाँ, सामाजिक संरचना, धार्मिक वातावरण और स्थापत्य परंपराएँ मिलकर ऐसे बहुआयामी स्रोत प्रस्तुत करती हैं, जिनसे शोधार्थी को व्यापक एवं गहन अध्ययन के अवसर प्राप्त होते हैं।

## अनुसंधान क्रिया विधि

बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर की स्थापत्य कला : सर्वेक्षण और समीक्षा नामक अनुसंधान में साहित्य की समीक्षा के अंतर्गत शोधार्थी पाते हैं कि बाबा बैद्यनाथ धाम पर कई किताबें यथा श्री श्री वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग वांगमय, देवघरः तब और अब,पत्रिकाएं आदि के साथ –साथ कई विद्वानों के लेख हैं। लेकिन उन लेखों में जो शोध का विषय है उससे संबंधित

तथ्यों का अभाव पाया गया है। इसी शोध अंतराल को पाटने के लिए शोधार्थी द्वारा मंदिर के पुजारियों, बाबा बैद्यनाथ धाम श्राइन बोर्ड के सदस्यों आदि से साक्षात्कार करने का सफल प्रयास किया गया जिसका विवरण इस प्रकार है–

मंदिर का संचालन प्रबंधन बाबा बैद्यनाथ धाम श्राइन बोर्ड के द्वारा किया जाता है। देवघर पंडा धर्मरक्षिणी सभा के सरदार पंडा 15 जनवरी 2024 को अपने साक्षात्कार में बताते है कि इसके महामंत्री निर्मल झा जी हैं, अध्यक्ष सुरेश भारद्वाज, उपाध्यक्ष संजय मिश्र एवं मंत्री अरूण आनंद झा जी हैं।

## गणेश जी मंदिर

मंदिर प्रांगण में अवस्थित गणेश मंदिर के पुजारी विनोद बाबा उर्फ गणेश पुजारी पिता स्वर्गीय रामलाल विनोद बाबा पंडा, उम्र 60 वर्ष, योग्यता साक्षर, अपने साक्षात्कार में शोधार्थी को बताते हैं कि बाबा बैद्यनाथ धाम में बाबा मंदिर के प्रांगण में स्थित गणेश जी के मंदिर में अष्टभुजा गणेश जी की मूर्ति स्थापित है।

# गणेश जी मंदिर का छायाचित्र



# माता अन्नपूर्णा मंदिर

बाबा वैद्यनाथ मंदिर के प्रांगण में बाबा वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग, माता पार्वती के साथ विभिन्न देवी देवताओं के कुल 22 मंदिर अवस्थित हैं। इन मंदिरों की अपनी पौराणिक महत्ता है। इसके निर्माण व निर्माणकर्ता के बारे में रोचक किस्से हैं। जिसमें माता अन्नपूर्णा के मंदिर कि अपनी विशेषता है। माता अन्नपूर्णा की पूजा भक्त गण अन्न, धन व सुख प्राप्ति के लिए करते हैं। इसमें सबसे ज्यादा महत्व बाबा का पूजा के उपरांत धनधान्य की देवी माता अन्नपूर्णा की पूजा की है। माता अन्नपूर्णा मंदिर का निर्माण कार्य 1791 से 1820 के मध्य पूर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री रामदत्त ओझा द्वारा कराया गया था। इस मंदिर की बनावट बांकी मंदिरों से बिल्कुल अलग है। इसमें दो शिखर है – प्रथम शिखर पिरामिड की तरह है जिसकी लंबाई करीब 15 फीट तथा चौड़ाई करीब 20 फीट है, उसके बाद मंदिर का छोटा सा छत है माता अन्नपूर्णा मंदिर के मुख्य शिखर की लंबाई करीब 40 फीट और चौड़ाई 30 फीट है। मंदिर के शिखर पर ताम्बे का कलश स्थित है जिसपर पंचशूल लगा हुआ है। शिखर के गुंबद के निचे सफेद रंग से रंगा हुआ है।[23]यह मंदिर उत्तर की ओर है जिसमें प्रवेश करने के लिए मंदिर प्रांगण से सर्वप्रथम दो सीढ़ीयों को पार करना पड़ता है। मंदिर का दरवाजा पीतल का है। गर्भ गृह में माता अन्नपूर्णा खड़ी मुद्रा में काले पत्तथर की मूर्ति के रूप में अवस्थित हैं। मुर्ति की उंचाई 3 फीट की है। मंदिर में प्रवेश व निकाश द्वार एक ही है। मंदिर स्टेट की तरफ से चैत महिना के नवरात्रा में शुक्ल पक्ष अष्टमी को माता अन्नपूर्णा की वार्षिक पुजा विधिवत किया जाता है।

# मां अन्नपूर्णा मंदिर का छाया चित्र



# आनंद भैरव मंदिर

मंदिर प्रांगण में अवस्थित आनंद भैरव के पुजारी मोती राम मिश्र पिता स्वर्गीय ज्ञानी राम मिश्र, योग्यता 8वीं पास, उम्र 57 वर्ष बताते हैं कि मंदिर प्रांगण में वेद, कर्म काण्ड, पुरान, तंत्र इत्यादि गतिविधियां शास्त्रानुसार होती है। वे बताते हैं कि भगवान के वाहन नंदी बाबा हैं। शिव के रूप में ये भैरव हैं जो घर, परिवार और क्षेत्र सभी को बचाने वाले होते हैं।

आनंद भैरव देव का 18 भुज, पंच मुख मूर्ति मंदिर में स्थापित है। आनंद भैरव सहस्र कमल पर आसीन हैं। यह समस्त सुख, ऐश्वर्य प्रदान करने वाले भैरव हैं।

आनंद भैरव मंदिर का निर्माण 1782 ई0 में रामदत्त ओझा द्वारा प्रारंभ किया गया जिसे 1810 तथा 1823 के मध्य आनंद दत्त ओझा एवं सर्वानन्द ओझा द्वारा पूरा किया गया। आनंद भैरव मंदिर बाबा के मुख्य मंदिर के पिछे पश्चिम तथा उत्तर कोने की तरफ अवस्थित है। इस मंदिर की बनावट बांकि मंदिरों से अलग है। मंदिर के मुख्य शिखर की लंबाई लगभग 40 फीट और चौड़ाई 30 फीट है। इसके शिखर पर ताम्र कलश है, जिसपर पंचशूल भी लगा हुआ है।[24] मंदिर के शिखर के गुंबद के नीचे नीले रंग से रंगा हुआ है। आनंद भैरव मंदिर का मुख्य द्वार पुर्व की ओर है और इसमें प्रवेश करने के लिए 3 सीढ़ीयों को पार करना पड़ता है। आनंद भैरव की प्रतिमा आसन मुद्रा में काले पत्थर की है, जिसकी उँचाई 5 फीट है। मूर्ति के दाएं हाथ में सोटा तथा जनेउ पहने हुए है। यहां पर तांत्रिक विधि से पुजा की जाती है और मंदिर स्टेट की तरफ से भैरव चतुर्दशी को वार्षिक पूजा विधि विधान से किया जाता है।

## आनंद भैरव मंदिर का छायाचित्र




## मां काली मंदिर

मंदिर प्रांगण में अवस्थित मां काली मंदिर के प्रधान पुजारी देवनारायण फलाहारी जो ज्योतिषाचार्य और तांत्रिक हैं अपने साक्षात्कार में बताते हैं कि रावणेश्वर बैद्यनाथ मंदिर में शक्तिपीठ होने के कारण सबसे पहले मां काली का पुजन सुबह, दोपहर और संध्या काल में होती है। उसके पश्चात् ही बाबा बैद्यनाथ का पुजन होता है। भगवान शंकर के पुजन के पश्चात् मां पर्वती की पूजा होती है और मां पार्वती की पुजा संपन्न होने के बाद ही मंदिर प्रांगण में अवस्थित सभी मंदिरों में पुजन प्रारम्भ होता है।

मां काली मंदिर का निर्माण पूर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री जयनारायण ओझा द्वारा 1712 ई0 में कराया गया था। मंदिर की लंबाई लगभग 50 फीट और चौराई लगभग 30

फीट है।[25]मंदिर के शिखर पर ताम्बे का कलश है जिसके उपर पंचशूल लगा हुआ है। मंदिर के शिखर के गुम्बद के नीचे गहरे लाल रंग से रंगा हुआ है। मंदिर में प्रवेश करने के लिए तीन सीढ़ीयों को पार करना होता है। माता की प्रतिमा को तीन तरफ ताम्बा की ग्रील से घेरा गया है। मंदिर में वर्ष भर माता की पूजा कर सकते हैं लेकिन आश्विन महिने के नवरात्र के समय चार दिन तक श्रद्धालु भक्त पुजा नहीं कर सकते हैं। नवरात्र के सप्तमी तिथि से नवमी तिथि तक मां का पट बंद रहता है और दशमी तिथि को दोपहर विशेष पुजा के बाद भक्तों के लिए पट खोल दिया जाता है। मंदिर में पंडा धर्म रक्षिणि द्वारा चैत महिना के कृष्ण पक्ष में नगर वार्षिक गवांली पूजा का आयोजन किया जाता है।

**माता काली मंदिर का छायाचित्र**



# मां तारा मंदिर

मां तारा मंदिर की विशेषता यह है कि यहां मां तारा एवं महादेव स्वयं विराजमान हैं। इस मंदिर का निर्माण कार्य लगभग 1930 से 1935 के मध्य पूर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री भवप्रीतानंद ओझा के द्वारा कराया गया। मां तारा मंदिर का निर्माण मंदिर परीशर में सबसे अंतिम निर्माण है क्योंकि इसके बाद सरदार पंडा श्री श्री भवप्रीतानंद ओझा जी का गंगा लाभ 11 मार्च 1970 को हो गया। मां तारा मंदिर मुख्य मंदिर की उत्तर की ओर है और बाबा मंदिर के निकास द्वार के ठीक सामने है। इस मंदिर के शिखर की लंबाई लगभग 40 फीट और चौड़ाई 30 फीट है।[26]इस मंदिर के शिखर पर तांबे का कलश स्थित है जिसपर पंचशूल लगा है। शिखर के गुम्बद के निचे गहरे लाल रंग से पेंट किया हुआ है। मंदिर में प्रवेश करने के लिए 3 सीढ़ी को पार करना होता है। गर्भ गृह में मां तारा के पांव के नीचे महादेव तथा खडग धारण की हुई माता की खरी मुद्रा में सफेद संगमरमर की मूर्ति स्थापित है। मूर्ति की उंचाई 5 फीट है और यहां तांत्रिक विधि से पुजा की जाती है। इस मंदिर के उपर पिंजरे में शेर की बनी आकृति प्रतिक चिन्ह के रूप में लगा हुआ है। इस मंदिर में माघ महिने के शुक्ल पक्ष सप्तिमि तिथि को मंदिर स्टेट की तरफ से मां तारा की वार्षिक पुजा विधिविधान से की जाती है।

**मां तारा मंदिर का छायाचित्र**




## मां गंगा का मंदिर

भगवान शंकर की जटा से निकले मां गंगा के मंदिर का अपना अलग स्थान है मां गंगा मंदिर का निर्माण 19वीं सदी में भवप्रीतानंद ओझा द्वारा कराया गया था। यह मंदिर बाबा के मुख्य मंदिर के पिछे पश्चिम तथा उत्तर के कोने की ओर स्थित है। यह राममंदिर और आनंद मंदिर के सामने है। यह मंदिर प्रांगन का सबसे छोटा मंदिर है। यह मंदिर षटभुज आकार का है इसके शिखर की लंबाई लगभग 20 फीट और चौड़ाई 10 फीट है। माता के मंदिर के शिखर पर ताम्बे का कलश सहित त्रिशूल लगा है। गंगा मंदिर का दरवाजा दक्षिण की तरफ है मंदिर के गर्भ गृह में मां गंगा की खड़ी मुद्रा में स्वेत संगमरमर

की मुर्ति स्थापित है। इस मुर्ति की उँचाई दो फीट है। मां गंगा की मुर्ति में चार हाथ हैं जो अपने वाहन मगरमच्छ पर खड़ी है। [27]

**मां गंगा मंदिर का छायाचित्र**



# पार्वति/त्रिपुर सुंदरीमंदिर

त्रिपुर सुंदरी मंदिर बाबा बैद्यनाथ मंदिर प्रांगन में स्थित है जहाँ माँ त्रिपुर सुंदरी एवं महादेव स्वयं विराजमान हैं।वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में त्रिपुरसुंदरी की मूर्ति को पार्वती से सम्बोधित करने का रहस्य है। इस मंदिर का निर्माण कार्य 1877 से 1901 के मध्य पूर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री शैलजानंद ओझा द्वारा कराया गया था। इस मंदिर का मुख्य द्वार उत्तर पश्चिम की तरफ है मंदिर के शिखर की लंबाई करीब 30 फीट और चौड़ाई 20 फीट है। मंदिर के शिखर पर ताम्बे का कलश लगा है जिसके उपर पंचशूल है। मंदिर के शिखर के गुम्बद के नीचे स्वेत रंग से रंगा हुआ है। इस मंदिर में प्रवेश करने के लिए एक सीढ़ी पार करना होता है। इस मंदिर में बाहर से हीं भक्त जन पुजा करते हैं। गर्भ गृह में मां त्रिपुरसुंदरी महादेव की गोद में बैठी हुई मुद्रा में लाल पत्थर की बनी मुर्ति है। इस मूर्ति की उँचाई 4 फीट है।[28]इस मंदिर में पूर्ण रूप से दीक्षीत तथा तंत्र मार्ग में परिपूर्ण भक्त हीं पूजा कर सकते हैं। मंदिर में मां की तांत्रिक विधि से पुजा की जाती है और मंदिर स्टेट की तरफ से माघ महिना के कृष्ण पक्ष मकर संक्रांति के दिन मां की वार्षिक पुजा विधिवत की जाती है।

# पार्वति/त्रिपुर सुंदरी मंदिर का छायाचित्र






गौरी शंकर
मंदिर
पंडा धर्मरक्षिणी सभा (रजि0)
गौरी शंकर
मंदिर

# बगलामुखी मंदिर

बाबा बैद्यनाथ मंदिर प्रांगण में मां बागलामुखी पिताम्बरी के रूप में विराजमान हैं। इस मंदिर का निर्माण कार्य पुर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री रामदत्त ओझा द्वारा 1793 ई0 में कराया गया था। मां बागला मुखी मंदिर की लंबाई करीब 30 फीट और चौराई करीब 25 फीट है।[29] इस मंदिर के शिखर पर ताम्बे का कलश लगा है जिसपर पंचशूल भी लगा है। माता के मंदिर के शिखर के गुम्बद के नीचे गहरे पीले रंग से रंगा हुआ है। मां बागलामुखी बैद्यनाथ तीर्थ की द्वितीय अधिष्ठात्री देवी है, जिसके कारण मां शक्ति की पुजा करने के लिए भक्त मंदिर में बांईओर से प्रवेश कर पुजा करते हैं। इस मंदिर में ओझा परिवार मंदिर स्टेट की तरफ से पुजा करते हैं। मां बागला की पुजा तांत्रिक विधि से की जाती है और मंदिर स्टेट की तरफ से माघी पूर्णिमा के दिन वार्षिक पुजा विधि विधान से किया जाता है।

# बागलामुखी मंदिर का छात्राचित्र



# सूर्य नारायण मंदिर

बाबा बैद्यनाथ मंदिर के प्रांगन में भगवान सूर्य की उपासना का अपना अलग महत्व है। इस मंदिर का निर्माण कार्य पूर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री रामदत्त ओझा ने 1782 से 1793 के मध्य कराया था। सूर्य नारायण मंदिर मुख्य मंदिर के दक्षिण पश्चिम कोने में अवस्थित है। मंदिर की लंबाई लगभग 15 फीट तथा चौड़ाई लगभग 25 फीट है। इस मंदिर पर कोई शिखर नहीं है और यह गुम्बर रहित और पंचशूल रहित मंदिर है।[30] गर्भ गृह में भगवान सूर्य नारायण की भव्य मूर्ति है। भगवान सूर्य नारायण कमल पर आसन की मुद्रा में काले पत्थर की मूर्ति के रूप में स्थापित हैं। वर्ष 1967 – 68 के दौरान भगवान सूर्य नारायण की अति प्राचिन मूर्ति चोरी हो गई थी। इसके बाद सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री भवप्रितानंद ओझा द्वारा नई मूर्ति स्थापित की गई। प्रत्येक रविवार को मंदिर में विशेष पूजा अर्चना की जाती है। कार्तिक मास शुक्ल पक्ष सप्तमी के दिन छठ पुजा में अर्घ डालने के बाद बड़ी संख्या में भक्त भगवान सूर्य नारायण की पूजा करते हैं।

# सूर्य नारायण मंदिर का छायाचित्र



## नीलकण्ठ महादेव मंदिर

बाबा बैद्यनाथ मंदिर के प्रांगन में एक महत्वपूर्ण मंदिर नीलकण्ठ महादेव का मंदिर है इसमें बाबा भोलेनाथ के द्वारा समुद्र मंथन के समय निकले हलाहल विषपान करने वाले नीलकंठ महादेव की पूजा अर्चना की जाती है। इस मंदिर में नीलकण्ठ महादेव और शनिदेव सहित नवग्रह विराजमान हैं। मंदिर का निर्माण करीब 19वीं शताब्दी में पूर्व सरदार पण्डा स्वर्गीय श्री श्री शैलजानंद ओझा ने कराया था। यह मंदिर मुख्य मंदिर के सामने पुरब की तरफ है और लक्ष्मीनारायण मंदिर और पार्वती मंदिर के मध्य स्थित है। इसके शिखर की लंबाई करीब 25 फीट और चौड़ाई 20 फीट है।[31]इस मंदिर के शिखर पर ताम्र कलश स्थित है जिसके उपर पंच शूल न होकर त्रिशूल लगा है। मंदिर के शिखर के गुम्बद के नीचे स्वेत रंग से रंगा हुआ है। मंदिर के गर्भ गृह में नीलकंठ महादेव की घोरे पर सवाड़ काले पत्थर की मूर्ति स्थापित है। नीलकण्ठ महादेव की मूर्ति की उचाई तीन फीट है। इस मंदिर में नीलकण्ठ महादेव की तांत्रिक विधि से पूजा अर्चना की जाती है।

**नीलकण्ठ महादेव का छायाचित्र**




## चर्तुमुखी ब्रह्मा मंदिर

बाबा बैद्यनाथ मंदिर के प्रांगण में एक महत्वपूर्ण मंदिर चर्तुमुखी ब्रह्मा जी का है। स्थानीय लोगों बताते हैं कि यह चर्तुमुखी शिवलिंग है। ब्रह्मा की मुर्ति मात्र राजस्थान के पुष्कर में स्थित है। चर्तुमुखी ब्रह्माजी के मंदिर का निर्माण लगभग 100 साल पहले कराया गया था। यह मंदिर मुख्य मंदिर के पुरब तथा दक्षिण की ओर है। मां संध्या मंदिर एवं भगवान गणेश मंदिर के मध्य ब्रह्मा जी का मंदिर स्थित है। मंदिर के शिखर की लंबाई

करीब 30 फीट और चौड़ाई मात्र 10 फीट है।[32]इस मंदिर के उपर न तो कलश है और न हीं पंचशूल लगा हुआ है। मंदिर के शिखर के गुंबद के नीचे पीले रंग से रंगा हुआ है। गर्भ गृह में ब्रह्मा जी का काले पत्थर की लिंग रूपी मूर्ति स्थापित है। इस लिंग रूपी ब्रह्मा जी की मूर्ति की उंचाई मात्र 1 फीट है जहां वैदिक विधि से ब्रह्मा जी की पुजा की जाती है।

## चर्तुमुखी ब्रह्मा मंदिर का छायाचित्र



## महाकाल भैरव मंदिर

बाबा बैद्यनाथ मंदिर प्रांगण में एक महत्वपूर्ण मंदिर महाकाल भैरव का है। इसमें भक्त बाबा के बटुक भैरव की पुजा करते हैं। मंदिर में भगवान महाकाल एवं महाकाली स्वयं विराजमान हैं। महाकाल भैरव मंदिर का निर्माण बौद्ध काल में हुआ है। इस मंदिर में दो शिखर है – पहला शिखर पिरामिड के समान है जिसकी लंबाई करीब 25 फीट तथा चौड़ाई करीब 35 फिट है। दूसरा महाकाल भैरव का मुख्य शिखर है जिसकी लंबाई करीब 40 फीट तथा चौड़ाई 35 फीट है।[33] इस मंदिर के शिखर पर ताम्बे की कलश और उसके उपर पंचशूल भी लगा है। मंदिर के शिखर के गुम्बद के नीचे गहरे नीले रंग से रंगा हुआ है। महाकाल भैरव मंदिर का द्वार मुख्य मंदिर के दक्षिण की ओर है। मंदिर के दो दरवाजे हैं। पहला दरवाजा पुरब और पश्चिम में और दुसरा दरवाजा उत्तर की ओर है। मंदिर में प्रवेश करने के लिए दो सीढ़ीयों को पार करना पड़ता है। गर्भ गृह में महाकाल भैरव आसन मुद्रा में बैठे काले पत्थर की मुर्ति स्थापित है। इस मूर्ति की उँचाई 5 फीट है। मूर्ति के दांई हाथ में सोटा है और यहाँ तांत्रिक विधि से पुजा अर्चना की जाती है। मंदिर स्टेट की तरफ से भैरो चर्तुदशी को महाकाल भैरव की वार्षिक पुजा विधि विधान से किया जाता है। इसके अतिरिक्त मठ पति परिवार की तरफ से सालों भर पूजा की जाती है। भैरो चर्तुदशी एवं भैरवा अष्टमी को मठपति परिवार की तरफ से विशेष पुजा की जाती है जिसमें भगवान महाकाल भैरव को रोट का भोग लगाया जाता है। मंदिर के गर्भ गृह से निकलते हीं बाई तरफ सफेद पत्थर का लिंग निकला है जिसे स्थानीय लोग भैरव का सोटा कहते हैं।

# महाकाल मंदिर का छाया चित्र



# मां संध्या मंदिर

मंदिर प्रांगण में अवस्थित संध्या मंदिर के पुजारी पक्षी राज पंडा पिता श्री भरत गज पंडा याग्यता स्नातक, उम्र 77 वर्ष अपने साक्षात्कार के दौरान शोधार्थी को बताते हैं कि मां संध्या यहां कामाख्या से नील चक्र में बैठकर आई थीं क्योंकि उन्हें पता था कि शंकर भगवान यहां आएंगे। उन्होंने बताया कि मां संध्या के कई नाम हैं यथा गायत्री, कामाख्या, सावित्री, वेद माता, वेद जननी आदि आदि।

मां संध्या मंदिर का निर्माण पुर्व सरदार पंडा श्री श्री खेमकरण ओझा द्वारा वर्ष 1692 में कराया गया था। यह मंदिर मुख्य बाबा मंदिर की दक्षिण तरफ स्थिति है। स्थानीय लोगों का मानना है कि सती के हृदय की पहड़ेदारी करने के लिए माँ संध्या कामाख्या से नील चक्रपर पधारी थी। बाबा बैद्यनाथ से पहले मां संध्या देवघर में निवास करती थी। इस मंदिर की लंबाई करीब 50 फीट तथा चौड़ाई 35 फीट है।[34] इस मंदिर के शिखर पर तांबे का कलश है। जिसे बाद में बदल कर नवीन कलश लगाया गया था। इसके उपर भी पंचशूल लगा हुआ है। शिखर के उपर गुंबद के नीचे गहरे पिले रंग से रंगा हुआ है। सभी तीर्थ पुरोहित इसे मां कामाख्या मंदिर के रूप में भी मानते हैं। यहाँ पर मां संध्या का तांत्रिक विधि से पुजा की जाती है।

## मां संध्या मंदिर का छायाचित्र




## मां सरस्वती मंदिर

बाबा बैद्यनाथ मंदिर प्रांगण में एक महत्वपूर्ण मंदिर मां सरस्वती जी का भी है। मां सरस्वती जी के मंदिर का निर्माण पूर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री रामदत्त ओझा द्वारा कराया गया था। यह मंदिर मुख्य मंदिर के दक्षिण पश्चिम की तरफ अवस्थित है। मंदिर की लंबाई लगभग 25 फीट तथा चौड़ाई करीब 20 फीट है। मंदिर के शिखर पर ताम्बे का कलश है जिसके उपर पंचशूल भी लगा है।[35]मंदिर के गर्भ गृह में मां सरस्वती देवी की भव्य सफेद वीणा लिए हुए प्रतिमा है। वसंत पंचमी के दिन मां सरस्वती की वार्षिक पुजा तांत्रिक विधि से की जाती है।

# मां सरस्वती मंदिर का छायाप्रति



## तुलसी चौड़ा

तुलसि चौड़ा एक प्रकार का चबुतरा है जो वेदी नुमा स्थापित है यह चबुतरा हनुमान मंदिर, मां मनसा मंदिर, माता सरस्वति मंदिर, भगवान सूर्य नारायण मंदिर के सामने अवस्थित है। इस चबुतरे की चौड़ाई 25 फुट है।[36] इस चबुतरे पर एक तुलसी का पौधा लगाया गया है। जो तुलसी चौड़ा के नाम से जाना जाता है। आश्विन महिने के तुला संक्रांति में इस तुलसी चौड़ा के पास आकाश दीप जलाया जाता है। यह आकाश दीप वहां के पुजारी द्वारा जलाया जाता है।

## तुलसी चौड़ाकाछायाचित्र



# मां मनसा मंदिर

बाबा बैद्यनाथ मंदिर के प्रांगण में मां मनसा का मंदिर का महत्व काफी अलग है यहां विष की देवी का पूजा होता है। इस मंदिर का निर्माण पूर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री शैलजानंद ओझा ने कराया था। मां मनसा मंदिर मुख्य मंदिर के पश्चिम तथा दक्षिण की ओर मां सरस्वती तथा हनुमान मंदिर के मध्य अवस्थित है। मंदिर की लंबाई करीब 20 फीट तथा चौड़ाई 10 फीट है।[37] मंदिर के शिखर पड़ न तो ताम्र कलश है और न ही पंचशूल ही लगा है। मंदिर के अंदर गर्भ गृह में मां मनसा की दो फीट की मूर्ति स्थापित है। मां मनसा के एक हाथ में चक्र, दूसरे हाथ में पास, तीसरे हाथ में त्रिशूल और चौथे हाथ में जहरीला सर्प है। स्थानीय लोगों का मानना है कि मां मनसा नागराज बासुकि की बहन है जो विष की देवी मानी जाती है। श्रावन मास की संक्रांति तिथि को मां मनसाकी तांत्रिक विधि से विशेष पुजा की जाती है।

**मां मनसा मंदिर का छायाचित्र**



# लक्ष्मी नारायण मंदिर

बाबा बैद्यनाथ मंदिर के प्रांगण में लक्ष्मी नारायण मंदिर अवस्थित है जहां विष्णु के नारायण रूप की पुजा अर्चना की जाती है। इस मंदिर में भगवान नारायण के साथ मां लक्ष्मी भी विराजमान हैं। इसलिए इसे लक्ष्मी नारायण मंदिर कहा जाता है। स्थानीय लोगों का ऐसा मानना है कि इस मंदिर का निर्माण शिल्पकार भगवान विश्वकर्मा द्वारा किया गया था, जो पूरा नहीं हो सका। उसके बाद इस मंदिर का निर्माण पुर्व सरदार पंडा स्वर्गीय बाम देव ओझा ने 1630 से 1640 के मध्य कराया था। लक्ष्मी नारायण मंदिर मुख्य मंदिर के सामने पूरव तथा उत्तर के कोने की ओर अवस्थित है। इस मंदिर में लक्ष्मी नारायण के साथ – साथ शिल्पकार भगवान विश्वकर्मा की पूजा का भी महत्व है। इस मंदिर की लंबाई करीब 60 फीट तथा चौड़ाई 40 फीट है।[38] इस मंदिर का आकार बहुत बड़ा है और चह चतुर्भुजाकार है। इस मंदिर के शिखर पर चारों तरफ कुल 9 ताम्बे का कलश स्थापित है। इस ताम्र कलश के उपर सुदर्शन चक्र तथा पंचशूल लगा है। मंदिर के आगे बड़ा बड़ामदा है जिस पर चढ़ने के लिए चार सीढ़ी को पार करना होता है। इस मंदिर का दरवाजा लकड़ी का बना हुआ है। गर्भ गृह में बाईं ओर नारायण की मूर्ति, मध्य में मां लक्ष्मी की मुर्ति के साथ भगवान विश्वकर्मा जी की मुर्ति भी है। भगवान नारायण की मूर्ति 4 फीट की खड़ी मुद्रा में है जो काले पत्थर से निर्मित है। वहीं मां लक्ष्मी की काले पत्थर की खड़ी मुदा में मूर्ति तिन फिट की है और शिल्पकार विश्वकर्मा जी की मूर्ति काले पत्थर की आसन मुद्रा में है जो दो फिट की है। लक्ष्मी नारायण मंदिर में वैदिक विधि से पुजा की जाती है और देवोत्थान एकादशी के दिन मंदिर स्टेट की ओर से विशेष पुजा की जाती है। जन्माष्टमी के दिन भी मंदिर में विशेष पुजा होता है। इन सबके अलावा वसंत पंचमी में बाबा के विवाह से पुर्व बाबा का तिलकोत्सव इसी मंदिर में होता है।

# लक्ष्मी नारायण मंदिर का छायाचित्र



## हनुमान मंदिर

बाबा बैद्यनाथ मंदिर प्रांगन में स्थित भगवान शिव के रूद्रावतार हनुमान जी के मंदिर का अपना एक अलग महत्व है। यह हनुमान मंदिर मुख्य मंदिर के दक्षिण पश्चिम कोने की ओर स्थित मां सरस्वती मंदिर तथा मुख्य मंदिर के पश्चिम की तरफ महाकाल भैरव मंदिर के मध्य में स्थित है। हनुमान मंदिर बरामदे के आकार का है इसकी लंबाई करीब 20 फीट तथा चौड़ाई लगभग 40 फीट है।[39]इस मंदिर शिखर पर न तो कोई कलश है और न ही पंचशूल है। मंदिर में प्रवेश के लिए तीन सीढ़ी को पार करना होता है। मंदिर के प्रांगन में एक छोटा सा पितल का दरवाजा है। मंदिर के भीतर दाईं तरफ हनुमान जी की तीन फीट की मुर्ति स्थापित है। इसके अतिरिक्त बाईं तरफ धन के देवता कुबेर महाराज तथा धनदा देवी की दिवाल से लगी मुर्ति स्थापित है। हनुमान जी एक हाथ में गदा और दुसरे हाथ में संजीवनी सहित पर्वल लिए हुए हैं। संपूर्ण मंदिर भगवा रंग से रंगा हुआ है। हनुमान मंदिर के दिवालों में हनुमान चालिसा, सुंदर काण्ड, बजरंग बान आदि अंकित है। राम नवमी के अवसर पर मंदिर में विशेष पुजा अर्चना होता है।

## हनुमान मंदिर का छायाचित्र



# दुर्गा मंडप

बाबा मंदिर के प्रांगन में प्रशासनिक भवन के समीप दुर्गा मंडप है। जहां मां की बेदी पर मां शक्ति की पुजा की जाती है। दुर्गा मण्डप का निर्माण करीब 129 वर्ष पुर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री शैलजानंद ओझा द्वारा कराया गया था। इस मंडप की लंबाई करीब 20 फीट तथा चौड़ाई 40 फीट है।[40] इस मंडप के मुख्य शिखर पर बीच में भगवान गणेश की सुन्दर मुर्ति तथा दो शेर की आकृति बनी है। इस मंडप के उपर पंचशूल नहीं लगा है। मंदिर में प्रवेश के लिए चार सीढ़ी पार करने होते हैं। मंडप में लोहे के ग्रील का दरवाजा लगा है। दुर्गा मंडप में सर्वप्रथम पूर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री सैलजानंद ने प्रतिमा बनाकर मां शक्ति दुर्गा की तांत्रिक तरीके से पुजा की थी, जो वर्तमान में भी जारी है। आश्विन माह के नवरात्र पर मां दुर्गा की प्रतिमा स्थापित कर भव्य पुजा अर्चन किया जाता है।

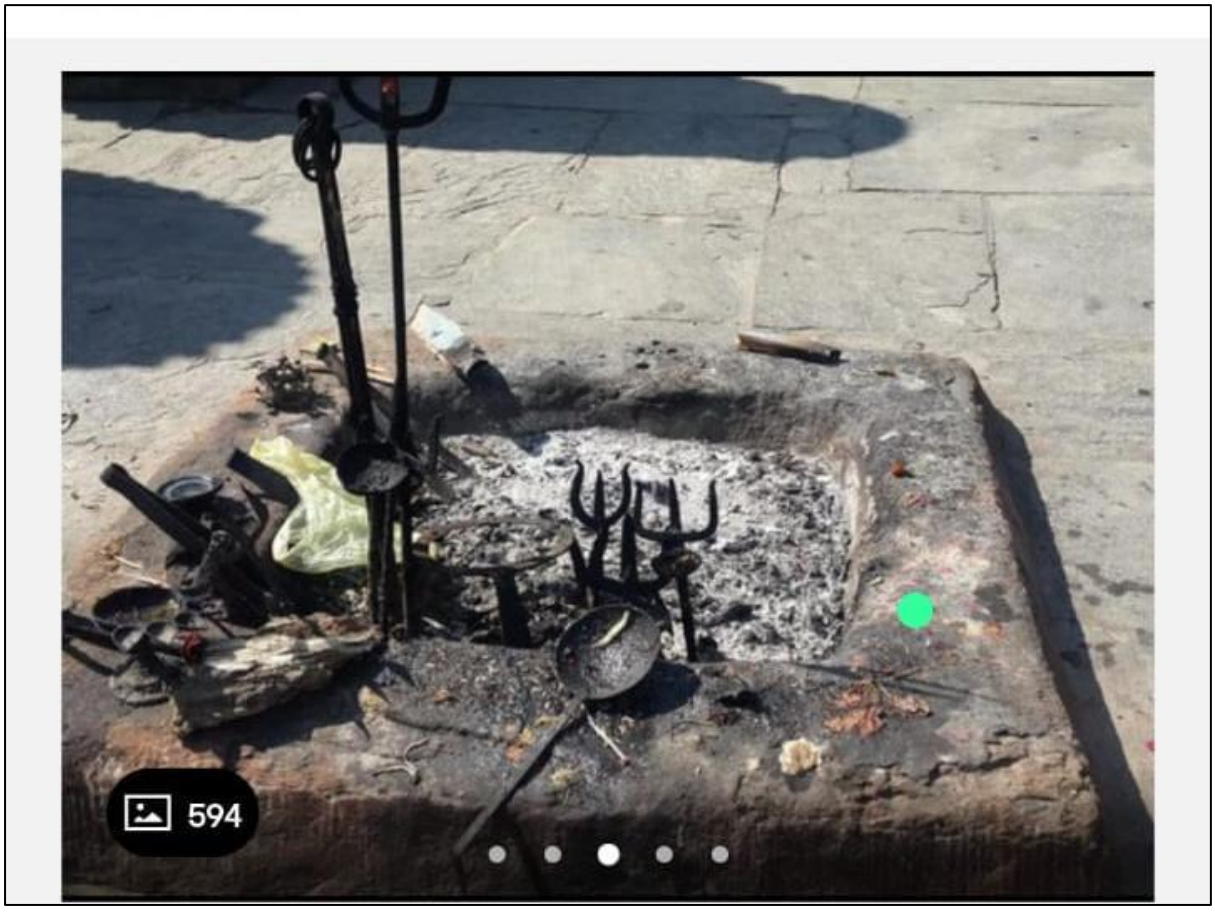
**दुर्गा मंडप का छायाचित्र**



## हवन कुंड

बाबा बैद्यनाथ मंदिर प्रांगन में मंदिर प्रसाशनिक भवन के समीप मां शक्ति की विशेष पूजा के लिए हवन कुंड बनाया गया है, जहां भक्त बाहर से ही पुजा करते हैं। इस हवन कुंड का निर्माण पूर्व सरदार पण्डा स्वर्गीय श्री श्री रामदत्त ओझा द्वारा कराया गया था। यह हवन कुण्ड मुख्य मंदिर के उत्तर की तरफ स्थित है। इस मंडप की लंबाई लगभग 30 फीट तथा चौड़ाई लगभग 30 फीट है।[41] हवन कुण्ड के शिखर पर पंच शूल भी लगा हुआ है। हवन कुंड के अंदर प्रवेश करने की अनुमति बाहरी भक्त को नहीं है। इसमें लकड़ी का दरवाजा लगा हुआ है। यहां पुर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री रामदत्त द्वारा मां दुर्गा की तांत्रिक विधि से हवन तथा पुजन किया गया था।

## हवन कुंडका छायाचित्र



# नर्मदेश्वर महादेव मंदिर

नर्मदेश्वर लिंग की मूर्ति सफेद पत्थर की अदभुत बनी हुई है। नर्मदेश्वर मूर्ति के लिंग की चौड़ाई तीन इंच एवं ऊँचाई छः इंच की है। नर्मदेश्वर लिंग स्थानीय पत्थर की जलहरी से आवृत है, जिसका मुंह उत्तर की ओर है, वहीं से शिव पर चढ़ाये गये जल प्रवाहित होते रहते हैं। इस लिंग के दक्षिण पार्श्व में नन्दी जी की मूर्ति है जिसका मुंह थोड़ा टूटा हुआ है जो स्थानीय पत्थरों का ही बना है। नर्मदेश्वर लिंग विग्रह की वैद्यनाथ मंदिर परिसर के देवालयों में गिनती होती है तथा मित्रा ने भी इसकी चर्चा की है। उसने लिखा है कि यह दूधनाथ महादेव की लिंग मूर्ति है तथायह परवर्ती समय की बनी हुई है। 19वीं शताब्दी के अंतिम दशक में जब शैलजानन्द ओझा वैद्यनाथ मंदिर के प्रधान तीर्थ पुरोहित हुआ करते थे उस समय उन्होंने चांदी के पंचमुखी लिंग को भी इस पर स्थापित किया था। कालान्तर में चांदी के पंचमुखी शिव लिंग की चोरी हो गयी एवं तब से यह लिंग विग्रह के रूप में ही विराजमान है। ऐतिहासिक दृष्टि से इसका महत्व भले ही कम हो लेकिन वैद्यनाथधाम के धार्मिक परिवेश में इस कामद लिंग का काफी महत्व है। मंदिर परिसर में अत्यधिक भीड़ रहने पर अधिकांश भक्त खासकर जो स्थानीय होते हैं नर्मदेश्वर महादेव पर ही अपना जल अर्पित करते हैं।

## नर्मदेश्वर मंदिर का छायाचित्र






राधा कृष्ण मंदिर
–बाबा बैद्यनाथधाम श्राईन बोर्ड



# बाबा बैद्यनाथ मंदिर प्रांगन में अवस्थित नील चक्रका छायाचित्र





## बाबा बैद्यनाथ मंदिर प्रांगन में अवस्थित राम सीता लक्ष्मण मंदिरका छायाचित्र






## बाबा बैद्यनाथ मंदिर

मंदिर प्रांगण में अवस्थित मुख्य मंदिर बाबाबैद्यनाथ धाम मंदिर के एक पुजारी मदन पंडा योग्यता स्नातक, उम्र 67 वर्ष अपने साक्षात्कार के दौरान शोधार्थी को बताते हैं कि बैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग झारखण्ड राज्य के देवघर शहर में स्थित है। इसकी प्रसिद्धि शास्त्र एवं लोक दोनों में है। मंदिर की स्थापना के संबंध में यह कथा कही जाती है कि एक बार राक्षसराज रावण ने हिमालय पर्वत पर जा कर भगवान शिव का दर्शन प्राप्त करने हेतु घोर तपस्या किया। उन्होंने एक एक करके अपने सभी सिर काटकर भगवान शिव पर चढ़ाना शुरू किया। 9 सिर काट कर चढ़ाने के बाद जब वे अपना दशमा सिर काटकर चढ़ाने के लिए उद्यत हुआ तभी भगवान शंकर अति प्रसन्न होकर उनके समक्ष प्रकट हो गये और रावण का हाथ पकड़कर शिर काटने से रोक दिया। रावण के सभी सिर पहले की तरह हो गया और भगवान प्रसन्न होकर उनसे वर मांगने को कहा। उन्होंने वर के रूप में भगवान शंकर से उस लिंग को अपनी राजधानी लंका लेजाने की अनुमति मांगी। भगवान ने यह वरदान तो दे दिया लेकिन इसके साथ एक सर्त भी लगा दी। शर्त यह थी की तुम इसे ले जा सकते हो लेकिन यदि रास्ते में इसे कहीं रख दोगे तो यह वहीं अचल हो जाएगा।

रावण इस बात को स्वीकार कर लिया और शिवलिंग को उठाकर लंका के लिए चल दिया। काफी चलने के बाद रास्ते में उसे लघु संका करने की आवश्यकता महसूस हुई। वह उस शिवलिंग को एक अहिर के हाथों में रखकर लघुसंका करने लगा। काफी देर होने पर अहिर को शिवलिंग का भार बहुत अधिक लगा और उसे संभाल नहीं सका मजबूर होकर अहिर ने शिवलिंग को वहीं भूमि पर रख दिया। जब रावण लघुशंका से निवृत होकर आया तब बहुत प्रयास करने पर भी उस शिवलिंग को नहीं उठा सका। अंत में निरास हो कर उस पवित्र शिवलिंग पर अपने अंगुठे का निशान बनाकर वहीं छोड़कर अपनी लंका को चला गया। बाद में ब्रह्मा, विष्णु आदि देवताओं ने वहां आकर उस शिवलिंग का पुजन किया। यही ज्योतिर्लिंग बाबा बैद्यनाथ के नाम से जाना जाता है। यह ज्योतिर्लिंग ग्यारह उँगली उँचा है और इसके उपर अगूँठे के आकार का गड्ढ़ा है। इस मंदिर की उँचाई लगभग 72 फीट है।

## बाबा बैद्यनाथ मंदिरका छायाचित्र






**बाबा बैद्यनाथ मंदिर पर अवस्थित वरूण कलश**

बाबा बैद्यनाथ मंदिर के उपर अवस्थित वरूण कलश मंदिर के परिसर में प्रवेश करते ही भक्तों के आँखों को आकर्षित कर लेता है। बाबा बैद्यनाथ मंदिर के उपर एक स्वर्ण कलश स्थित है जो वरूण कलश के नाम से जाना जाता है। बहुत कम ही लोग जानते हैं कि बाबा बैद्यनाथ मंदिर के उपर अवस्थित वरूण कलश पर संस्कृत के दो श्लोक भी लिखे हैं। यह श्लोक की विशेषता यह है कि यह देवनागरी लिपी में लिखी हुई है।

**बाबा बैद्यनाथ मंदिर पर अवस्थित वरूण कलश का चित्र**



स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग, सिद्धो कान्हू मुर्मू विश्वविद्यालय, दुमका के अध्यक्ष प्रोफेसर धनंनजय मिश्र बताते हैं कि बाबा मंदिर का यह वरूण कलश पर अंकित अभिलेख सिर्फ इस राज्य के लिए ही नहीं बल्कि संपूर्ण देश के लिए महत्वपूर्ण है। पंडित अनुप कुमार वाजपेयी द्वारा लिखित विश्व की प्राचीनतम सभ्यता जो सूचना एवं प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित है में इस पर बहुत अधिक प्रकाश डाला गया है। व्यक्तिगत साक्षात्कार से यह पता चला है कि ईसा पूर्व 43 में वरूण कलश को मंदिर पर जड़वाया गया था।

पुरातत्व वेत्ता पंडित अनुप कुमार वाजपेयी के अनुसार इस कलश की स्थापना के 2067 वर्ष हो चुके हैं। उनके अनुसार श्रावण शुक्ल पक्ष पंचमी अर्थात् नागपंचमी के दिन विक्रम संवत 14 को इस वरूण कलश को मंदिर पर स्थापित किया गया था। इस बात की जानकारी बाबा मंदिर के उपर रखी वरूण कलश पर देवनागरी लिपी में अंकित श्लोकों से भी मिलती है। पण्डित बाजपेयी के अनुसार अबतक मान्य संकृत भाषा का प्राचीनतम अभिलेख 151 ई0 का, जो जूना गढ़ में प्राप्त हुआ है और जिसे रूद्र दमन नाम से जाना जाता है, वह ब्राह्मी लिपी में अंकित है। लेकिन देवनागरी लिपी में अंकित इस वरूण कलश की प्राचीनता अपने आप सिद्ध होता है। इससे बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर की भी प्राचीनता स्पष्ट होता है।













मां काली मंदिर के प्रधान पुजारी देवनारायण फलाहारी जो ज्योतिषाचार्य और तांत्रिक हैं अपने साक्षात्कार में बताते हैं कि मंदिर के प्रागंण के पत्थर प्राचिन काल के हैं बहुत अधिक लोगों के भीड़ के कारण पत्थर घिस रहे हैं। लेकिन पत्थर का ह्रास बहुत ही धीमी गति से हो रहा है। फलतः इसके कारण इसका नुकसान बहुत ही कम होता है। लेकिन समय के बीतने के साथ – साथ इसमें परिवर्तन होते नजर आ रहा है। हालाकि पत्थर पर खुदा हुआ रेखा अभी भी दिखाई देता है।

बहुत अधिक संख्या में श्रधालुओं के आने से मंदिर के वास्तु शिल्प को धीरे – धीरे नुकसान पहुंच रहा है। मंदिर में पूजन सामग्री के यत्र तत्र बिखरे होने से वातावरण दुषित होते जा रहा है। गंदगी का ढ़ेर अनेकों जगह दिखाई पड़ता है जिसमें प्लास्टिक, सिंदूर, प्लास्टिक के जलपात्र, बांस के कावड़ आदि होते हैं जो आस पास के वातावरण को नुकसान पहुँचाते हैं।

**अध्याय–4**

# वैद्यनाथ धाम मंदिर का विश्लेषण

बाबा वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग भारत के संयुक्त बिहार प्रदेश के संताल परगना के पर्वतीय क्षेत्र में अवस्थित है।[42] तीर्थों की धार्मिक परम्परा में बाबा वैद्यनाथ धाम का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। ज्योतिर्लिंगों की परम्परा को ठीक–ठीक स्पष्ट करने के लिए आज से हजारों वर्ष पूर्व के भारतीय जीवन एवं समाज की ओर विहंगम दृष्टिपात करना जरूरी होगा। भारतीय अतीत के सांस्कृतिक स्वरूप का वर्तमान ही ज्योतिर्लिंग है साथ ही अतीत में सभ्यता तथा संस्कृति के क्षेत्र में अनेक प्रसंग एवं परिवर्त्तन उपस्थित हुए हैं। वेद एवं वेदोत्तर काल में संस्कृति की जो एक रहस्यमयी धारा प्रवाहित हो रही थी, वही धारा पुराणों में जाकर शैव मत के व्यापक बोध का आधार बन गई है। इन ग्रंथों के व्यापक प्रचार–प्रसार के वजह से इस देश का समाज एक निश्चित सामाजिक उद्‌बोधन की ओर अग्रसर हो पाया है। धार्मिक साहित्य का प्रणयन लगभग ईसा की तीन–चार शताब्दियों तक होता रहा तथा परवर्त्ती चार–पाँच सौ वर्षों में शैवधर्म का व्यापक आदर्श यहाँ की मिट्‌टी की सौन्धी महक की तरह शाश्वत प्रवाहित होने वाली हवा में मह–मह करने लगा जो आज भी बाबा वैद्यनाथ धाम में अपनी खुशबू बिखेर रहा है। शैवधर्म के इस विस्तृत परिवेश में हिमालय की जड़ी बूटियों की सुगन्धि तथा शीतल मलय पवन के वातावरण का भी समावेश है। ज्योतिर्लिंगों के संबंध में पुराणों सबसे अधिक विस्तार से वर्णन हैं। उससे पूर्व के धार्मिक साहित्यों में इसकी स्थापित चर्चा बहुत कम है। ज्योतिर्लिंगों के संबंध में पूर्ण जानकारी पुराणों या उपपुराणों से ही उपलब्ध होता है। यह तो सत्य है कि शिवोपासना का यह शाश्वत प्रतीक पूरे भारत में एक दृष्टि से समादृत होते रहा है।

ज्योतिर्लिंगों की आराधना से संबंधित पौराणिक आख्यान के अनुशीलन से प्रतीत होता है कि पुराणों में इसके महत्व के प्रतिपादन का क्रम ऐतिहासिक तरीके से हुआ है। ऐतिहासिक जीवन के बदलते धरातल पर इसे तथ्य को बहुत ही विशेष तरीके से रखा

गया है। तेजस शक्ति को जीवन में बहुत अधिक महत्व दिया गया है। लिंग के उपासना के बढ़ते हुए प्रभाव को ज्योतिर्लिंगों के आवरण में स्थित कर दिया गया। साथ ही, इससे यह भी स्पष्ट होता है कि बहुत समय तक इन देवालयों में लिंग मूर्त्तियाँ तो थीं, लेकिन उन्हें ज्योतिर्लिंगों के नाम से संबंधित नहीं किया जाता था। वामन एवं पद्मपुराण में शिव के नग्न रूप की गर्हणा की गई है जिसका मुख्य उद्देश्य लिंग पूजा को खास महत्व देना है। इस तरह लिंगपूजा के प्राचीन आख्यान को ज्योतिर्लिंगों के स्वरूप में बदलने का प्रयास किया गया।

इन द्वादश ज्योतिर्लिंगों की स्थापना निश्चत रूप से एक ही समय और एक साथ नहीं हुई है, क्योंकि 8वीं शताब्दी तक के उपलब्ध ऐतिहासिक अभिलेखों में चार–पाँच ज्योतिर्लिंगों के ही उल्लेख मिलते हैं, परंतु इसकी परम्परा का श्रीगणेश आचार्य शंकर के समय से ही हो गया है। इसकी स्थापना में भौगोलिक प्राथमिकता पर वृहत रूप से विचार किया गया है। द्वादश ज्योतिर्लिंगों की स्थापना ही क्यों की गई, यह रहस्य अभी तक अस्पष्ट है। ज्योतिष शास्त्र में द्वादश के साथ ही द्वादश राशि, द्वादश सूर्य व द्वादश चन्द्रमास का समीकरण बैठता है। इसमें ज्योतिर्मय तेजपुंज के समतुल्य के साथ ही द्वादश सूर्य की सार्थकता सटीक बैठती है। वैसे जो भी हो, यह बिल्कुल सत्य है कि इन ज्योतिर्लिंगों की प्रशस्ति के पीछे शैववाद के प्रबलतम उन्नयन का उद्घोष ही छिपा है। शिव ही एक ऐसे देवता माने जाते हैं जो सर्वयुगीन साधना की कसौटी पर खरे उतरते हैं। यहाँ पर यह कहना युक्तिसंगत लगता है कि वैदिक अग्नि रूद्र शिव की एकता का परिवेश भी ज्योतिर्लिंगों में ही अभिकल्पित है। अग्नि से रूद्र की समानता का तात्पर्य यह है कि रूद्र के पार्थिव गुण अग्नि के समान है। ज्योतिर्लिंगों में खास कर अग्नि की ही प्रधानता है। लिंगोद्भव की कथा जिन पुराणों में वर्णित है वहाँ ज्योतिर्पूंज के संबंध में भी वर्णन है। तिरूमल्लय की लिंगमूर्त्ति भी ज्योर्तिपुंज के साथ संबंधित है, जिसे ज्योति पुंज की संज्ञा से विभूषित किया जा सकता है। अतः लिंग पूजा की परम्परा में ज्योतिर्लिंग के महत्व का प्रतिपादन आचार्य शंकर के समय से ही होता रहा है। उन्होंने ज्योतिर्लिंगों की परम्परा में एक नया अध्याय जोड़ने का काम किया है। वस्तुतः ज्योतिर्लिंगों का मुख्य वाहक आज भी अग्नि को ही माना गया है। इसी प्रकार के ज्योतिर्मय लिंग को ज्योतिर्लिंग कहना

समीचीन होगा। जहाँ तक आज तक के प्रचलित लिंग का प्रश्न है, इसे इनके सापेक्षिक महत्व को सामाजिक तथा ऐतिहासिक दृष्टि से देखना होगा। शिव पुराण की ज्ञान संहिता में ज्योतिर्लिंग का विस्तार से वर्णन है। इन ज्योतिर्लिंगों की स्थापना का क्रम श्लोक के अनुसार ग्रहण करने पर इनके उत्स का सांकेतिक स्पष्टीकरण होता है। समुद्र से संबंधित लिंग मूर्ति को शास्त्र में सोमनाथ के नाम से सम्बोधित किया गया है। सोम यहाँ चन्द्रमा का पर्याय है एवं चन्द्रमा का समुद्र से वैज्ञानिक संबंध है। आज भी समुद्र में उठने वाले हरेक ज्वार–भाटे के साथ चन्द्रमा एवं समुद्र से वैज्ञानिक संबंध है। आज भी समुद्र में उठने वाले ज्वार–भाटे के साथ चन्द्रमा को बढ़ते हुए अंश के प्रभाव को देखा जा सकता है। श्री शैल पर्वत पर स्थित लिंग को मल्लिकार्जुन के नाम से जाना जाता है। आज भी उज्जैन को पृथ्वी का केन्द्र माना जाता है, जहाँ सर्वदा काल की गणना होती है। अतः यहाँ प्रतिष्ठित लिंग को महाकाल के नाम से जाना जाता है। अरबी में उज्जिन शब्द का तात्पर्य भी जीरो मेरिडीयन (शून्य अक्षांश) होता है। यहाँ पर वेधशाला थी जहाँ समय की गणना होती थी। यही कारण है कि इसे महाकाल के नाम से जाना जाता है। डाकिनी देश में स्थापित लिंग को भीमशंकर के नाम से जाना जाता है। डाकिनी देश का भावार्थ यहाँ यह है कि यह स्थल जनागम से काफी दूर था। यही कारण है कि यहाँ पर भीमशंकर ज्योतिर्लिंग की उपस्थिति को स्वीकार किया गया है। वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग को चिताभूमि में अवस्थित माना जाना जाता है। परन्तु बम्बई संस्करण के स्तोत्र संकलन में एवं अन्य स्तोत्र संकलनों में यदाकदा ''**परल्यां वैद्यनाथं च**'' की उक्ति मिलती है। यहाँ यदि चिताभूमि को प्रज्जवलित भूमि के अर्थ के रूप में स्वीकार करते है, तब भी इसके समानार्थक भाव ही विकसित होते हैं। शिव पुराण में वर्णित द्वादश ज्योतिर्लिंग स्तोत्र में भी चिताभूमि शब्द का प्रयोग है, न कि परल्याम् का प्रयोग। वैद्यों द्वारा पूजित होने के वजह से ही वैद्यनाथ सम्बोधन की परम्परा प्रारम्भ होती है। वैद्यनाथ का तात्पर्य वैद्यों के स्वामी से भी है अर्थात् ये ऐसे रोगों से लोगों को मुक्ति दिलाते हैं, जिससे वैद्यगण भी छुटकारा नहीं दिला सकते। अभी हाल ही में वैद्यनाथ के अर्थ प्रसंग को इंगित करने के लिए एक नई सामग्री प्राप्त हुई है, जिसका संबंध यहाँ के मंदिर के गर्भगृह के उपरी भाग में स्थित चन्द्रकान्त मणि से है। यहाँ के मंदिर में लगे हुए चन्द्रकात मणि से निरन्तर जलबिन्दु स्रावित होते रहता है, जिससे लिंग विग्रह का निरन्तर अभिषेक होते रहता है। ऐसी मान्यता है कि लिंग विग्रह के

नीरपान से असाध्य रोगों से मुक्ति मिलती है। वैद्यनाथधाम को दन्तकथा के आधार पर बैजु मंदिर से भी जोड़ा जाता है, परन्तु इस संबंध में किसी पुराण या अन्य ग्रन्थों में कोई उल्लेख नहीं मिलता है। औंकार के आकार में स्थित नर्मदा तट की पहाड़ी पर स्थित लिंग को अमरेश्वर जाना जाता है। इसका मतलब है कि औंकार पर वर्तमान लिंग मूर्ति सर्वदा अविनाशी है। औंकार व लिंग विग्रह का संबंध योगशास्त्र के विवेचन से भी संबंधित है। प्रत्येक प्राणी के नाभिमंडल के समीप कुंडलीचक्र में लिंग विग्रह के रूप में जीवात्मा का वास माना जाना जाता है और जब योगी घटचक्र साधन के माध्यम से प्राणवायु को केन्द्रित कर कुंडलीचक्र को उत्प्रेरित करता है, तब उस समय जीवात्मा का संयोग ब्रह्माण्ड में स्थित प्रणव स्वरूप हंसरूपधारी निर्मल ओंकार स्वरूप परमात्मा से होता है। ओंकारेश्वर ज्योतिर्लिंग योगशास्त्र के इसी रहस्य का उद्‌भेदन करता है। समुद्र के बाँध के नजदीक श्रीरामचन्द्र जी द्वारा स्थापित लिंगमूर्ति को रामेश्वर कहा जाता है। इस ज्योतिर्लिंग का संबंध दो युगों के संधिकाल से भी है। जब त्रेतायुग समाप्ति की ओर अग्रसर हो रहा था, उसी समय भगवान श्रीरामचन्द्र जी ने आसुरी शक्ति के विनाश के लिए शिव के इस लिंग विग्रह की उपासना की थी अर्थात् रामेश्वर ज्योतिर्लिंग सदैव एक नये युग–कल्प का प्रतीक है। दारूक नामक राक्षस के वन में स्थित लिंग मूर्ति को नागेश के नाम से जाना जाता है वहीं वाराणसी में संसार के नाथ, विश्वनाथ हैं। वाराणसी को सृष्टि के अव्ययीभाव के रूप में स्वीकार किया जाता रहा है। त्रिमुखी मूर्त्ति गौतमी नदी के तट पे है। हिमालय क्षेत्र में जल से निर्मित लिंग विग्रह को केदारनाथ के नाम से जाना जाता है। प्राचीन समय में हिम के कणों से ही यह मूर्त्ति बनती थी। तपस्विनी घुश्मा के द्वारा पूजित इस लिंग विग्रह को घुश्मेश महादेव कहा जाता है। यह लिंग विग्रह शिवालय (एलोरा) नामक स्थान में है जिसको दक्षिण का कैलास कहा जाता है। इन लिंग विग्रहों की लौकिक व्यापकता का संबंध स्थानीय प्रशस्ति से है, पर इनके विकास में सामाजिक जागरण का भी कम महत्व नहीं रहा है।

इन ज्योतिर्लिंगों की संपूर्ण भारत में मान्यता होने के बाद शैवधर्म की लोकप्रियता के कारण अनेक लिंग विग्रहों की स्थापना प्रारम्भ हुई। महाशय सरवरे ने वीर शैववाद की स्थापना की तथा स्थापना के क्रम में पाँच महापुरूषों की चर्चा की गई है, जिनके नाम हैं–

रेवानाराध्य, ममताराध्य, एकोरामसाध्य, पंडिताराध्य और विश्वाराध्य। इन पाँचो महापुरूषों ने पाँच लिंगों की स्थापना की है, जिनमें से मैसूर के बलेहलि जिले में बेलाही की उज्जयिनी में, केदारनाथ हिमालय में, श्रीशैल मल्लिकार्जुन मद्रास में और काशी में है। इन पाँचों में सभी ज्योतिर्लिंगों के नाम आ जाते हैं जिनमें से कुछ वासव के समय में भी विद्यमान थे। वासव शैवधर्म का उन्नायक के साथ ही लिंगायत सम्प्रदाय का जन्मदाता भी था। इससे यह स्पष्ट होता है कि उस समय ज्योतिर्लिंगों की स्थापना करने की एक सामाजिक चित्तवृत्ति विकसित हो रही थी। विचार करने पर यह बात खुलती है कि द्वादश ज्योतिर्लिंगों की स्थापना भारतीय सामाजिक चेष्टा का ही परिणाम था। यही कारण है कि कुछ ऐसे ज्योतिर्लिंगों का वर्णन प्राचीन संदर्भ में मिलता है, जिनका स्वरूप आज भी अतीत से भिन्न है। ह्वेनसांग के यात्रा वर्णन से यह मालूम होता है कि उसके समय में वाराणसी में 100 फीट ताम्बे का स्तूप के आकार का लिंग था। यह हो सकता है कि वह लिंग ज्योतिर्मय रहा हो, बाद में अनेक आक्रमण और राज्य शासन के परिवर्त्तन के कारण मूल लिंग मूर्त्ति का अभाव हो गया और उनकी जगह पर अन्य लिंग मूर्त्तियों की स्थापना होती रही परम्परा के कारण वे आज भी ज्योतिर्लिंग कहलाते हैं, लेकिन उनमें अब वैसी स्थूल ज्योति नहीं है।[43]

द्वादश ज्योतिर्लिंग के कुछ मंदिरों के साथ द्वन्द्व की सीमा भी बढ़ती गई और एक ही नाम के अनेक ज्योतिर्लिंग के मंदिर बनने लगे। पुराण एवं दन्त कथा की अलौकिकता को भी इनके साथ जोड़ा जाने लगा वहीं सीधी–साधी जनता इस रहस्य को समझने में अपने धर्म का उपयोग नहीं कर सकी। इसके विपरीत भारतीय सहिष्णुता व धार्मिकता की प्रबलता के आलोक में इनके अस्तित्व को स्वीकार कर लिया गया तथा सभी ज्योतिर्लिंगों के मंदिरों को सृष्टि के आदिकाल से ही निर्मित व पूजित माना जाने लगा।

द्वादश ज्योतिर्लिंगों का एक भी ऐसा मंदिर नहीं है, जिसे स्थापत्यकला की दृष्टि से ईसा पूर्व की शताब्दियों का निर्मित कहा जा सकता हैं। इन मंदिरों में ऐसा एक भी लेख प्राप्त नहीं है, जिसे ईसा पूर्व की शताब्दियों का माना जा सके। सभी लेख ईस्वी सन् की चौथी–पाँचवी शताब्दी के बाद के हैं, किन्तु ईस्वी पूर्व के लौकिक संस्कृत साहित्य में तथा

परवर्ती पाँचवी शताब्दी तक के साहित्यों में कुछेक ज्योतिर्लिंगों का उल्लेख है, जैसे – कालिदास, भास, शूद्रक और गुणाड्य की बृहत कथा के प्रसंगों में महाकाल की चर्चा है। बहुप्रचलित सभी पुराणों में ज्योतिर्लिंगों की परिचर्चा नहीं है। परम्परागत इतिहास भी उपलब्ध नहीं है। इनकी स्थापना के लिए सटीक स्थल का भी चयन नहीं किया गया। आदि शंकराचार्य को श्रृंगेरी स्थान बहुत ही प्रिय था। बद्रीधाम भी उन्हें कम प्रिय नहीं था। कांची उनकी मातृवत्सला भूमि थी, किन्तु वहाँ ज्योतिर्लिंग की स्थापना नहीं की गई। अतः इस संबंध में स्थानीय और देशभेद संबंधी कोई समान्तर विचार नहीं थे।

आलोच्य विषय यह है कि शिव का संबंध हिमालय से सर्वाधिक रहा है। यहाँ तक कि इनमें से अधिकांश ज्योतिर्लिंग हिमलाय से ही लाकर अन्यत्र स्थापित किये गये हैं। पुराण भी इसका विशद् विवेचन करता है। वस्तुतः कैलाश पर्वत लिगों का आदिम स्थल है। जब कभी भी शिव का संबंध अलौकिक या लौकिक से जोड़ा गया, कैलाश या हिमालय किसी न किसी रूप में उल्लिखित हुआ। यहाँ तक कि पेरीय पुराण कहता है कि प्रत्यभिज्ञा विचार कैलाश से दक्षिण में आया। इस पुराण की रचना पहली से नौवीं शताब्दी तक मानी जाती है। हिमालय के साथ ल्योतिर्लिंगों की एकवाक्यता के कारण अनेक प्रश्न उठ खड़े होते हैं, जिसका उत्तर आज भी नहीं मिल सका है। एलोरा के विशाल शिव मंदिर को कैलास मंदिर क्यों कहा गया? शिवालय में घुश्मेश की अवतारणा क्यों की गई? हिमालय में शिवालिक पर्वत श्रेणी कहने में क्या तुक है? हिमालय पर्वत ही मात्र एक पर्वत है जो भारत के भौगोलिक, ऐतिहासिक तथा पुरातात्विक शिवांकन में स्थित है। इस देश की पवित्र गंगा जैसे देश के लोगों की काया और मन को निर्मल कर रही है। ठीक इसी प्रकार शिवपूजा के समस्त आयाम से भारतीय जनमानस निरन्तर शिवम् की ओर अग्रसर हो रहा है। इस परिस्थिति में समस्त ज्योतिर्लिंगों के आदि उद्गम के धारक के रूप में इसे मानने में कोई आपत्ति नहीं होगी। देवपाल के मुंगेर दान – अभिलेख में केदार का वर्णन है जो हिमालय की ओर अग्रसर हुए। किसी–किसी रूप में शिव के साथ हिमालय के सामीप्य को ऐतिहासिक संदर्भ में जोड़ने पर श्वेत चमकते इसके विशाल वक्षस्थल का स्मरण होता है। इसे वैद्युत पर्वत कहा जाता है। ज्योतिर्लिंग की अवधारणा का प्रत्यक्ष आलम हिमालय ही

है। लगता है कि ज्योतिर्लिंगों की परम्परा में इस हिमवान का बहुत अधिक योगदान है। ज्योतिर्लिंगों का आदि स्रोत यही पर्वत है।

ज्योतिर्लिंगों के ऐतिहासिक क्रम को धर्मशास्त्रों के अतिरिक्त ढूँढना संभव नहीं है। फाहियान लिखते हैं कि सुदूर जावा में पाँचवीं सदी में पशुपति शिव की महत्ता स्थापित हो गई थी। चम्पा के राजा भी शैव थे। कम्बोज में शैवधर्म की प्रबलता थी। वहाँ पर मृत राजाओं के शव को गाड़कर उस पर शिवलिंग स्थापित करने की परम्परा मिलती है। इन तीर्थों में अनेक शिलालेख आज भी मिलते हैं, जो शिव की प्रशस्ति के व्यवस्थापन के क्रम में यथेष्ट प्रमाण हैं। इन शिलालेखों में अधिकांश शिव से ही संबंधित हैं, किन्तु इनमें कहीं भी ज्योतिर्लिंग की चर्चा नहीं है। इस स्थिति में ज्योतिर्लिंगों को ईसा पूर्व या उसके समकालीन घटनाक्रम में स्थापित करना आलोच्य है।

ज्योतिर्लिंगो के साथ जो सबसे बड़ी परम्परा रही है, उसका मूल संबंध भारतीय सामाजिक चेतना से है। धर्म को धारण करने के अर्थ में ग्रहण किया जाता है। समाज में धर्म की सत्ता व्यक्ति को अनुशासित और सुसंस्कृत करने के लिए मान्य है। धर्म का बहुत बड़ा आधार आचार है। आचार के अंतर्गत ही उपासना और अराधना को महत्व दिया जाता है। भारतीय जीवन में पूजा–पाठ और कर्मकाण्ड का मूल उद्देश्य व्यक्ति के अंदर दिव्यता उत्पन्न करना है। इसलिए यहाँ पर **देवम् भूत्वा देवम् ययेज''** की सामाजिक विचारधारा प्रचलित है। शिवपूजा की परम्परा में आडम्बर का सर्वथा अभाव है। इसे सर्वभारतीय पूजा पद्धति के रूप में स्वीकार किया गया है। इसका संबंध भारतीय सामाजिक जीवन की तुष्टि की अभिव्यक्ति से है। ज्योतिर्लिंगों के आविष्कार के पीछे भी यही रहस्य अनादिकाल से सन्निहित है। लौकिक चिंताधारा ने शिवलिंग की उपासना को ज्योतिर्लिंग के रूप में उद्घोषित कर दिया। जैसी व्यक्ति की उपासना होती है, वैसी ही सफलता मिलती है। इस विश्वास के सम्मोहन के अंतराल में ज्योतिर्लिंग की महत्ता के क्रम में पौराणिक देवताओं और ऋषियों के माध्यम से इसे सामाजिक अभिव्यक्ति दी गई। आज का भारतीय समाज इनकी उपासना में उन्हीं मौलिक भावों के साथ चल रहा है। समस्त देश को एक सूत्र में बांधने की आवश्यकता थी। यह काम सरलतापूर्वक इन ज्योतिर्लिंगों की स्थापना से पूरा

कर लिया गया। हिमालय से कन्या कुमारी तक तथा पश्चिम से पूर्व तक इनकी स्थापना से देश एकसूत्र में बंध सका।

इन द्वादश ज्योतिर्लिंगों को स्थापित करने के पीछे भारतीय राष्ट्रीय एकता तथा हिन्दूधर्म के पुनर्जारण का लक्ष्य केन्द्रित है। आदि शंकराचार्य को शैवधर्म का उद्धारक कहा जाता है क्योंकि वह युग बौद्धों और कापालिकों का था। एक ओर बुद्धम् शरणं गच्छामि तो दूसरी ओर अलख – अलख की रट लगानेवाले कनफटे साधुओं की भीड़ चल रही थी। इस विषम परिस्थिति में शंकराचार्य ने शिवपूजा के परम्परा में इन द्वादश ज्योतिर्लिंगों की आराधना को निर्दिष्ट किया। ऐसे महाकाल, सोमनाथ और केदारनाथ ज्योतिर्लिंग का शिवलिंग के रूप में उल्लेख पूर्व से ही प्राप्त होता है। ज्योतिर्लिंगों की आराधना की कल्पना में आर्य–अनार्य, मिथक को भी समाप्त कर दिया गया। जे.एन. बनर्जी का भी यही मत है कि लिंगपूजा के क्रम में सभी प्रकार के सामाजिक भेदभावों का समापन हो गया। यह भी मान्य तर्क है कि ज्योतिर्लिंगों की उपासना ने लिंग पूजा को अखिल भारतीय मान्यता दी है, क्योंकि इसका प्रत्यक्ष संबंध शिव से है।

पौराणिक धर्म में जब ज्योतिर्लिंग की पूजा का श्रीगणेश हुआ, उस समय नई व्याख्या और नई परिभाषा से सम्पृक्त किया गया। समाज के दार्शनिक चिंतन का एकान्त आश्रय स्थल ज्योतिर्लिंग की उपासना ही बन गई। इससे व्यावहारिक तथा दार्शनिक समाज की परिकल्पना भी हुई। लिंगपूजा को क्रमशः नए रूप में ढालने के लिए ज्योतिर्लिंग की उपासना को सामने लाया गया। इससे वैदिक तथा अवैदिक दोनों ही कथाओं और आराधनाओं का सम्मिश्रण किया गया। इस प्रकार सम्पूर्ण भारत में लिंग पूजा को उदात्त स्थान मिला। आज ज्योतिर्लिंग भारतीय चिंतन का अपरिहार्य अंग है। देश के करोड़ों लोगों की आशा और आकांक्षाओं का यह मूर्त्तिमान रूप है।

ज्योतिर्लिंग की साधना का संबंध अव्यक्त प्रकाश को व्यक्त करने से है। यदि कुंडलिनी शक्ति में वर्त्तमान ज्योतिर्लिंग ही इसका आधार है, तब तो इसे योगशास्त्र के रूढ़ नियमों के आवान्तर में ही प्राप्त करना होगा। इस उपासना में किस बिन्दु तक सामाजिक प्रवृत्ति का पुट था अथवा वैदिक आर्यधर्म की प्रेरणा थी, इसके उत्तर के लिए इतिहास के

उन पृष्ठों को उलटना होगा, जिनकी हस्तलिखित प्रतियाँ भी किसी गुफा और कंदरा में संभवतः सुरक्षित हैं। ल्योतिर्लिंग को लोकजीवन के विश्वास और आध्यात्मिकता के विशुद्ध परिवेश के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। अतीत के अनेक सत्य आज भी साधनों के अभाव में अनुत्तरित हैं।

पूर्वी भारत में देवघर को भारतीय इतिहास का केन्द्र माना जा सकता है, जहाँ एक ही साथ शैव, शाक्त और वैष्णव सम्प्रदाय के उन्नयन के साथ बौद्ध साधना की परम्परा भी पनपती रही। वैदिक साहित्य में इस स्थान की चर्चा नहीं है, किन्तु वेदोत्तर साहित्य में वैद्यनाथ क्षेत्र का उल्लेख है। तांत्रिक और पौराणिक साहित्य में भी इसका वर्णन है। कुब्जिका तंत्र, ज्ञानार्णव तंत्र, तंत्रसार, काली तंत्र, शक्तिसंगम तंत्र और महाकाल संहिता में इस स्थान की प्रशस्ति है। पुराणों में शिव पुराण, पद्म पुराण, ब्रह्मकाण्ड पुराण, मत्स्य पुराण और कालिका पुराण इसे धार्मिक इतिहास की महत्ता से ओतप्रोत करता है। देवी भागवत भी इसके प्रशस्ति ज्ञान को महत्व देता है। वैद्यनाथधाम का ही दूसरा नाम देवघर है। यहाँ द्वादश जयोतिर्लिंगों में से एक वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग है। ज्योतिर्लिंग की उपासना इस देश की सांस्कृतिक उपलब्धि का व्यावहारिक स्वरूप है। अंधकार से प्रकाश की ओर उन्मुख होने की हमारी भावना ही ज्योतिर्लिंगों की प्राप्ति के संकल्प को विकल्प प्रदान करती है। ज्योतिर्लिंग आध्यात्मिक जगत का वर्तुलाकार एक अंगुष्ठ मात्र स्थित ब्रह्म है। भारत के सभी भागों के लोग यहाँ सालोंभर अपनी कामना की गागर को भरने के लिए अजगैवीनाथ (सुलतानगंज) से गंगाजल लेकर वैद्यनाथ की ओर दौड़ते रहते हैं। श्रावण मास में यह शोभा और भी दर्शनीय होती है।

इतिहास की गुहा में देवघर की समस्याएँ आज भी विहँस रही हैं। देवघर के वैद्यनाथ मंदिर के साथ ही इसका इतिहास जुड़ा है। मंदिर की ऐतिहासिकता के संबंध में स्पष्ट प्रमाण देना अभी तक संभव नहीं हो सका है। प्राचीन साधनों के अभाव के कारण आज भी इतिहास रहस्यमय है। देवघर के आस पास कई ऐसे स्थल हैं, जो मूक रहकर भी जनाकर्षण के केन्द्र बने हुए हैं, जैसे– तपोवन, हरिलाजोड़ी, चोलपहाड़ी, नाथबाड़ी, स्वर्ण बिल्व महादेव, नौवत खाना, दाता जंगल, सातर, शिवगंगा, मानसरोवर और वैद्यनाथ मंदिर में अवस्थित चन्द्रकान्त मणि आदि। इन सभी स्थलों का निश्चय ही अपना एक इतिहास है।

किन्तु इन स्थानों के इतिहास की जानकारी के पूर्व देवघर मंदिर का इतिहास जानना आवश्यक है।

वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग के ऐतिहासिक संदर्भ को स्पष्ट करने के लिए इस अध्याय में बंगाल मिथिला और उड़ीसा के ऐतिहासिक संदर्भों को भी प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।देवघर का वैद्यनाथ मंदिर ही वस्तुतः वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग की ऐतिहासिकता की जिज्ञासा है। प्राप्त साधनों से यह पता चलता है कि 8वीं शताब्दी में गुप्तों के अंतिम शासक आदित्यसेन गुप्त जो माधवगुप्त का पुत्र था और मगध का शासक था, इस क्षेत्र पर शासन करता था। वैद्यनाथ मंदिर के अभिलेख से भी इसकी पुष्टि होती है। यह 8वीं शताब्दी में गुप्तों के अंतिम शासक आदित्यसेन गुप्त जो माधवगुप्त का पुत्र था और मगध का शासक था, इस क्षेत्र पर शासन करता था। वैद्यनाथ मंदिर के अभिलेख से भी इसकी पुष्टि होती है। यह 8वीं शताब्दी का लेख है। इस शिला लेख में भ्रमात्मक संकेत भी है, क्योंकि इसमें चोलराजा के रूप में आदित्यसेन का उल्लेख है, किन्तु गुप्त के साथ चोल का तुक नहीं बैठता है। चोल दक्षिण के शासक थे और यहाँ आकर उनके मंदिर बनाने का कोई ऐतिहासिक प्रसंग नहीं मिलता है। इस लेख को ब्लेकमेन ने प्रमाणिक नहीं माना है। इतना माना जा सकता है कि यह मंदिर लेख की ही प्रतिलिपि है। स्वयं अभिलेख में भी ''इति मंदार प्रकरणम्'' लिखा हुआ है। नौवीं शताब्दी में भी इस मंदिर के प्रसंग को विक्रमशील विश्वविद्यालय के बटेश्वर लेख से जोड़ा जा सकता है। बटेश्वर लेख में वैद्यनाथ की चर्चा है। इससे पता चलता है कि वैद्यनाथ मंदिर का प्रत्यक्ष संबंध विक्रमशील विश्वविद्यालय के साथ था और इसके निकट के देवगृहों में वर्तमान अभिलेख से इसकी पुष्टि होती है। इससे यह भी संकेत मिलता है कि वैद्यनाथ मंदिर में बौद्धों का वर्चस्व भी था। अभी भी मंदिर के परिसर में अवसिति देवालयों में कई बौद्ध मूर्त्तियाँ विद्यमान हैं, जिन्हें कालभैरव, कार्तिकेय और सूर्य की प्रतिभा के रूप में पूजा जाता है, किन्तु प्राचीन सूर्य की मूर्ति अब नहीं है। इसके बाद एक लम्बे अंतराल तक देवघर का इतिहास मौन हो जाता है और पालों के शासन में 11वीं शताब्दी के लगभग देवघर की समृद्धि का इतिहास मिलता है। रमापाल देव के शासन सीमा के अधीन यह क्षेत्र था और सैनिक छावनी के रूप में इसका उपयोग होता था। रमापाल के पश्चात् लालीसूर भी इसका शासक रहा है, किन्तु

संध्याकर नन्दी ने देवघर क्षेत्र को अपर मंदार के नाम से संबोधित किया है। आर.के. चौधरी भी ऐसा मानते हैं। भी.एन. बसु भी ऐसा मानते हैं कि 11वीं शताब्दी में देवघर का शासक लक्ष्मण सूर था। इस प्रसंग में यह भी कहा जा सकता है कि छोटे–छोटे पाल शासकों ने प्रतिहारों और कलचुरियों को पराजित किया था। कुछ समय पूर्व प्रतिहारों और कलचुरियों का इधर आक्रमण होने लगा था, किन्तु रमापाल के सामन्तों ने इन उपद्रवों को शांत किया था।

मुगलकालीन शासन परम्परा में देवघर अपने स्वर्णयुग में पहुँचा गया था, क्योंकि चन्देल राजा महाराजा गिद्धौर के इष्टदेव के रूप में वैद्यनाथ की आराधना होने लगी थी। वैद्यनाथ मंदिर के वर्त्तमान तत्कालीन प्रधान तीर्थ पुरोहित के लेख से ज्ञात होता है कि प्रधान तीर्थ पुरोहित रघुनाथ ने इसका निर्माण कराया। ये दोनों ही बातें परस्पर विरोधी होने के कारण ऐतिहासिक दृष्टि से यह निर्णय प्राप्त होता है कि पूरनमल ने इस मंदिर का जीर्णोद्धार कराया होगा। यदुनाथ सरकार ने शाहजहाँ कालीन भारत में इसे झारखण्ड के नाम से संबोधित किया है। इसके पूर्व इस क्षेत्र का नाम दामिनेकोह (पहाड़ों से घिरा हुआ) था। इसके बाद के सभी प्रामाणिक दस्तावेजों में देवघर का नाम आता है।

बैद्यनाथ मंदिर को लेकर महाराजा गिद्धौर और वीरभूमि नवाब के बीच द्वन्द्व चलता रहा। वीरभूम के नवाब इसद् जमा खाँ ने 1760 ई0 के अंतराल में इस भू – भाग पर आक्रमण कर इसे अपने अधीन कर लिया था। इस समय गिद्धौर के राजा श्याम सिंह थे। जिन्हें भागना पड़ा था। लेकिन पीछे फिर गिद्धोर के राजा विजयी रहे और उनकी अमलदारी व्यवस्था किसी न किसी रूप में चलती रही।[44]फाइनल रिपोर्ट ऑन दि सर्वे एण्ड सेट्लमेन्ट ऑपरेशन्स इन दि डिस्ट्रिक्ट ऑफ वीरभूम 1925–32 (डी.एल.आर. पृ0 – 109–110) से ज्ञात होता है कि देवघर अंचल में ये लोग तहसील वसूल करते थे। विशेषकर वीरभूमि का नबाब जुमा खां 1/3 भूमि का अंश प्राप्त करता था। और इस भूभाग की रक्षा का भार भी नगर राज्य पर था। उन्होंने असदुल्लाह खां को निष्करष (कर सहित) दान दिया था। पीछे जमीन को नबाब कासीम अली ने प्राप्त कर लिया। इस संबंध में सनद भी मिलता है, जिससे ज्ञात होता है कि घाटवालों से भी वीरभूम के नवाब तहसील

करते थे। स्पष्ट है कि 1818 ई0 तक देवघर का क्षेत्र वीरभूमि के अधीन ही था और वीरभूम के नवाब ही यहाँ के शासक थे।

वस्तुतः वीरभूम नवाब के बाद ही देवघर के शासकीय ढ़ांचे में अंग्रेजों का वर्चस्व स्थापित हो जाता है। अंग्रेजों के आगमन के बाद भी देवघर भी इस्ट इंडिया कम्पनी के अधिकार क्षेत्र में स्वतः चला गया। 1772 ई0 में कैप्टन बुक ने इसे जंगलतरी प्रशासन के अंतर्गत अधिशासित किया। जॉन पेटी ने टर्नर की सहायता से 1833 से 37 ई0 में इस क्षेत्र को सीमांकित किया है। पोटेन्ट इस क्षेत्र के राजस्व शासक बने। इनका मुख्य उद्देश्य था संतालों को जंगल कानून में प्रोत्साहन देना। देवघर के इतिहास में एक बात ध्यान देने योग्य है कि इसका प्रशासन 1814 ई0 में तप्पासारउ के अधीन था। इसमें दुमका और जामताड़ा का भी प्रशासकीय हिस्सा था। इसके अधीन घाटवाल लोग राजस्व वसूलने का कार्य करते थे। कहा जाता है कि मराठों की सेना 1754 ई0 में इधर आयी थी। उस समय भी यह राजस्व साधन का केन्द्र था।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में देवघर को अंग्रेजी शासन की सुविधा 1855–57 ई0 के संताल विद्रोह के बाद ही प्राप्त होती है। इसी समय देवघर में दण्डाधिकारी भी रहने लगे थे। 1882 ई0 में आर. मित्रा ने देवघर को नया नाम कहा है। इसका प्राचीन नाम तो वैद्यनाथधाम है। 1883 ई0 में वैद्यनाथधाम रेलवे स्टेशन बना। 1865 ई0 के बंगाल पुलिस ऐक्ट के बाद इस पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। 1787 ई0 से ही इस मंदिर तथा इस नगर पर अंग्रेजी शासन की दृष्टि पड़ी थी और इसी समय हैसलरीज नामक अंग्रेज पदाधिकारी सर्वप्रथम देवघर आया। 1791 ई0 में वैद्यनाथ मंदिर के प्रधान पुरोहित की परम्परा को वंशक्रम से निश्चित कर दिया गया, उस समय से यह व्यवस्था चली जा रही है।

इन सभी ऐतिहासिक संदर्भों को जानने के बाद यह स्पष्ट होता है कि वैद्यनाथ मंदिर के निर्माताओं में महाराज गिद्धौर का नाम किसी–न–किसी रूप में अवश्य जुड़ा है। ऐतिहासिक साक्ष्य इसे विक्रमशील विश्वविद्यालय के स्थापना काल में स्थापित करता है। डी.सी. सरकार का यही मत है। उन्होंने सयाना स्ओन स्लेब अभिलेख के आधार पर इसे

प्रमाणित किया है। स्पष्ट है कि बटेश्वर मंदिर में जो शिलालेख है, उसमें वैद्यनाथ मंदिर की भी चर्चा है और यह शिला लेख 9वीं सदी का है। स्पष्ट है कि वैद्यनाथ मंदिर भारत के वर्तमान सभी मंदिरों से प्राचीन है।

इस मंदिर का स्थल पूर्णतः देशीय है। इसे नागर शैली के मंदिर के रूप में स्वीकार किया जाता है। जब वैद्यनाथ मंदिर की स्थापत्य कला के प्रसंग को ऐतिहासिक धरातल में देखते हैं तो बंग प्रदेश की गौरवमयी परम्परा को पीछे नहीं छोड़ सकते हैं। आर्यश्री मंजूकल्प में गौड़, मगध, मिथिला, अंग–बंग, सुखराढ़, कलिंग और कामरूप को गौड़ चक्र के अंतर्गत ही ग्रहण किया जाता है। वैद्यनाथधाम भी गौड़ शासन की सीमा से बाहर नहीं था। वैद्यनाथधाम के मंदिर स्थापत्य कला की मिथिला की मंदिर कला की व्याख्या से पूर्व बंगाल की स्थापत्य कला से अधिक शामिल है, जिसकों वीर भूमि के मंदिरों के अध्ययन से प्रमाणित किया जा सकता है।

जहाँ तक बंगाल के शैवधर्म और स्थापत्य के विकास का प्रश्न है, वैद्यनाथधाम का स्थापत्य इसका अनुवर्त्ती है। किसी अन्य स्थानों के मंदिरों का स्थापत्य वर्तमान वैद्यनाथ मंदिर से सामीप्य नहीं रखता है। पहाड़पुर के फलकों पर वास्तुलिंग, मुखलिंग और चन्द्रशेखर विश्व की प्रतिमा उत्कीर्ण है, किन्तु शैव मंदिरों का वैसा रूप नहीं मिलता है, जैसा की देवघर में है। यह सत्य है कि बंगाल के प्राचीन काल में जो मूर्त्तियाँ बनती थीं, वे राजमहल के पर्वतश्रृंग के प्रस्तर से निर्मित होती थी। डॉ0 नीहार रंजन राय ने लिखा है कि संपन्न एवं समृद्ध लोग ही इस प्रकार के मंदिरों का निर्माण करते थे। राजमहल और छोटानागपुर के प्रस्तरों से ही जैन, बौद्ध एवं ब्राह्मण देवी–देवताओं की मूर्त्तियाँ बनायी जाती थीं। इन प्रस्तर खण्डों से ही सभी देव विग्रह बने हुए है। वैद्यनाथ मंदिर के सभी देव–विग्रह राजमहल पहाड़ी के प्रस्तर खण्डों से ही सभी देव विग्रह बने हुए है।केवल संध्या मंदिर के विग्रह को निम्न प्रस्तर से निर्मित माना जा सकता है, किन्तु यदि संध्या को नील सरस्वती से संबंधित करते हैं तो यह बौद्ध कालीन प्रतिमा है और देवघर से राजमहल निकटस्थ होने के कारण प्रस्तर खण्ड भी वहीं का है। वैद्यनाथ मंदिर के स्थापत्य को कलातीत नहीं माना जा सकता है। इस मंदिर का स्थापत्य अनन्त काल प्रवाह को अतिक्रमित कर आज भी हमारे बीच विद्यमान है। फिर भी बंगाल के विकसित मेहरावदार

मंदिर के समान इसका निर्माण नहीं हुआ है। पूर्वी भारत के आंचलिक स्थापत्य का यह परिणाम है। 11वीं शताब्दी तक आते–आते पूर्वांचल की स्थापत्य कला में आंचलिकता को प्रमुखता प्राप्त होने लगा। विशेष कर पालवंश के शासन में मंदिर और देवगृह के स्थापत्य में एक व्यापक प्रयोग हुआ है जो मुसलमानों के आने के पूर्व तक जारी था। वैद्यनाथ मंदिर की स्थापत्य कला का निर्माण 750 ई0 – 1250 ई0 के अंतराल में हुआ है। क्योंकि इस अवधि में स्थापत्य कला का विकास बंगाल में पूर्णतः हो चुका था। यह शिखर मंदिर की श्रेणी का मंदिर है। इस प्रकार के मंदिरों में पिरामिड के आकार के स्तुप होते हैं और पूर्वांचल में ऐसे बहुत से मंदिर हैं। कुछ लोग इसे शिखर मंदिर कहते हैं। इसी रीति के मंदिर में गर्भगृह का महत्व रहता है। मंदिर का आकार शिखराकृति का होता है। इस प्रकार के मंदिरों का निर्माण उड़ीसा में भी हुआ। भुवनेश्वर के लिंगराज मंदिर के समीप कई मंदिर हैं, जिनका निर्माण इसी शैली से हुआ है। आर. एल. मित्रा भी इसे स्वीकार करते हैं। वीरभूमि और वर्द्धमान जिलों में प्राप्त शिव मंदिरों में भी इसी शैली के रूप को देखा जा सकता है। इस प्रकार के स्थापत्य में मंदिर प्रस्तर का बना होता है। गर्भ गृह उपर की ओर संकीर्ण होता जाता है और ऊपर बृहद आमलक शिला विद्यमान रहती है। शिखर की रेखाएँ सरलता से नियंत्रित रहती हैं। भुवनेश्वर में स्थित परशुराम के मंदिर को भी उसी शैली का माना जाता है। यह 8वीं शताब्दी का मंदिर है। ओ. मेले ने स्वीकार किया है कि वैद्यनाथ मंदिर का स्थापत्य भुवनेश्वर के मंदिरों में मिलता है।

कुछ लोग वैद्यनाथ मंदिर के स्थापत्य को मिथिला की मंदिर निर्माण कला से जोड़ते हैं। स्फूनर ने तिरहुत प्रकार की मंदिर शैली को सबसे प्राचीन माना है और उत्तर भारत में विकसित स्थापत्य कला को इससे प्रभावित कहा है। यह सत्य है कि बंगाल के पालवंशीय राजाओं ने मिथिला के उपर शासन स्थापित किया था। विशेषकर पालवंश के रमापाल ने राजा भीम से 11वीं शताब्दी में मिथिला को हस्तगत कर लिया था। भीम कैवर्त्त वंश का राजा था और उसका शासन बंगाल तक था। मिथिला और बंगाल की प्रशासकीय प्रासंगिकता को स्वीकार किया जा सकता है। ज्योतिरीश्वर के वर्ण रत्नाकर में भी 9वीं शताब्दी के तिरहुत प्रकार के स्थापत्य का वर्णन मिलता है।

मिथिला और बंगाल के परस्पर संबंध को स्थापत्य की दृष्टि से संबंधित माना जा सकता है। यदि तिरहुत प्रकार की शैली प्राचीन है तो निश्चय ही वैद्यनाथ मंदिर भी उस स्थापत्य से प्रभावित रहा होगा। मिथिला में पूर्वाभिमुख मंदिर बनाने का परम्परा थी। वैद्यनाथ मंदिर भी पूर्वाभिमुख है। वाराणसी का विश्वनाथ मंदिर भी प्राचीन समय में पूर्वाभिमुख ही था और प्राचीन काल के विश्वनाथ मंदिर की तुलना वर्त्तमान वैद्यनाथ मंदिर से की जा सकती है। राजेन्द्र लाल मित्रा ने बनारस के मंदिरों के प्रसंग में जिन दो मंदिरों का उल्लेख किया है, उनमें प्रथम प्रकार का मंदिर वैद्यनाथ मंदिर के समान था। यह एक चतुष्कोणात्मक मंदिर है और इस दृष्टि से इसका संबंध मिथिला के मंदिरों से सहज ही हो जाता है। यद्यपि मित्रा ने इसे भुवनेश्वर प्रकार के मंदिरों की श्रेणी में रखा है। आठवीं शताब्दी में वाचस्पति मिश्र ने भी पूर्वाभिमुख मंदिर की व्यवस्था दी है और वैद्यनाथ मंदिर भी पूर्वाभिमुख ही है। अतः मिथिला के मंदिर निर्माण कला से भी इसे संबंधित किया जा सकता है, किन्तु रूद्रयामल तंत्र में शिव की उपासना पूर्वाभिमुख होकर करना निषिद्ध है और पश्चिम मुँह होकर शक्ति की उपासना करना निषिद्ध है। स्पष्ट है कि इन प्रसंगों की धार्मिकता का संबंध भी इस मंदिर स्थापत्य से है। वाचस्पति मिश्र ने यह भी लिखा है कि प्रातः कालीन प्रार्थना पूर्वाभिमुख होकर करना निषिद्ध है और पश्चिम मुँह होकर शक्ति की उपासना करना निषिद्ध है। स्पष्ट है कि इन प्रसंगों की धार्मिकता का संबंध भी इस मंदिर स्थापत्य से है। वाचस्पति मिश्र ने यह भी लिखा है कि प्रातः कालीन प्राथना पूर्वाभिमुख होकर ही करनी चाहिए। ऐसा लगता है कि वैद्यनाथ मंदिर की निर्माण कला में मिथिला की शैली का प्रभाव कम रहा है और बंगाल की मंदिर निर्माण कला का ही अधिक प्रभाव है, प्राचीन काल में उड़ीसा, बंगाल, बिहार के प्रदेश एवं असम आदि भूभाग बंगाल के मंदिर निर्माण के स्थापत्य का यह प्रभाव हो रहा हो। तिरहुत प्रकार की शैली हो तो बंगाल और उड़ीसा के सुदूर सीमान्तों तक पहुँच गयी थी।

आज भी वीरभूम अंचल में जो प्राचीन काल के मंदिर अवशेष मिलते हैं उनसे वैद्यनाथ मंदिर के स्थापत्य की तुलना की जा सकती है। चतुष्कोणात्मक शिखर वाला मंदिर संभवतः परवर्ती काल की देन है। वैद्यनाथ मंदिर भी एक ही योजना के अंतर्गत निर्मित है।

संभवतः इस मंदिर के निर्माण में एक ही प्रस्तरों का उपयोग किया गया है और शिवलिंग भी एक ही पत्थर का है।

गिद्धौर राज का मंदिर से बहुत गहरा संबध रहा है। इस संबंध में ऐसी सामग्री प्राप्त हुई है जिससे यह प्रमाणित होता है कि इस मंदिर का निर्माण पूरन सिंह ने कराया है।[45] उन्होंने 12 लाख पत्थर की ईंटें धमाधमा पहाड़ी से मंगवायी थी और विध्यांचल, त्रिकुटाचल और श्वेताचल से पत्थर मँगाया था। पत्थर की ईंटों की इतनी संख्या थी कि उसकी गिनती नहीं की जा सकती है। इसके लिए उन्होंने बनारस से सात शिल्पियों को मंगाया था, जिनमें प्रधान शिल्पी का नाम हरलाल था। इस तरह से कुशल कारीगरों ने वैद्यनाथ मंदिरों का निर्माण किया था। इस प्रकार का वर्णन गिद्धौर राज की हस्तलिखित इतिवृति मदनमाधवी में है। उस समय रघुनाथ ओझा यहाँ के प्रधान तीर्थपुरोहित थे और उन्होंने मंदिर के द्वार पर एक कविता भी खुदवाई थी। रावणेश्वर प्रसाद सिंह और उमेशानन्द ओझा के बीच हुए फेसले में भी इसका उल्लेख है। एस.के. बोस, कमिश्नर संताल परगना ने इस फेसले पर हस्ताक्षर किया है, किन्तु इतिहासकार इस वर्णन को ऐतिहासिक दृष्टि से प्रमाण नहीं मानते हैं। वैद्यनाथ मंदिर के स्थापत्य की तुलना अधिकांश वीरभूमि के छोटे–छोटे शिव मंदिरों से की जा सकती है। वैद्यनाथ मंदिर के स्थापत्य के संबंध में आवश्यक है। बोलपुर (पश्चिम बंगाल) से तीन मील पूर्वोत्तर में सियान ग्राम है, जहाँ पर विभाण्डक ऋषि के आश्रम का अवशेष विद्यमान है। यहाँ प्राप्त जनुश्रति के अनुसार अंगराज लोमपाद विभाण्डक ऋषि के आश्रम का अवशेष विद्यमान है। यहाँ प्राप्त जनुश्रति के अनुसार अंगराज लोमपाद विभाण्डक के पुत्र को छल से अपनी राजधानी में ले आये थे और उनकी कन्या से विवाह कराया था, किन्तु मुनि ने उस आश्रम का परित्याग कर दिया और भाण्डिर वन में नवीन आश्रम का निर्माण करा दिया। वहीं तपस्या करने लगे। इसे भाण्डिर वन के नाम से पुकारा जाता है। यहाँ पर भाण्डेश्वर शिव का मंदिर है जिसकी बनावट को देखने से वैद्यनाथ मंदिर के प्राचीन स्वरूप का बोध होता है। स्पष्ट है कि उन दिनों बंगाल के मंदिर स्थापत्य का विकास हो चुका था। इस मंदिर का निर्माण राजा रूद्रचरण ने 12वीं शताब्दी में करवाया था। इसी प्रकार खड़गादित्य की भी चर्चा आती है

और खड़गेश्वर शिव मंदिर भी वहाँ पर विद्यमान है। ये सभी मंदिर समकालीन ही हैं। इससे प्रमाणित होता है कि बंगाल के मंदिर स्थापत्य का व्यापक प्रभाव इस मंदिर पर था। प्राचीन काल में वीरभूमि का नाम नारीखण्ड था और वैद्यनाथ मंदिर के संबंध में यह भी कहा जाता है कि ''**नारी खण्डेतु वैद्यनाथम्**'' अर्थात् नारीखण्ड (वीरभूमि) में वैद्यनाथ है। इस परिस्थिति में राजा वीर सिंह के शासनकाल से ही यहाँ मंदिर स्थापत्य का विकास हुआ। वीरभूमि का एक नाम काम कोटि भी है, जिसे कामना लिंग वैद्यनाथ के प्रसंग में स्वीकार किया जा सकता है। इस प्रकार का मन्तव्य उद्यन्त महेश्वर की कुलपंजिका में भी वर्णित है। प्रतीत होता है कि वैद्यनाथ मंदिर के स्थापत्य का निर्माण उन्हीं हिन्दू राजाओं की देन है।

जहाँ तक बंगाल के मंदिर स्थापत्य का प्रश्न है, वैद्यनाथ मंदिर इसी सीमा के अंतर्गत है। फिर कोई कारण नहीं है कि बंगाल के मंदिर स्थापत्य से इसे भिन्न माना जाय। धार्मिक दृष्टि से रावण युग से ही यह मंदिर विनिर्मित है। रावण युग में भी यहाँ शिवपूजा के पूर्व द्वार पूजा की परम्परा थी–

ततस्यतु पूजार्थमुपविष्टम् शुभासने

अर्चयित्वा तु ते सूर्य बारपूजा विधाय च।

इस श्लोक से यह स्पष्ट होता है कि रावण के समय में भी यहाँ मंदिर था और द्वार पूजा की शास्त्रीय परम्परा प्रचलित थी। इतना ही नहीं, भगवान रामचन्द्र अपने भाइयों के साथ इस मंदिर में आये थे और इन्होंने यहाँ पर पूजा अर्चना की थी–

मंदिरे रामभद्रस्तु सन्जाताया भ्रातृभिः

बल्लभेः प्रमुखेर्देव बारम्बार यथाविधिः

इससे यह प्रमाणित होता है कि उस समय यहाँ पर मंदिर था, किन्तु मंदिर के आकार – प्रकार की चर्चा नही है। रावण ने यहाँ पर अनेक मंदिरों की स्थापना की, ऐसा भी धार्मिक उल्लेख है। किन्तु वास्तुशास्त्र की दृष्टि से धार्मिक इतिवृत्त को ऐतिहासिक

सीमा में अंकित नहीं किया जा सकता है। फिर भी यह कहा जा सकता है कि यह एक प्राचीनतम मंदिर है और पूर्णतः देशीय स्थापत्य का नमूना है। राजेन्द्र लाल मित्रा ने इस संबंध में लिखा है :–

''ए प्लेस ऑफ ग्रेट सेंकटिटी हाइली इयोलोजाइड इन दि पुराणाज एण्ड स्ट्रॉंगली रिकोमेन्डेड एज ए प्लेस ऑफ पिल्ग्रिमेज कुडनॉट हैव रिमेन्ड इन दि फार्म ऑफ स्टम्प ऑफ फोर इन्चेज ऑन दि वेयर अर्थ इन ऑन ओपेन फिल्ड फर्स्ट सेंच्युरिज विदआउट ए कभरिंग ड्युरिंग दि हिन्दू पिरियड ऑफ्टर दि डाउन फॉल ऑफ बुद्धिज्म ए सम पिल्ग्रिम्स और अदर वुड हैव सून प्रोमाइडेड इट विथ ए टेम्पुल।''[46]

मित्रा के इस कथन से स्पष्ट होता है कि यह मंदिर बहुत ही प्राचीन है और हिन्दू शास्त्रों और पुराणों के आधार पर निर्मित इस मंदिर का पुनर्निर्माण भी हुआ होगा, इसमें कोई संदेह नहीं है। इस मंदिर के निर्माण को एक सुन्दरतम देशीय कलात्मक अभिव्यक्ति के रूप में ग्रहण किया जा सकता है। वस्तुतः यह देशीय स्थापत्य का अपूर्व उदाहरण है।

400 वर्षों तक बंगाल के विभिन्न शासक वर्गो का नियंत्रण इस भूभाग पर रहा है। यह स्थिति मुस्लिम शासन के आने तक बनी रही। जो भी हो, पालों का गौरव धीरे–धीरे तिरोहित होता गया और धर्मपाल, देवपाल और रमापाल ने जिस विशाल साम्राज्य की स्थापना की थी, वह साम्राज्य – तंत्र अधिक दिनों तक स्थिर नहीं रह सका। सेनवंश के शासकों ने भी कुछ दिनों तक बंगाल के इतिहास में अपना गौरवपूर्ण हस्ताक्षर किया, किन्तु 14वीं शताब्दी में यह साम्राज्यवाद पूर्णतः इस्लाम के आगे नतमस्तक हो गया। इसके बाद भी यह कहा जा सकता है कि लिपि, भाषा और भौगोलिक परिवेश की विशिष्टता के कारण बंगाल की एक विराट संस्कृति निर्मित हो चुकी थी जिसने देवघर सहित समस्त पूर्वांचल को प्रभावित किया। धर्ममाल, देवपाल, रमापाल और महिपाल ने साम्राज्य का विस्तार अवश्य किया और नालन्दा, विक्रमशील, उदन्तपुरी एवं सारनाथ के बौद्ध विहारों तक उनकी कीर्ति – पताका फहराती रही। पालों ने समस्त भारतीय इतिहास में सांस्कृतिक बोध की एक नवीन चिंताधारा स्थापित की।

देवघर की प्राकृतिक अवस्थिति उस समय भी जंगलों से आवृत्त थी। बल्लाल चरित से यह ज्ञात होता है कि बंगाल के शासक मगध और मिथिला तक फेले हुए थे। बल्लाल सेन के समय में ही बंगराढ़, वारेन्द्रीय और मिथिला के सेनवंश का शासन था और जब इतने बड़े भू–भाग पर शासन का विस्तार हो गया था तो झारखण्ड के इस प्रदेश पर उनके शासन के विस्तार की चर्चा सही है। लक्ष्मण सूर ने काशीराज तक को पराजित किया था। देवघर और वाराणसी का शिवलिंग के क्षेत्र में समान रूप से महत्व है। द्वादश ज्योतिर्लिंग की परम्परा में वाराणसी के विश्वनाथ के बाद चिताभूमि में अवस्थित वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग को ही महत्व दिया जाता है। इससे यह प्रतीत होता है कि इन लोगों का शासन यहाँ भी था। 1206 ई0 में तुर्कों का आक्रमण बंग प्रदेश पर प्रारम्भ हुआ। बख्तियार खिल्जी ने केवल 18 सौनिकों को लेकर बंगाल फतह कर लिया था, किन्तु बात यहाँ जँचती नहीं है कि केवल 18 सौनिक ही उनके साथ थे। इसने बंगाल विजय के बाद विक्रमशील को भी ध्वंस किया था। इसके बाद काशी, कलिंग और कामरूप पर विजय प्राप्त की थी। इस विषय की पुष्टि मिन्हाज के वर्णन से भी होती है किन्तु वैज्ञानिक चिन्तन के आधार पर यह बात आज भी जँचती नहीं है। प्रो. राधाकृष्ण चौधरी ने लिखा है कि विक्रमशील का विनाश भिक्षुओं के आपसी संघर्ष से हुआ था। संतालपरगना में बख्तियार खिल्जी को प्रतिरोध का सामना भी करना पड़ा था। विशेष कर राजमहल के नजदीक तेलियागढ़ी में संघर्ष हुआ था, क्योंकि दक्षिण बिहार से बंगाल में प्रवेश करने का यही एक मार्ग था और देवघर भी तेलियागढ़ी से नजदीक है। यहाँ पर हो रही सभी घटनाओं का प्रभाव देवघर पर भी पड़ रहा था। वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में विभिन्न श्रेणियों के लोग तीर्थ यात्री के रूप में आया करते थे। इन आनेवाले यात्रियों में बंगालियों की संख्या अधिक होती थी, क्योंकि उस समय बंगाल के लोगों के लिए यही एकमात्र आश्रय स्थल था। अंग्रेजों के शासन के समय से ही देवघर का भू–भाग ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधीन हो गया था और प्रशासन एवं अन्य सभी मामले में यह वीरभूम शासकों के हाथ में था। ऐसा कहा जा सकता है कि वीरभूम हिन्दू अधिकार में भी देवघर का क्षेत्र प्रत्यक्षतः बंगाल के अधीन था। ऐसे चौदह राजाओं का वर्णन आता है, जिनके राजस्व काल में वीरभूम का शासन तंत्र देवघर तक फैला हुआ था। राजनगर उसकी राजधानी थी जिसे नगर राज्य के रूप में जाना जाता है। राजा वीरसेन नगर राज्य का शासक था और नगर राज्य के

शासकों को यहाँ से कर्ज भी मिलता रहा जिसकी चर्चा की जा चुकी है। वीरभूम से संबंध में यह कहा जाता है कि यहाँ के शासक बड़े ही आत्माभिमानी और कुशल थे और इनकी राजस्व संबंधी व्यवस्था भी प्रत्येक परगना में अच्छी थी। प्रत्येक परगना में एक कानूनगो की नियुक्ति की गई थी। मुर्शीद कुली खां जिस समय बंगाल में आया था, उस समय अनाज और राजस्व का विवाद चल रहा था, किन्तु उस समय वीरभूम में पठानों के जागीरदार वंश के असादल्लाह खां केवल निर्दिष्ट कर देने के पक्ष में था। उसकी जमींदारी में अधिक आमदनी नहीं थी। स्पष्ट है कि उसके कर्मचारियों में कोई विशेष उत्साह नहीं था और निरंतर बाहरी आक्रमण होता था। उस समय वीरभूम के जमींदार वादीउल जमा खां (1718) थे। मुर्शीद कुली खां से वीरभूमि अंचल की रक्षा के लिए इन्होंने सनद प्राप्त किया था। इस समय नवाब सरकार की नई व्यवस्था के अनुसार उन्हें वार्षिक तीन लाख छियालीस हजार टाका राज कर के रूप में देना था, किन्तु उन्होंने जमींदारी की आय के 18 लाख टाका धर्म और शिक्षा विस्तार के क्षेत्र में व्यय कर दिया था और सरकार के राजस्व देने की क्षमता समाप्त हो गयी थी। वादीउल जमां खां नवाब की अधीनता स्वीकार करना नहीं चाहते थे। नवाब ने सरफराज को उसके विरूद्ध भेजा था। पीछे उसकी अधीनता स्वीकार कर सन् 1737 ई0 में उसका पुत्र वादीउल जमां खां शासक बना और उसने भी देवघर भू–भाग पर अधिकार कर लिया था। 1761 ई0 तक ईस्ट इंण्डिया कम्पनी का वर्चस्व इस भू–भाग पर स्थापित हो गया था और मंदिर की आमदनी से भी 10–6 आना का राजस्व प्राप्त करता था। इससे यह प्रमाणित होता है कि देवघर के अंचल पर बंगाल के शासकों का वर्चस्व और हो सकता है कि इन्हीं छोटे–छोटे सामंतों और नवाबों ने बैद्यनाथ मंदिर के निर्माण में सहयोग दिया हो।

देवघर को वीरभूमि से संबंधित तो मानते ही हैं, किन्तु जनश्रुति के आधार पर यहाँ पर एक कथा प्रचलित है कि नवाब अलीवर्दी खां ने 1741 से 46 तक मुर्शीदाबाद के नवाब के रूप में पद ग्रहण किया और पन्द्रह वर्षों तक इस पद पर बना रहा। इस समय महाराष्ट्र और बर्गी लोगों के द्वारा बंगाल में चौथ वसूलने का अभियान प्रारंभ हुआ था और यह अभियान 1742 – 62 ई. तक चला। अलीवर्दी खां ने इसका विरोध किया था। बर्गी लोग देवघर अंचल में भी आये थे। यहाँ पर उस समय से ही यह लोक गीत प्रसिद्ध है :–

''छेले घुसालो पाला जुड़ालो

बर्गी एलो देशे

बुल बुलितो धान खेये छे

खाजना दिबो किसे

धान फरालो पान फुरालो

खाजनार उपाय की

आर ऐक बछर सबुर कर

रासो बुनेछि ।''

उपर्युक्त पंक्तियों से यह ज्ञात होत है कि बर्गियों का बड़ा ही भयावह आक्रमण बंगाल के ग्रामीण अंचलों पर था और देवघर तक उनका विस्तार हो गया था। 1742 ई0 में रघुजी भोंसले और बालाजी बाजीराव ने पेशवा पद प्राप्त करने के लिए प्रयास किया था और इन दोनों के बीच भयंकर प्रतिद्वन्द्विता छिड़ गयी थी। रघुजी भोंसले के सेनापति भास्कर पंडित ने चालीस हजार बर्गी सेना को लेकर बंगाल में चौथ वसूल करने के लिए अभियान छेड़ा था। मराठों की सैनिक छावनी तप्पासारठ में थी और देवघर में भी उसकी शाखा थी और बलपूर्वक चौथ वसूलने का अभियान चल रहा था। अलीवर्दी ने इसे किसी भी तरह से दबाया, किन्तु देवघर के प्रत्येक घर में उस समय बर्गी आसछै बर्गी आसछे'' की उक्ति प्रचलित हो गई। कुछ दिनों के लिए यह संकट की घड़ी थी। इसके बाद राजनीतिक परिवेश परिवर्त्तित हो गया। कहा जाता है कि कि 1745 में कनुआ ग्राम (पं0 बंगाल) के पास बर्गियों की सैनिक शक्ति क्षीण हो गयी थी और यहीं उनकी विजय यात्रा समाप्त हो गयी और इसी स्थान को केन्द्र बनाकर ये चारों ओर फैल गये थे। किन्तु बर्गियों के निष्ठुर एवं निर्मल अत्याचार से समस्त क्षेत्र उत्पीड़ित हो गया था। लोग घरों से भाग कर जहाँ–तहाँ जा रहे थे, जिस समय नलहट्टी, बोलपुर, सुपुर राजनार, सिउढ़ी, रानीगंज, रायपुर, कचुजोड़ और सात किन्दूरी प्रभृति स्थानों में अत्याचार उग्र हो रहा था उस समय

वहाँ के सभी लोग भगकर अन्यत्र चले गये थे। संताल परगना के बंगाल सीमावर्ती गाँवों और जंगलों में भी उन लोगों ने आश्रय प्राप्त किया था। उस समय वीरभूमि के नवाब फौजदारवादी उल जमा खां ने एक सैन्य टुकड़ी की व्यवस्था की थी और प्रजाओं की रक्षा करने का प्रयास किया था। उन्होंने अपने भाई आजीम खां एवं असादुल जमा खां और बहादुर खां को भी नियुक्त किया था, किन्तु इतिहासकारों का मत है कि इस दिशाा में उनकी सफलता का अंकन करना संभव नहीं है। झारखण्ड क्षेत्र में पार्वत्य अंचल के लोगों का वर्चस्व था और संभवतः यहाँ तक आकर वे लोट गये, क्योंकि आर्थिक दृष्टि से उन्हें कोई लाभ दिखलाई नहीं पड़ा। देवघर में समृद्धि के कोई चिन्ह उस समय नहीं थे। अतः लूट–पाट और आक्रमण करने का कोई आर्थिक लाभ नहीं था अलीवर्दी के बाद उसका दौहित्र सिराजुदौल्ला मुर्शीदावाद का नवाब बना। मुसलमान होते हुए भी वह हिन्दू देव–देवियों का बहुत ही आदर करता था। उस समय तक देवघर का प्रशासन राजनगर (वीरभूम) के हाथ ही में केन्द्रित था। हिन्दू और मुसलमानों में परस्पर सौहार्द्र का संबंध था। देवघर का देवोत्तर प्रतिष्ठान मुस्लिम शासकों के अधीन होने पर भी यहाँ की सारी व्यवस्था हिन्दू लोग ही करते थे। उसी समय अंग्रेजों का भी वर्चस्व पूर्वी भारत में स्थापित हो रहा था। वीरभूम के नवाब की मीर कासीम से नहीं बनती थी और इधर अंग्रेजी शासक भी समस्त प्रदेश पर हावी होना चाहते थे। इस परिस्थिति में वीरभूम के नवाब असद् जमा खां को हेमंतपुर के दुर्ग में शरण लेनी पड़ी। इसके बाद जो लड़ाई हुई उसमें वीरभूम के नवाब मारे गये और झारखण्ड का यह अंचल समस्त घटनाओं को मौर रहकर देखता ही रहा। यह भी कहा जाता है कि असद जमा खां 1777 ई0 में कलकत्ते में पक्षाघात के रोग से कालकवलित हो गये, किन्तु वह अत्यन्त पराक्रमशाली और दानी था।

अब देवघर के इतिहास पर कम्पनी का वर्चस्व प्रारम्भ होता है। अब कम्पनी का ही शासन तंत्र था। यहाँ पर इस संबंध में और भी अधिक विवरण करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि केवल यह संदर्भ प्रस्तुत करना है कि इस क्षेत्र पर बंगाल के शासकों का पूर्ण स्वामित्व था और वे लोग इस अंचल पर शासन करते रहे, चाहे पालों का शासन हो, चाहे छोटे – छोटे नवाबों का। इस भू– भाग से वे सांस्कृतिक रूप से जुड़े हुए थे। सन् 1791 ई0 में वीरभूम के कलक्टर मि.कीटिंग ने मि. फेन को वैद्यनाथ मंदिर का महन्तों के झगड़े

का फैसला करने के लिए भेजा था। मिस्टर फेन के प्रतिवेदन का आधार पर ही प्रधान तीर्थ पुरोहितों की परम्परा को सदुपाध्याय रामदत्त ओझा के समय से वंशगत प्रणाली से नियमित कर दिया गया। स्पष्ट है कि आंग्ल शासक का भी ध्यान इस ओर रहा और समय – समय पर वायसराय यहाँ के संबंध में अधिसूचना और राज्यादेश जारी करते रहे। सबसे पहले हेसेल रिज नामक अंग्रेज अधिकारी देवघर आया था, इसके बाद क्रमशः अंग्रेज अधिकारियों का यहाँ आना जारी रहा है।

प्रधान तीर्थ पुरोहितों की वंशावली का क्रम इस प्रकार है :–

मुकुन्द (14वीं शताब्दी में)→ जुड़न→ चीकू (पौत्र) (मुकुन्द के शिष्य)→रघुनाथ (1596 ई0)→ चीकू ओझा (पुत्र)→मानु ओझा →वामदेव ओझा (1626 तक)→खेमकरण ओझा (1626 से)→सदानन्द झा→चन्द्रमोहन ओझा→रत्नपाणि ओझा (1692)→जयनारायण ओझा (1693)→यदुनन्दन ओझा→टीकाराम संबंधी (1762 से)→देवकीनन्दन ओझा (1762)→रामदत्त ओझा (न्यायालय से अयोग्य घोषित)→नारायण दत्त ओझा (1782)→रामदत्त ओझा (1791–93)→आनन्ददत्त ओझा (1794 से)→परमानन्द ओझा (पुत्र) (1820)→सर्वानन्द ओझा (1823)→ईश्वरी नन्द ओझा (1826)→पूर्णानन्द ओझा (पिता के समय में इनकी मृत्यु हो गई)→शैलजानन्द पौत्र (1890)→त्रिपुरानन्द (गद्दी पर नहीं बैठ सके)→उमेशानन्द ओझा (1906)→भवप्रीतानन्द ओझा (1928 से 70 तक)

उपर्युक्त वंशावली से यह ज्ञात होता है कि वैद्यनाथ मंदिर के प्रधान पुरोहित का पद 1791 ई0 से सदुपाध्याय रामदत्त ओझा के वंश में ही सीमित है। प्रधान पुरोहितों की वंशावली का संबंध महाराजा गिद्धौर से है जिसकी वंशगत विवरणी इस प्रकार है :–

वीरविक्रम सिंह (1100 ई0)→पूरनमल (1596 ई0)→हरि सिंह →राजदर्प सिंह→केशरी सिंह →पहाड़ सिंह→दल्लन सिंह→पद्मन सिंह→गोपाल सिंह→यशवन्त

सिंह (पुत्रहीन) भाई का वंश चला →जयमंगल सिंह (1832 ई0)→शिव प्रसाद सिंह→रावणेश्वर सिंह →चन्द्रमौलेश्वर प्र. सिंह→प्रताप सिंह→राज राजेश्वर प्र. सिंह

महाराजा गिद्धौर की वंशावली से यह ज्ञात होता है कि 11वीं शताब्दी से लेकर 15वीं सदी तक के राजवंशों की ऐतिहासिक घटनाओं का उल्लेख नहीं है। 16वीं शताब्दी से वैद्यनाथ मंदिर के साथ इस राजवंश का घनिष्ट संबंध स्थापित हो गया और क्रमशः तब से लेकर निरन्तर जानकारी उपलब्ध है और इस जानकारी से निर्विवाद रूप से यह कहा जा सकता है कि वैद्यनाथ मंदिर के साथ इनका पारिवारिक संबंध रहा है।

अंग्रेजी हुकूमत ने इस मंदिर की व्यवस्था को और भी व्यवस्थित कर दिया। मि0 किटिंग ने यहाँ के मंदिर की वित्तीय व्यवस्था में हस्तक्षेप किया और राजस्व की वसूली भी की। 1788 ई0 में किटिंग के आदेश से इनके सहायक हैसेल रीज यहाँ पर आये। यात्रियों से चढ़ावे आदि से प्राप्त राजस्व की वसूली के लिए भी उन्होंने प्रयास किया, किन्तु कुछ दिनों के बाद उन लोगों को निराशा हुई, क्योंकि चढ़ावे आदि से बहुत ही कम राशि प्राप्त होने लगी। 1799 ई0 में पचास हजार तीर्थयात्री आये, किन्तु चढ़ावा मात्र 430/– रू0 ही है, क्योंकि तीर्थयात्रियों को जब यह ज्ञान हो गया कि तत्कालीन सरकार सब चढ़ावा ले लेगी, तो उन्होंने मंदिर में चढ़ावा चढ़ाना कम कर दिया इस प्रकार अंग्रेज अधिकारियों को इस संबंध में तीर्थ पुरोहितों के अनुसार ही काम करना पड़ा। मि0 किटिंग भी फरवरी 1791 ई0 को देवघर आये, जबकि उस समय वीरभूमि से देवघर आना बड़ा ही भयावह था। इस प्रकार अंग्रेज शासकों की दृष्टि इस मंदिर पर रही और इस मंदिर को उन्होंने श्रद्धापूर्वक स्वीकार किया। अन्ततोगत्वा किटिंग ने मंदिर पर हस्तक्षेप करने की नीति छोड़ दी। इसमें जॉन सौर और लार्ड कार्नवालिस ने भी सहयोग किया, क्योंकि वे लोग हिन्दू विश्वास के साथ खिलवाड़ नहीं करना चाहते थे। इस प्रकार 1791 ई0 में तीर्थपुरोहितों और बोर्ड ऑफ रेवेन्यू के बीच एक निश्चित राशि के भुगतान करने का समझौता हुआ। इस प्रकार अंग्रेज अधिकारियों का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव मंदिर से ही हट गया और 1791 ई0 में तीर्थपुरोहितों और बोर्ड ऑफ रेवेन्यू के बीच एक निश्चित राशि के भुगतान करने का समझौता हुआ। इस प्रकार अंग्रेज अधिकारियों का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव मंदिर से ही

हट गया और 1791 ई0 से ही रामदत्त ओझा को यहाँ का प्रधान पुरोहितों के बीच आपस में अधिकार को लेकर झगड़ा भी होता था। सन् 1860 ई0 में मि0 ब्राउन, अस्टिेन्ट कमिश्नर इस प्रकार के झगड़ों की जांच करने के लिए यहाँ आये थे।

वैद्यनाथ मंदिर के प्रधान तीर्थ पुरोहित की प्रशासकीय व्यवस्था में निम्नलिखित पदाधिकारी एवं कर्मचारी रहते हैं :–

**मुसरिफ** –प्रधान तीर्थ पुरोहित की अनुपस्थिति में ओझा वंश के ही जो वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग की पूजा करते थे, उन्हें मुसरिफ कहा जाता है।

**द्वारी**–वैद्यनाथ मंदिर के मुख्य द्वार पर जो यात्रियों से कर वसूली कर उन्हें भीतर जाने देते थे, ओझा वंश के ऐसे लोगों को द्वारी कहा जाता है।

**दरोगा** –दरोगा मंदिर की देख रेख के लिए रहता है और प्रधान तीर्थ पुरोहित का वह निजी सेवक होता है।

**पनभरा** –यह मंदिर के मुख्य देवता का भाग एवं प्रधान तीर्थ पुरोहित के भोजन बनाने का काम करता है।

**फुलदरिया** –यह मंदिर में पूजा के लिए फूल और माला की आपूर्त्ति करता है।

**चन्दनवाला** –यह वैद्यनाथ के लिए इत्र और सुगन्धित प्रसाधन की आपूर्त्ति करता है।

**घड़ीवाला** –यह दिन–रात वैद्यनाथ मंदिर की पूजा – अर्चना के लिए समय की सूचना देता है।

**छीवाना** –यह मंदिर के आय – व्यय का विवरण रखता है।

**भण्डारी**–तोशक खाना की चाभी भण्डारी रखता है।

**सिकदार** –मंदिर में बलिदान – कार्य का सम्पादन सिकदार करता है।

**नापित** –मंदिर परिसर में तीर्थयात्रियों के मुंडन के कार्य का सम्पादन नापित करता है।

**कुण्डप्राण** –मंदिर में स्थित कुण्ड और नाले की सफाई कार्य करता है।

**झाड़ूवाला** – मंदिर प्रागंण और भीतरी भागों की सफाई का कार्य करता है।

इस प्रकार प्रधान तीर्थ पुरोहित मंदिर की इन समस्त व्यवस्थाओं की देखरेख करने लगे और आज तक यह व्यवस्था किसी न किसी रूप में वर्त्तमान है।

वैद्यनाथ मंदिर के अतिरिक्त और 22 मंदिर हैं। इनके स्थापत्य में वैद्यनाथ मंदिर के स्थापत्य का ही अनुकरण किया गया है जिनके संक्षिप्त विवरण इस प्रकार हैं :–

**पार्वती मंदिर** : –यहवैद्यनाथ मंदिर के ठीक सामने पूर्व भाग में स्थित है। इस मंदिर में त्रिपुर – सुन्दरी और जयदुर्गा की मूर्त्तियाँ हैं, किन्तु परम्परा से ही इसे पार्वती का मंदिर माना जाता है। त्रिपुर सुन्दरी वैद्यनाथ के तीर्थ पुरोहितों की कुल देवी हैं। इस मंदिर के द्वार पर पीतल का एक फाटक है। इसमें पीतल का दान पंजियारा स्टेट (भागलपुर) के जमींदार श्री शालिग्राम सिंह ने संवत् 1889 ई0 में किया था। स्थापत्य की दृष्टि से यह अवश्य ही आकर्षक मंदिर है। मित्रा मानते हैं कि वैद्यनाथ मंदिर के प्रधान पुरोहित रत्नपाणि ओझा ने 1701 ई0 में इस मंदिर का निर्माण करवाया।

**जगत – जननी** :–यह मंदिर एक विशाल प्रशाल में है। किन्तु प्राचीन अभिलेखों में इसे कार्तिकेय के मंदिर के रूप में स्वीकार किया गया है। यहाँ अनेक मूर्त्तियाँ हैं, जिनमें वीणाधर शिव की भी एक मूर्त्ति हैं। मित्रा ने भी इस वरामदानुमा मंदिर का उल्लेख किया है।

**गणेश मंदिर** –धार्मिक परम्परा में गणेश की वंदना को सर्वाधिक महत्व दिया गया है। इस मंदिर में गणेश की अष्टभुजा मूर्त्ति नृत्यमुद्रा में विद्यमान है। मंदिर के गर्भ गृह के पूर्व एक लघु प्रशाल है। संताल परगना गजेटियर के अनुसार इस मंदिर का निर्माण टीकाराम ओझा ने 1762 ई0 में कराया था।

**ब्रह्मा का मंदिर**–यह मंदिर छोटे आकार का है। इसे यहाँ के कार्यकारी पदाधिकारी (रिसिवर) स्वर्गीय सखीचन्द्र ओझा ने बनवाया है। स्थापत्य की दृष्टि से कोई विशेष महत्व नहीं है।

**संध्या मंदिर** –वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में यह प्रमुख मंदिर को छोड़कर दूसरा मंदिर है। इस मंदिर में संख्या देवी की एक प्राचीन मूर्ति है। इस देवी विग्रह को तारा के नाम से ख्याति प्राप्त है। गजेटियर के अनुसार खेमकरण ओझा ने इसका निर्माण 1692 ई0 में करवाया था। स्थापत्य की दृष्टि से इस मंदिर का महत्व है और इसे एक प्राचीनतम ऐतिहासिक अवशेष माना जाता है। अभी तक इसके निर्माण के संबंध में प्रमाण को स्वीकार नहीं किया जाता है।

**काल भैरव** –काल भैरव का मंदिर सामान्य आकार का मंदिर है। इस देवालय में एक विशाल मूर्ति प्रतिष्ठित है। आर0 एल0 मित्रा ने इसे ध्यानी बुद्ध की मूर्त्ति के रूप में स्वीकार किया है। स्थापत्य की दृष्टि से यह मंदिर सामान्य कोटि का है।

**हनुमान मंदिर**–वस्तुतः यह मंदिर द्वार – रहित प्रशाल के समान है। इसमें गदाधारी धवलगिरि पर्वत से युक्त हनुमान जी की प्रतिमा है और इसमें धनदा देवी की भी मूर्त्ति है। इसे गिद्धौर महाराज की सरकारी व्यवस्था के प्रशाल के रूप में मान्यता भी है। यह भी ऐतिहासिक दृष्टि से प्राचीन नहीं है। 1971 ई0 से मंदिर के रूप में परिवर्त्तित कर दिया गया है।

**मनसा मंदिर** –मंदिर परिसर में मनसा का एक छोटा सा मंदिर है। इसमें मनसा देवी की प्रतिमा है। देवी पद्मासन की मुद्रा में विराजमान हैं। पालकालीन मूर्त्ति कला का यह एक भव्य नमूना है। इस मंदिर का निर्माण 19वीं शताब्दी के अंतिम दशक में प्रधान पुरोहित शैलजानन्द ओझा ने करवाया था।

**सरस्वती मंदिर** –वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में सरस्वती का मंदिर भी एक लघुकाय मंदिर है। इस मंदिर का निर्माण 1791 ई0 से लेकर 1800 ई0 के मध्य हुआ है और इसे रामदत्त

ओझा ने बनवाया था। इसमें एक लघु प्रशाल भी है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह एक नवीन मंदिर है।

**सूर्य मंदिर** –सूर्य मंदिर एक गुम्बद रहित मंदिर है। 1782 ई0 से 1793 ई0 के बीच इसका निर्माण रामदत्त ओझा ने करवाया था। स्थापत्य की दृष्टि से इसका विशेष महत्व नहीं है, किन्तु यह भी एक प्राचीन मंदिर है।

**बगला मंदिर** –बगला मंदिर एक लघुकाय मंदिर हैं इसमें देवी का विग्रह विद्यमान है। रामदत्त ओझा ने 1782 ई0 से 1793 ई0 के बीच इसका निर्माण करवाया था। इसमें एक छोटा सा प्रशाल भी है। धार्मिक इतिहास की दृष्टि से इसका बहुत ही महत्व है।

**राम मंदिर** –मुख्य मंदिर के परिसर में यह एक विशालकाय मंदिर है। मंदिर में राम, लक्ष्मण, जानकी की प्रतिमा के साथ भरत और शत्रुघ्न की छोटी–छोटी प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित हैं। इस मंदिर का निर्माण 1782 ई0 से 1793 ई0 के मध्य हुआ है और इसे रामदत्त ओझा ने ही बनवाया था। स्थापत्य की दृष्टि से यह मंदिर अपनी विशिष्टता भले ही न रखे, किन्तु मंदिर के मुख्य गृह में स्थित प्रतिमाएँ वास्तुकला की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं।

**गंगा मंदिर** –गंगा का मंदिर एक लघुकाय मंदिर है। 1782 ई0 के बाद यह मंदिर बना है। ऐतिहासिक दृष्टि से इसका विशेष उल्लेख नहीं होता है।

**आनन्द भैरव** :–मुख्य मंदिर के परिसर में ही आनन्द भैरव का एक विशाल मंदिर है। मंदिर के मुख्य गृह के अतिरिक्त इसमें एक प्रशाल भी है। देवविग्रह की विशिष्टता यह है कि इसमें आनन्द भैरव के 18 हाथ दिखलाये गये हैं। इस मंदिर के निर्माण के संबंध में यह कहा जाता है कि इसमें निर्माण का कार्य 1782 ई0 के बाद से प्रारम्भ हुआ है और 1823 ई0 में इसे पूरा किया जा सका। ओ0 मोले ने इसे आनन्ददत्त ओझा के द्वारा निर्मित माना है। स्थापत्य की दृष्टि से मूर्त्ति और मंदिर का महत्व है।

**गौरीशंकर मंदिर** :–इस मंदिर में गौरी–शंकर की युगल मूर्ति विद्यमान है। मंदिर छोटे आकार का है। इसे पूर्णानन्द ओझा ने बनवाया है। स्थापत्य की दृष्टि से यह एक नवीन मंदिर है।

**तारा मंदिर** :–तारा मंदिर दक्षिणाभिमुख मंदिर है। यह एक लघुकाय प्रशाल से युक्त मंदिर है। इसका निर्माण मंदिर के प्रधान मठाधीश सदुपाध्याय भवप्रीतानन्द ओझा ने करवाया था। यह प्रधान मठाधीश की इष्टदेवी की मूर्त्ति है।

**नर्मदा शिवलिंग** :–मंदिर परिसर में मंदिर के प्रधान पुरोहित के रहने का स्थान है। उसी भवन में एक कक्ष है, जिसमें नर्मदा शिवलिंग स्थापित है। शैलजानन्द ओझा ने इस शिवलिंग की स्थापना की है। मित्रा ने इसे वैद्यनाथ महादेव के नाम से स्थापित माना है। स्थापत्य की दृष्टि से इसका कोई विशेष महत्व नहीं है।

**काली मंदिर** :–काली का मंदिर एक भव्याकार मंदिर है। मंदिर के भीतर में एक कक्ष है, जिसमें मां काली का विग्रह है। मित्रा ने लिखा है कि 1712 ई0 में जयनारायण ओझा ने इसका निर्माण कराया है। यह एक प्राचीनतम मंदिर है और मौजे देवघर की ग्राम देवी है।

**अन्नपूर्णा मंदिर** :–यह एक लघुकाय मंदिर है। इस मंदिर के आकार को देखने से बंगाल शैली का मंदिर निर्माणकला का प्रत्यक्ष दर्शन होता है। इसमें अन्नपूर्णा देवी की प्रतिमा है। मित्रा ने कहा है कि 1782 ई0 में रामदत्त ओझा ने इस मंदिर का निर्माण करवाया था।

**लक्ष्मीनारायण मंदिर** :–लक्ष्मीनारायण मंदिर आकार में वैद्यनाथ मंदिर से छोटा नहीं है, किन्तु ऊँचाई में छोटा है। यह चतुष्कोणात्मक शिखर से युक्त है। इस मंदिर के अंदर लक्ष्मी के साथ शंख, चक्र, गदा, पद्मधारी नारायण की प्रतिमा विराजमान है। पी0सी0 राव चौधरी ने कहा है कि 1630 में वामदेव ओझा ने इस मंदिर का निर्माण करवाया था। स्थापत्य कला की दृष्टि से यह प्राचीनतम मंदिरों में से एक है।

**नीलकंठ महादेव मंदिर** :–वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में नीलकंठ महादेव का मंदिर एक छोटा–सा मंदिर है। मंदिर का भीतरी कक्ष अत्यंत ही छोटा है और इसमें चार मूर्त्तियाँ स्थापित हैं। मंदिर की मूर्त्तियाँ पालकालीन हैं। इस मंदिर के निर्माण के संबंध में अधिक उल्लेख नहीं मिलता है, लेकिन यह भी एक प्राचीनतम मंदिर है।

**चंद्रकूप** :–इन मंदिरों के अतिरिक्त चन्द्रपाणि ओझा द्वारा निर्मित चन्द्रकूप है, जिसका धार्मिक महत्व आज भी करोड़ों भारतीयों को आध्यात्मिक संतोष देता है।

**वृषभ** :–वैद्यनाथ मंदिर के पूर्वाभिमुख प्रशाल में वृषभ की कई मूर्त्तियाँ हैं, जो धार्मिक दृष्टि से महत्व रखती हैं।

**नीलचक्र** :–वैद्यनाथ मंदिर के प्रांगण में नीलचक्र की एक वेदी है, जो संध्या मंदिर के सामने है और वैद्यनाथ मंदिर के प्रथम मुख्य द्वार के प्रवेश की बांयी ओर है, धार्मिक इतिहास की परम्परा के साथ इस चक्र को सिद्धपीठ कामाख्या देवी से सम्बद्ध किया जाता है।

**तुलसी चौरा** :–हनुमान मंदिर के ठीक सामने तुलसी चौरा है, जहाँ तुलसी के कई पौधे प्राचीनकाल में थे और यात्रीगण वहाँ पर पूजा किया करते थे।

**मानिक चौरा** :–वैद्यनाथ मंदिर के परिसर के उत्तर में पश्चिम कोने पर एक बहुत बड़ा चबूतरा है। इस चबूतरे पर भी वही प्रस्तर लगे हुए हैं, जो वैद्यनाथ मंदिर के प्रागंण में लगे हुए हैं। इन पत्थरों को आज से 180 वर्ष पूर्व पटने के व्यापारी चौवालाल पन्नालाल ने लगाया है। प्राचीन काल में यात्री – गण मुंडन आदि पवित्र कर्म यहीं पर करते थे। प्रधान तीर्थ पुरोहित जब गद्दी पर बैठते हैं, उस समय उन्हें यहीं पगड़ी पहनाई जाती है। उनका मुंडन कार्य यहीं होता है।

**भीतर खण्ड** :–वैद्यनाथ मंदिर के प्रशासनिक कक्ष को भीतरी खण्ड या भीतर खण्ड कहा जाता है। इसमें प्रधान पुरोहित रहते हैं और यहीं रहकर प्रशासन एवं उपासना संबंधी कार्यों का सम्पादन करते हैं। भीतरीखण्ड मुख्य द्वारा से प्रवेश करते ही बांयी ओर किनारे में राधाकृष्ण की अष्टधातु मूर्त्तियाँ हैं। फाल्गुण पूर्णिमा के दिन इस मूर्त्ति को फगडोल के पास ले जाया जाता है, जहाँ हरिहर मिलन की समाप्ति होती है। इसकी परम्परा प्राचीनकाल से ही चली आ रही है। यहीं पर एक हवनकुंड भी है, जो सदैव प्रज्जवलित रहता है।

**धरना की प्रथा** :–वैद्यनाथ मंदिर में तीर्थयात्रियों के लिए धरना की परम्परा है। दिनभर उपवास रहकर रात्रि में तीर्थ यात्री–गण सायंकालीन पूजा होने के बाद फलाहार करते हैं। जब स्वप्न में वैद्यनाथ का आदेश हो जाता है तब धरना व्रत की समाप्ति होती है। प्राचीनकाल में धरना की प्रथा का कुछ दूसरा रूप था। यहाँ एक पीपल का वृक्ष था। उस

समय लोग अपनी कामना की पूर्ति के लिए उस वृक्ष उस वृक्ष के नीचे निवास करते थे और पीपल के पत्ते में उनको लिखित आदेश हुंडी के समान प्राप्त होता था और जहाँ कहीं भी वे उस हुंडी को ले जाते थे इच्छानुसार उनको सुविधा प्राप्त होती थी। पीछे पीपल का वृक्ष संभवतः नष्ट हो गया, लेकिन वह परम्परा आज भी वर्त्तमान है, जो धरना के रूप में प्रचलित है। भारत के किसी भी मंदिर में यह परम्परा नहीं है।

**स्वर्ण बिल्व महादेव :–**वैद्यनाथ मंदिर के पश्चिम प्रवेश द्वार के पास स्वर्ण बिल्व महादेव का विग्रह है, जो वर्त्तमान समय में एक ठाकुरबाड़ी के कक्ष में स्थित है। देवघर के प्राचीन धार्मिक इतिहास के साथ इस लिंग का अनन्य संबंध जुड़ा हुआ है, क्योंकि प्राचीनकाल में इस भू–भाग का नाम बिल्वखण्ड भी था। इसी जगह पश्चिम द्वार पर वैद्यनाथ मंदिर के मठाधीश सदुपाध्याय भवप्रीतानन्द ओझा की संगमरमर की मूर्त्ति है।

**बैजू मंदिर :–**इन मंदिरों के अतिरिक्त बैजू भील के नाम पर भी तीन मंदिर हैं, जिन्हें यहाँ के प्रधान पुरोहितों ने बनवाया था। वस्तुतः ये तीनों ही मंदिर उदासी सम्प्रदाय के साधुओं की समाधि पर निर्मित हैं, क्योंकि पुराणों एवं धर्मशास्त्रों में बैजू भील की कथा नहीं है। यह केवल लोककथा है।

**शीतला मंदिर :–**बैजू मंदिर के समीप ही शीतलता मंदिर है, जिसे रोहिणी घाटवाल ने बनवाया है, और अपने तीर्थपुरोहित के अधीन कर दिया है।

इस प्रकार विभिन्न धार्मिक स्थल हैं, जिनका धार्मिक दृष्टि से महत्व है, किन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से उतना अधिक महत्व नहीं है। यह भी सत्य है कि लोकजीवन में धर्म ही प्रधान प्रभावोत्पादक है। इसलिए इन स्थानों का भी महत्व है।

वैद्यनाथ मंदिर के परिसर के विभिन्न मंदिरों के अतिरिक्त और भी कुछ ऐतिहासिक स्थल हैं, जिनके संबंध में जानकारी इस प्रकार है :–

**तपोवन :–**तपोवन एक पर्वत है। जिसे सीता माता की तपस्या से जोड़ा जाता है। यहाँ रामापाल का एक अभिलेख है। इतिहासकारों का यह कहना है कि पालों की यह सैनिक छावनी थी। 1872–73 में बेगलर ने भी इस स्थान का भ्रमण किया था। आधुनिक युग में

महर्षि बालानन्दजी ब्रह्मचारी यहाँ तपस्या करते थे। देवघर से छः किलोमीटर पर यह अवस्थित है।

**हरिलाजोड़ी** :–यह स्थल रावण की यात्रा – कथा से संबंधित है। हरीतकी वन की बहुलता के कारण इसे हरिलाजोड़ी के नाम से पुकारा जाता है। यहाँ नारायण पाल का एक लेख है जो अस्पष्ट है। पालों के लेख में इसे क्रिमिला विषय के नाम से अभिज्ञात किया जाता है। यहाँ भी एक शिव – पार्वती का मंदिर है। असंख्य लोग यहाँ भी दर्शन–पूजन के लिए आते हैं। कष्टहरिणी नामक एक कुंड यहाँ है। इसमें स्नान करने से रोग दूर होते हैं। बेगलर ने इस स्थान की यात्रा की थी। यहाँ पर वर्तमान मंदिर का निर्माण दो वर्षों के भीतर हुआ है। बंगाल के किसी चिंतामणि दास भक्त ने इस मंदिर का निर्माण करवाया था। हरिलाजोड़ी का धार्मिक दृष्टि से जितना अधिक महत्व है, उतना ही अधिक ऐतिहासिक दृष्टि से भी महत्व है।

**मानसरोवर** :–मानसरोवर एक तालाब है। राजीव नयन प्रसाद और नागेन्द्र बसु इसे मानसिंह का बनवाया हुआ मानते हैं। तालाब अभी भी वर्तमान है।

**नाथवाड़ी** :–यह वैद्यनाथ मंदिर से ठीक पश्चिम में स्थित है। यहाँ दसनामी सम्प्रदाय के उपासक रहा करते थे। पीछे मुसलमानों के अधीन में यह आश्रम आ गया था, जिसे महाराजा गिद्धौर ने बाद में खरीद लिया और अब उन्हीं के अधीन है। वर्तमान समय में इसमें आधुनिक भवनों का निर्माण हो रहा है।

**चोलपहाड़ी** :–इसका संबंध दक्षिण भारत के चोल शासकों से जोड़ा जाता है। राजेन्द्र चोल पूरब में बंगाल विजय के क्रम में यहाँ आया था। उसका एक नाम गांगेय कोंड भी था। वह शैव था।

**नन्दन वन** :–वैद्यनाथक्षेत्र के पश्चिम में नंदन पर्वत है। धार्मिक इतिहास के आधार पर इससे जुड़ी हुई अनेक कथाएँ हैं। वर्तमान समय में यहाँ पर अनेक नवीन कार्य हुए हैं।

**सरदार पंडा** :–यह संस्था वैद्यनाथ मंदिर की ऐतिहासिकता की एक कड़ी है। वैद्यनाथ मंदिर के प्रधान तीर्थ पुरोहित को सरदार पंडा कहा जाता है। सरदार पंडा का संबोधन

20वीं शताब्दी के प्रथम चरण से प्रारम्भ हुआ। इसके पूर्व मठाधीश के नाम से संबोधित किया जाता था। सरदार पंडा प्राचीन काल में सभी पंडों में सर्वोत्तम गुणवान व्यक्ति को चुना जाता था। सर्वप्रथम सरदार पंडा मुकुन्द ओझा थे। पीछे 1791 ई0 में यह वंश परम्परा पर आधारित हो गया। रामदत्त ओझा ही वंश परम्परा की शुरूआत में प्रधान पुरोहित थे। इस परम्परा में वंशगत व्यवस्था ईस्ट इंडिया कम्पनी की देन है। साथ ही 45 वर्षों की आयु का व्यक्ति ही प्रधान तीर्थ पुरोहित के पद का अधिकारी हो सकता है। इसके अभाव में उनके निकट के संबंधी को उम्मीदवार बनाया जाता है। यहाँ के तीर्थ भारत के सभी तीर्थों की अपेक्षा अधिक सामाजिक और सेवापरायण हैं। तीर्थ पुरोहितों का तीन वर्ग है :– मैथिल ब्राह्मम, राढ़ीय ब्राह्मण एवं कान्यकुब्ज। यजमानों से इनका अत्यंत ही घरेलू संबंध रहता है। ये लोग चुनाव के द्वारा भी प्रधान मठाधीश को चुनते हैं। मंदिर के प्रशासकीय तथा धार्मिक क्रियाकलापों का यह सर्वथा अधिकारी होता है।

**चन्द्रकान्त मणि :**–देवघर के वैद्यनाथ मंदिर में चन्द्रकान्त मणि है, जिससे निरन्तर जल स्रावित होता रहता है। अष्टदल कमल की आकृति में मंदिर के गर्भगृह के शिखर में यह गुंफित है। इनकी चमक अलौकिक एवं अद्‌भुत है। सन् 1962 ई0 में प्रथम बार लोगों को इसके संबंध में जानने का अवसर मिला। भारत के किसी भी शिव मंदिर में यह मणि नहीं है। प्राचीन काल में सोमनाथ मंदिर में यह मणि थी।

**शिवगंगा :**–शिवगंगा देवघर की एकतिहासिकता की कुंजी के रूप में महत्व दिया जाता है। पौराणिक संदर्भों में इसे भवरोग हर कुंड के रूप में जाना जाता है। शिवगंगा में कभी अश्विनी कुमारों ने स्नान किया था। वे देवताओं के चिकित्सक हैं और वे भी रोगग्रस्त हो गए थे। इसके उद्‌भव में भी रावण की कथा जुड़ी है। रावण के मुष्टि प्रहार से यह कुंड विकसित हुआ है। लक्ष्मीपुर स्टेट के घटवाल ठाकुर प्रताप नारायण देव के सहयोग से इसका विकास हुआ है। यह 900 फीट लम्बा तथा 600 फीट चौड़ा है।

**दाता का जंगल :**–यह देवघर के इतिहास में चर्चा का विषय है। दाता साहब मुस्लिम फकीर थे और बाबा वैद्यनाथ को प्रत्येक दिन फूल अर्पित करने के लिए मंदिर के द्वार तक आते थे। इन्हें वीरभूम नवाब ने जमींदारी प्रदान की थी। नीलकंठपुर इसकी तहसील थी।

दाता का जंगल शिवगंगा से उत्तर में स्थित है। इस स्थान में दाता साहब का मजार भी है जहाँ उर्स होता है। दाता साहब की प्रशस्ति के बिना वैद्यनाथधाम का इतिहास अधूरा है।

**जगन्नाथ मंदिर** :–वैद्यनाथ मंदिर से पूर्व दक्षिण की ओर यह मंदिर है। इस मंदिर के संस्थापक भगवद् दास थे। 1920 ई0 के बाद की इस मंदिर का निर्माण हुआ है। इसमें कृष्ण, बलराम और सुभद्रा की मूर्त्तियाँ हैं।

**नौवत खाना** :–नौवत वैद्यनाथ मंदिर परिसर के इतिहास से संबंधित है। दो सौ वर्षों से यह एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थल के रूप में वर्तमान है। नौवत खाना का निर्माण मुस्लिम संस्कृति और शासन की देन है। कहा जाता है कि 1752 ई0 से 1777 के बीच नौवत बजाने के लिए एक स्थल का चयन किया और तभी से यह नौवत खाना प्रसिद्ध है।

**सिंहद्वार** :– सिंह द्वार वैद्यनाथ मंदिर के उत्तरी भाग में स्थित है। यह चुनार पत्थर से बना हुआ है। बनेली के राजकुमार पद्मानन्द सिंह ने इसका निर्माण करवाया था। यहाँ पर प्राप्त अभिलेख से इसकी पुष्टि मिलती है।

**डोलमंच** :– वैद्यनाथ मंदिर के साथ डोलमंच का गहरा ऐतिहासिक संबंध है। शहर के मुख्य मार्ग पर यह डोलमंच है।

**पंचशूल** : वैद्यनाथ मंदिर में पंचशूल है। सामान्यतया भारत के शिव मंदिरों में शिखर पर त्रिशूल ही प्रचलित है। त्रिशूल त्रिशक्ति का प्रतीक हैए जिसे ज्ञानए इच्छा और क्रिया के रूप में जाना जाता है। सिन्धुघाटी में भी त्रिशूलाकृक्ति के हथियार मिले थे। त्रिशूल की लोकप्रियता लौहयुग में अधिक हुई। अभिनव गुप्त ने भी त्रिशूल का समर्थन किया। यह त्रिशूल त्रिगुणात्मक व्यवहार है। त्रिशूलए त्रिशक्तिए त्रिगुण एवं त्रिरत्न का प्रतीक है। भारत में आज भी त्रिशक्ति और त्रिरत्न का सिद्धान्त लोकप्रिय है।

किन्तु मंदिर स्थापत्य में पंचशूल की उपस्थिति पूर्णतः तांत्रिक अभिचारों को स्पष्ट करती है। पंचशूल अव्यक्त काल की अभिव्यक्ति है। इसे कालमूर्ति की शक्ति के रूप में मान्यता है। पंचशूल के पीछे पंचमुखी शिव लिंग को ही आधार माना जाता है। मयमत्त में भी पंचशूल की चर्चा है जिसे पद्मपीठ के नाम से संबोधित किया गया है। गोपिनाथ राव ने हिन्दू

अभिलेख में इसकी चर्चा की है। पुरातत्व की दृष्टि से पंचमुखी शिवलिंग मथुरा के संग्रहालय में सुरक्षित है। पंचशूल का मूल संबंध शिवतत्व से है। शिवतत्व और योगक्रिया समानार्थक हैं योग की मूर्त्त शक्ति को मेरुदण्ड के पाँच चक्रों में स्थापित पंचात्मिका माना गया है। स्थापत्य कला में पंचमुखी शिवलिंग और शिव के मंदिर में पंचशूल के रूप में प्रसिद्ध है। अतएव शिव की संज्ञा पंचानन है। ऐतिहासिक दृष्टि से पंचमुखी शिवलिंग की परम्परा कुषाण काल में प्रारम्भ हुई। पंचशूल को पंचात्मिका शक्ति का प्रतीक कहा गया है। इलाहाबाद के समीप भिटा में पंचमुखी शिवलिंग की मूर्त्ति इसका प्रमाण है। वैदिक पंचरूद्र की सनातन मान्यता इतनी बलवती हो गई कि पंचलिंग की स्थापना को व्यापक लोकप्रियता मिली। शिव कांची में पृथ्वी तत्व का लिंग है। जम्बू नाथ जल लिंग है। अरुणाचल पर तेजोमय लिंग काए कालहस्तिगिरी पर वायु लिंग है। चिदम्बरम् में आकाश लिंग है। छाया वन में छायावपेश्वर छायालिंग है। इतिहास की सुदूरवर्ती मान्यता के पीछे बौद्धिक अभियान की चरम उपलब्धि इस रूप में भी होती है कि वैदिक आर्यगण अग्नि उपासक थे और भारत में वह अपनी पंच शाखाओं के साथ फैले थे। सभी शाखाओं के लोग अग्नि के उपासक थे। उनका प्रधान धर्म यज्ञ था। ऋग्वेद में भी जनायमदग्नि मन्दयन्त पंच का प्रकरण मिलता है। पंचशूल की धार्मिक विवृत्ति का बोध इससे भी स्पष्ट होता है।

श्री चक्र के षोडशदल कमल में पंचभाग करने की व्यवस्था है। वैद्यनाथ में भी श्री विद्या की उपासना होती है। उन्हें राज.रजेश्वरी के रूप में भी पूजा जाता है। उनके हाथ में अंकुशए पाशए इच्छु दण्डए पांच पुष्पों से निर्मित तीर है। आठवीं शताब्दी में शैवपीठों में श्रीचक्र की आराधना को लोकप्रियता मिली। संभवतः वैद्यनाथ मदिर में पंचशूल लगाने की परम्परा तभी से प्रारम्भ हुई। इसकी आराधना का संबंध सुदूर अतीत का अभिचारिक प्रकल्प था। वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग की आराधना कामदलिंग के रूप में की जाती है। अतः पंचशूल की उपस्थिति शिव.शक्त्या युक्तो की परिणति है। त्रिपुर सुन्दरी के सिंहासन के स्तम्भ के स्थान में पाँच मूत्तियाँ हैं। इसे साधक तंत्र में पंचब्रह्म और पंचप्रेत के नाम से जाना जाता है। निश्चित रूप से पंच प्रेतासनों की प्रतीकात्मक विद्या को पंचशूल में अपनाया गया है। पंचशूल की व्यापक लोकप्रियता को यज्ञ वैभव खण्ड में भी प्रतिपादित किया गया है। स्पष्ट

है कि पंचशूल शिव का पर्याय है। कालिका पुराण में पाँच अभिचारों का उल्लेख है। हर्षनए रोचणए मोहनए शोषण और मारण। ज्ञानार्णव सूत्र में उसी को क्षोभणए श्रावणए आकर्षणए वशीकरण और उन्माद कहा गया है। भावोपनिषद् में भी पंच आयामों का व्यायाम विद्यमान है। तंत्र के वाणाक्षरों में भी पंचशूल का रहस्य विद्यमान हैए जिसे यांए रांए लांए वां और शां के रूप में जाना जाता है।

निष्कर्ष में कहा जा सकता है कि वैद्यनाथ मंदिर में भी पंचशूल की स्थापना के पीछे तांत्रिक साधना की रहस्यमय स्थिति का बोध विद्यमान है। कश्मीर तांत्रिक संस्थान में त्रिशूल का व्यापक प्रचार हुआ। किन्तु परवर्ती समय में पंचशूल की परम्परा प्रधान हो गई। स्पष्ट है कि त्रिशूल की लोकप्रियता के विपरीत वैद्यनाथ मंदिर में पंचशूल को स्थान मिला। पंचशूल तांत्रिक साधना की मनोभावना की देन है। शाक्त धर्म का ध्येय जीवात्मा की परमात्मा के साथ अभेद सिद्धि है। पंचशूल के माध्यम से उसी अभेद की चिंताधारा को व्यक्त किया गया है।

बिल्वपत्र दल की दुर्लभ परम्परा शिव मंदिरों में बिल्वपत्र दल चढ़ाने की परम्परा प्राचीन काल से ही चली आ रही है। किन्तु वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग का अधिष्ठान बिल्वपत्र चढ़ाने की परम्परा अपने ढंग की है। प्राचीन काल से ही यहाँ के तीर्थ पुरोहित.गण बिल्वपत्र चढ़ाकर वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग की विशेष रूप से आराधना करते रहे हैं। 19वीं शताब्दी के अंतिम दशक से जब पूरे भारत में समाज सुधार का धार्मिक आंदोलन चल रहा था और उसका प्रभाव धार्मिक केन्द्रों मेंविशेष रूप से पड़ रहा था, उस समय यहाँ के तीर्थ पुरोहितों के मन में बिल्वपत्र तोड़कर वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग घर अर्पण करने की परम्परा में एक आंदोलनात्मक प्रक्रिया शुरू हुई, जिसे बिल्वपत्र दल के रूप में मान्यता दी गई। किन्तु इस दशा में बिल्व दल बनाने का मौका 20वीं शताब्दी से प्रारम्भ हुआ। उस समय जरनेल दल और करनेल दल के रूप में दो प्रमुख बिल्वपत्र दल और इनके अतिरिक्त कण्ठा समाज, त्रयोदशी समाज और जंगी समाज भी थे, जिनके सदस्यगण आसपास के 200 कि० मी० की दूरी के वन–प्रान्तों में जाकर बिल्वपत्र तोड़ते हैं और वहाँ से लाकर बाबा वैद्यनाथ को चढ़ाते हैं।

बिल्वपत्र तोड़ने की आराधना की शुरूआत श्रावण संक्रान्ति से लेकर संक्रान्ति पर्यन्त तक होता है, किन्तु संक्रान्ति से संक्रान्ति के बीच के प्रत्येक सोमवार को बिल्व–पत्र का प्रदर्शन आज से 50 वर्ष पूर्व उपर्युक्त बिल्वपत्र दल के उपासकगण करते थे और आज भी यह परम्परा वर्तमान है, किन्तु आजकल बिल्वपत्र दल के पुराने जरनेल दल में कई दल हो गये हैं, जिसमें करनेल दल के उपासकगण भी सम्मिलित हो गये हैं। शेष कण्ठा समाज, त्रयोदशी समाज और जंगी समाज का दल अब नहीं रहा और उन दलों के अनुयायियों के वंशज अब नये–नये बिल्वपत्र दलों के सदस्य या उपासक बन गये हैं। वर्तमान समय में भैरो दल और काली दल के नाम से बिल्वपत्र के दो समाज हैं। ये लोग श्रावण महीने में निर्धारित दिन एवं संक्रान्ति को वैद्यनाथ मंदिर में बिल्वपत्र का प्रदर्शन करते हैं।

जहाँ तक बिल्वपत्र के प्रदर्शन का प्रश्न है, बिल्वपत्र को पर्वतों से तोड़कर लाया जाता है किन्तु उन्हीं बिल्वपत्रों को तोड़ा जाता है, जिसके तीनों दल समान एवं एक दूसरे के समानान्तर में होते हैं। बिल्वपत्र का वर्ण गाढ़ी हरीतिमा से युक्त होता है। चिकनाहट भी देखने योग्य होती है। लगता है किसी शिल्पकार ने इसे भलीभांति से तराश दिया हो। इस प्रकार के बिल्वपत्र को चांदी के थाल में सजाया जाता है। बिल्वपत्र थाली के मध्य भाग में जल से चिपकाया जाता है और उसके चारों ओर जंगली पुष्पों का मेहराव बनाया हुआ रहता है। बिल्वपत्र के आकार अलग–अलग होते हैं – कुछ अतिसूक्ष्म आकार के बिल्वपत्र होते हैं और अधिकांश बड़े–बड़े बिल्वपत्र रहते हैं। अगर बिल्वपत्र के तीनों दल समान रूप से तराशा हुआ और उद्धर्वोन्मुख हो तो उसे सर्वश्रेष्ठ बिल्वपत्र माना जाता है। प्रतियोगिता त्रिदल बिल्वपत्रों के बीच होती है। इनके अतिरिक्त पंचदल, षटदल, सप्त दल, अष्टदल, नवम् दल, दसदल, एकादश दल बिल्वपत्र की प्रदर्शनी में लगाये जाते हैं।

दोनों ही दलों के बिल्वपत्रों को वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग की सायंकालीन पूजा के पूर्व एक साथ सजाकर या पूजा के बाद भी एक साथ सजाकर तीर्थ पुरोहितों में से वयोवृद्ध जन सर्वश्रेष्ठ बिल्वपत्र की घोषणा करते हैं। इसके बाद रात्रि में बिल्व को सजाकर भजन–कीर्तन एवं स्थानीय झूमर, चौरा आदि का आयोजन किया जाता है, जिसमें यहाँ के तीर्थ पुरोहितगण गायक एवं श्रोता के रूप में भाग लेते हैं।

बिल्वपत्र तोड़ने के क्रम में ये लोग प्रारम्भिक सर्वेक्षण भी करते हैं जो कि श्रावण से दो माह पूर्व किया जाता है और जंगलों में जाकर चुने हुए बिल्वपत्रों के वृक्षों को ये चिह्न स्वरूप कपड़ा या धागा से बाँध देते हैं। इस क्रम में जिस वृक्ष में उत्तम कोटि का बिल्वपत्र पल्लवित होने की संभावना रहती है, उस वृक्ष को नवीन वस्त्र से अमावेष्टित कर देते हैं। ये पेड़ की छटाई भी करते हैं। बीच–बीच में ये जाकर उसमें निकलने वाले नये बिल्वपत्र के कोपलों को देखते रहते हैं और तद्नुसार ही ये निर्णय कर लेते हैं कि इस वृक्ष से उत्तमकोटि का बिल्वपत्र प्राप्त होगा। उत्तमकोटि के बिल्वपत्रों के अन्वेषण में कभी–कभी इन्हें सात–सात दिनों तक दुर्गम जंगलों और पर्वतों में भटकना पड़ता है। बिल्वपत्र की खोज की धुन में ये इतना व्यस्त रहते हैं कि इन्हें अपने घर–द्वार की सुधबुध तक नहीं रहती है और केवल बाबा वैद्यनाथ पर ही ध्यान रहता है। जनश्रुति के अनुसार यहाँ तक यह भी ज्ञात हुआ है कि कभी–कभी, घने जंगलों में इन्हें चीता, शेर, सर्प, भालू आदि भयंकर जंगली जीवों के दर्शन का सामना करना पड़ता है, लेकिन आश्चर्य का विषय यह है कि इन हिंसक पशुओं ने उन्हें जरा भी आघात नहीं पहुंचाया, यह बाबा वैद्यनाथ की असीम अनुकम्पा के सिवा और क्या कहा जा सकता है?

बिल्वदल की इस दुर्लभ परम्परा का प्रचलन आज भी वर्तमान है और सम्भवतः भारत के किसी भी ज्योतिर्लिंग के मंदिरों में या अन्य शिवालयों में इस प्रकार के बिल्वपत्र की प्रदर्शनी का आयोजन नहीं किया जा जाता है। बिल्वपत्र वैद्यनाथ को बहुत ही प्रिय है। इसका प्रसंग शिवपुराण, पद्मपुराण–पातालखण्ड, शिवरहस्य, कालिका पुराण और अन्य धार्मिक एवं ऐतिहासिक ग्रन्थों में विद्यमान है।

**हरिद्राकुण्ड :–** वैद्यनाथ मंदिर के पश्चिम में नगर थाना के पास एक प्राचीन सरोवर है, जिसेहरिद्राकुंड के नाम से जाना जाता है। प्राचीन समय में जब वैद्यनाथधाम आने के लिए रोहिणी स्टेशन का उपयोग किया जाता था। उस समय रोहिणी ग्राम ही बाजार का काम करता था। वैद्यनाथधाम नगर में प्रवेश के मुख्यमार्ग के निकट होने के कारण यात्रीगण इस तालाब में स्नान कर वैद्यनाथधाम के मुख्य द्वार में आते थे। किन्तु सन् 1883 ई० में वैद्यनाथधाम रेलवे स्टेशन बन जाने के बाद यात्रीगण उस ओर नहीं जाते हैं और वे केवल मंदिर एवं शिवगंगा पुष्करणी की ओर अग्रसर होते हैं। सन् 1929 ई0 में बंगाल के लोगों के

सहयोग से यहाँ दुर्गा पूजा की परम्परा प्रारम्भ हुई और अभी तक यह परम्परा जारी है। बालानन्द ब्रह्मचारी जब देवघर आये थे, तब इसी हरिद्राकुण्ड के निकट कुछ दिनों तक ठहरे थे।

देवघर के इतिहास के विभिन्न प्राचीन संदर्भों को देखने के बाद आधुनिक युग के ऐतिहासिक संदर्भ को भी स्पष्ट करना आवश्यक है। आधुनिक युग के इतिहास से तात्पर्य है स्वतंत्रता आंदोलन के काल का इतिहास। देवघर में स्वतंत्रता आंदोलन के क्षेत्र में अनेक कार्य हुए थे, किन्तु आधुनिक इतिहास के निर्माण में बंगालियों की पृष्ठभूमि अधिक रही है। यहाँ के अनेक प्रतिष्ठान भी बंगालियों की सांस्कृतिक चेष्टा के परिणाम हैं। सन् 1857 ई0 के सिपाही विद्रोह से भी यहाँ पर बंगाल के संन्यासियों का आना प्रारम्भ हो गया था। संन्यासी विद्रोह का संचालन वे लोग इसी पवित्र स्थल से करते थे। 1876 ई0 में स्वामी रामकृष्ण परमहंस यहाँ आये थे। सन् 1891–92 ई0 में स्वामी विवेकानन्द यहाँ कई बार आये। 19 वीं शताब्दी के अंतिम दशक में कांग्रेस की स्थापना के बाद स्वतंत्रता आंदोलन का तुमुल कोलाहल यहाँ भी प्रारम्भ हुआ और 1906 ई० से यहाँ के लोग स्वतंत्रता आंदोलन के साथ जुड़ने लगे। वारीन्द्र घोष, अरविन्द घोष और सखाराम देवस्कर जैसे शीर्षस्थ नेता देवघर में क्रांति का संचालन करने लगे। गोल्डन लीग क्रांतिकारियों का एक संगठन था और उसकी शाखा यहाँ स्थापित थी। वारीन्द्र घोष अपनी माँ के साथ रोहिणी में तारणी प्रसाद के मकान में रहते थे। तारणी प्रसाद उस समय बंगाल लेजिस्लेटिव काउन्सिल के सदस्य थे। देवघर के तीर्थ–पुरोहितगण इन लोगों के साथ थे। बंगाल के लोगों ने राष्ट्रीय आंदोलन की दीपशिखा को यहाँ प्रज्ज्वलित किया था। कुछ दिनों के बाद 1917–18 ई० में डॉ० लम्बोदर मुखर्जी संताल परगना में स्वतंत्रता आंदोलन का वातावरण बनने लगे। पंडित विनोदानन्द झा और शशिभूषण राय उनके अनुयायी के रूप में कार्य करते थे। देशबन्धु चित्तरंजन दास (1923) भी यहाँ स्वराज्य पार्टी का प्रचार–प्रसार कर रहे थे और स्वराज्य के लिए संघर्ष कररहे थे। इन्होंने यहाँ के बहुत से स्वयं सेवकों को तारकेश्वर मंदिर के भ्रष्ट महंथ को हटाने के लिए भेजा था और स्वयं भी वहाँ गये थे। डॉ० मुखर्जी की पत्नी श्रीमती उषा रानी मुखर्जी (1935) ने भी राष्ट्रीय आंदोलन का संचालन देवघर अंचल में किया था। ऐसा कहा जा सकता है कि सम्पूर्ण संताल परगना में

इन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन को लोकप्रिय बनाने को भरपूर चेष्टा की थी। पीछे यह फारवर्ड ब्लाक पार्टी के साथ संलग्न हो गये थे। इस बीच देवघर के स्थानीय तीर्थ पुरोहित भी पं० विनोदानन्द झा, पं० रामराज जजवाड़े, पं० शिवराम झा, पं० इन्द्रनारायण झा आदि के साथ स्वंतत्रता के संघर्ष में जुट गये थे। 1942 ई0 में देवघर के स्वतंत्रता आंदोलन के लिए व्यापक संघर्ष छिड़ा हुआ था और उसमें त्रिगुणानन्द खवाड़े, अशर्फीलाल कसेरा गोली लगने से शहीद हो गये थे। 17 दिनों तक सम्पूर्ण संताल परगना में अंग्रेजी शासन की बागडोर शिथिल पड़ गई थी। 1942 ई0 की क्रांति में देवघर का अपना एक अलग इतिहास है। उस समय तीर्थ पुरोहितों का एक दल जंगी समाज के नाम से विख्यात था, जिसका मूल उद्देश्य ही स्वतंत्रता की लड़ाई में भाग लेना था। देवघर के इन ऐतिहासिक संदों के अभिज्ञान के बाद ऐसे अनेक और दर्शनीय स्थल हैं, जिनकी स्थापना बंगाल के साधकों ने की है, जैसे नौलखा मंदिर, देवसंघ, कुण्डेश्वरी, नन्दनवन, सत्संगनगर, लीला मंदिर आदि। स्थानीय तीर्थ पुरोहितों में महान साधक बमबम ब्रहाचारी का एक आश्रम रिखिया रोड में अवस्थित है, जिसका निर्माण यहाँ के तीर्थ पुरोहितों ने बाद में करवाया है।

**नौलखा मंदिर** आज से 50 वर्ष पूर्व बना है, जिसमें बालमुकुन्द भगवान तथा श्री बालानन्द ब्रह्मचारी जी की प्रतिमा है। देवसंघ में नवदुर्गा की प्रतिमा है। श्री नरेन्द्र ब्रह्मचारी इसके संस्थापक थे। कुण्डेश्वरी में जगत्धात्री दुर्गा की मूर्ति है। यहाँ नवग्रह की भी मूर्ति विद्यमान है। यह नौलखा मंदिर से कुछ आगे में अवस्थित है। नन्दन पर्वत एक ऊँची पहाड़ी है। यहाँ शिव पार्वती का मंदिर है। यहाँ से देवघर नगर का अभिनव दर्शन किया जाता है। सत्संग रामास्वामी सम्प्रदाय के उपासकों की संस्था है। श्री अनुकूलचन्द्र जी इसके संस्थापक थे। यहाँ एक लघु पक्षी उद्यान है। यात्रीगण इस आश्रम का दर्शन करने जाते हैं। लीला मंदिर दुमका रोड में अवस्थित है। यहाँ कीर्तन–भजन एवं काली की उपासना होती है। अरुणाचल मिशन की यह संस्था है।

इतिहास गवाह है कि देवघर सर्वदा सांस्कृतिक एवं राजनीतिक गतिविधि का केन्द्र रहा है। रविन्द्रनाथ ठाकुर, बंकिम चन्द्र चटर्जी, शरतचन्द्र चटर्जी, रासबिहारी बोस, राजनारायण बोस, डॉ० महेन्द्र लाल सरकार, अरविन्द घोष, वारीन्द्र घोष, महात्मा गांधी, राजेन्द्र प्रसाद, नेताजी सुभाषचन्द्रचोस, इंदिरा गांधी विष्णु दिगम्बर ओंकारनाथ ठाकुर, जय

शंकर प्रसाद, माखनलाल चतुर्वेदी, सोखत राय ''बच्चन'', निराला, दिनकर, हजारी प्रसाद द्विवेदी, के०एम० मुंशी, विभूति भूष्ष कवादोपाध्याय, काका कालेलकर प्रभूति मनीषियों की यह पुण्यस्थली रही है। इन्हीं महापुरुषों को परम्परा से एक द्वीप प्रज्जवलित हुआ था, जिसे बिहार के लोग पंडित विनोदानन्द झा के नाम से आनते हैं। इन्होंने बिहार के मुख्यमंत्रित्व पद का वरण किया। स्वतंत्रता की लड़ाई की याद में शहीद आश्रम, आजाद चौक, रोनाल्ड पुल आज भी इतिहास को दुहरा रहा है।

इस प्रकार देवघर का इतिहास देवघर के मंदिरों का इतिहास है। आज देवघर जो कुछ पी । दिखलाई पड़ रहा है, वह इन मंदिरों का ही परिणाम है। अतीत के झरोखे से झाँकने के बाद ऐसा प्रतीत होता है कि देवघर सदैव समस्त भारतीय संस्कृति का वाहक रहा है। कम–से–कम बारह सौ वर्षों की ऐतिहासिक सामग्री से यह स्पष्ट पता चलता है कि देवघर जनपद नहीं होने पर भी जनता के हृदय–मंदिर में पवित्र मूर्ति के समान रहा, राज्य नहीं रहने पर भी सर्वदा देश के राजाओं और छोटे–छोटे सामन्तों के इष्टदेव की भूमि के रूप में आदर प्राप्त करता रहा और गंगा के किनारे नहीं रहने पर भी सदैव गंगाजल से धुलता रहा है। पर्वतों और छोटी–छोटी नदियों से आवृत्त देवगर प्राकृतिक सुषमा की अनुपम छटा को छिटका रहा है तथा संस्कृति का यह मेरुदण्ड है। विद्यापीठ जैसी राष्ट्रीय संस्था की भी स्थापना यहीं हुई। जब तक भारत में गंगा की पवित्र धारा प्रवाहित होती रहेगी, देवघर अपने गौरवशाली इतिहास को दुहराता रहेगा।

वैद्यनाथ मंदिर के ऐतिहासिक परिचय के क्रम में अनेक ऐतिहासिक और धार्मिक स्रोतों के माध्यम से इसके इतिहास को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। वस्तुतः ऐतिहासिक परिचय में स्थानीय साधनों का सहयोग लिया गया है और आज तक प्रचलित अप्रचलित सभी प्रकार के ऐतिहासिक संदर्भों को मुखर करने का प्रयास किया गया है।

पूर्वाचल में वैद्यनाथ मंदिर ऐतिहासिक बोध की आधार भूमि है। धार्मिक साहित्य में इसके इतिहास के संबंध में बहुश्रुत सामग्रीयाँ है। सम्पूर्ण भारत में द्वादश ज्योतिर्लिंग के मंदिरों की श्रृंखला में इसके ऐतिहासिक संदर्भ को सभी स्वीकार करते हैं। इस ज्योतिर्लिंग का उल्लेख साधना की परम्परा में भी प्रतिष्ठित है। निःसंकोच भाव से यह कहा जा सकता

है कि वैद्यनाथ मंदिर की इतिहास धार्मिक वाङ्गमय में स्वर्णाक्षरों में अंकित है और आसेतु हिमालय इसकी ख्याति फैली हुई है। निश्चय हो इसका इतिहास अत्यन्त ही सुदृढ़ नींव पर अबस्थित है। लिंगविग्रह आदि अनादिकाल से वर्त्तमान माना जाता है। किन्तु निर्माण की परम्पराओं के युग में ही वैद्यनाथ मंदिर का निर्माण स्वीकार करना होगा। इसमें कोई दो मत नहीं है कि वैद्यनाथ मंदिर का निर्माण सातवीं शताब्दी से लेकर 11वीं शताब्दी के मध्य हुआ।

अध्याय–5

# बैद्यनाथ धाम मंदिर का वास्तु और तकनीकी विश्लेषण

झारखण्ड के इस सुरम्य प्रदेश में स्थित वैद्यनाथ मंदिर के स्थापत्य के पुरातत्व की विवेचना के पूर्व यह जानना आवश्यक है कि मानव जाति ने स्थापत्य का प्रारम्भ अपने आवास से ही किया था। आदिम युग में स्थापत्य के जो स्वरूप मानव समाज के पास विद्यमान थे उसके संबंध में यह कहा जा सकता है कि वे प्राकृक्तिक उपादान ही थे। इस संबंध में प्राकृक्तिक गुफाओं और पर्वत की तलहटी को आदिम प्राकृक्तिक स्थापत्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। इस समय निवास के स्थापत्य के साधन सीमित थे। साथ ही जीविकोपार्जन के साधन भी प्राचीन स्थापत्य के अन्तर्गत प्रचलित थे। इन साधनों में नुकीले तेज हथियार वगैरह भी थे जो प्रस्तर और धातुओं के बने होते थे। केवल कला की शैलियाँ ही उस युग की जाति और मानव के लिए प्रकृक्ति के सत्व तक पहुँचने का मार्ग थीं। गार्डन चाइल्ड ने भी रंगमंच की स्थापना के क्रम में दक्षिणी पूर्वी स्पेन में मध्य सहारा के इनरोजान में और दक्षिणी अफ्रिका में भी छिदले चट्टानी आवासों में पाये जाने वाले चित्रों के बीच विलक्षण साम्य देखा। वहाँ प्राप्त चित्र अवश्य ही ऐतिहासिक हैं किन्तु सामान्यतः शिकारीगण भी जादुई उद्देश्यों को पूर्ति के लिए चट्टानों पर प्राकृतिक अथवा अर्द्धप्राक्तिक चित्र चित्रित या उत्कीर्ण किया करते थे और यह परम्परा परवत्ती युग में स्थापत्य कला की रूप में विकसित हो गई। सुब्बोंक ने कहा है कि प्राचीन युग में गॉल्स जो बनाये जाते थे वे घुमावदार होत थे और कुटिया भी उसी तरह से बनायी जाती थी जिसमें काष्ठ और कीचड़ का उपयोग किया जाता था। राजेन्द्र लाल मित्र ने इस तरह के स्थापत्य की चर्चा के प्रसंग में यह कहा है कि प्रारंभिक युग के इन स्थापत्यों में कष्टदायक श्रम लगता था और वे वृत्ताकार होते थे। इस तरह के स्थापत्य अमेरिका, अफ्रिका और ओसानिया के देशों में पाये जाते हैं।

उस समय स्थापत्य काल में काष्ठ, कीचड़, इंट, पत्थर आदि का व्यवहार होता था औरप्राचीनतम गृहों की कोटि में ऐसे ही स्थापत्य को रखा जाता था। किन्तु मंदिर इस स्थापत्य से अलगहोता था। मिश्र के पिरामिड को मानव स्थापत्य का सबसे प्राचीनतम

उपादान माना जाता है। वहाँपर जो मंदिर निर्मित हैं वे भी पिरामिड के ही समान हैं। ठीक इसी तरह असीरिया और बेबीलोनियामें जो राजप्रासाद हैं वे भी ठीक उसी प्रकार के हैं। ग्रोक के भी कुछ प्रासाद और देवगृह वहाँ केमैनेको वंश की 10वीं पीड़ी के बाद बने हैं। लगता है इस समय एक विश्व सम्पदा और संस्कृतिके क्षेत्र में मंदिर निर्माण कला या भवन निर्माण कला को सामाजिक पृष्ठ भूमि में सम्मान जन कस्थान प्राप्त होने लगा था। इस दिशा में अनेक प्रकार की बाधाएँ आयी होंगी क्योंकि मानव सर्वदाअपने स्थापत्य–चिंतन को स्वरूप प्रदान नहीं कर सकता है। यह निश्चित है कि स्थापत्य के प्रतिएक उत्कट अभिलाषा मानवजाति के मन और मस्तिष्क में हमेशा विद्यमान रही और इसीस्थापत्य प्रेम के विराट स्वरूप के रूप में भारत के विभिन्न मंदिरों और देव स्थानों की स्थापनाहुई।

जहाँ तक वैद्यनाथ मंदिर का प्रश्न है, यहाँ पर भी उत्तरी भारत के प्रचलित मंदिर स्थापत्य को स्वरूप दिया गया है जिसे चतुष्कोणात्मक मंदिर के रूप में जाना जाता है। इस स्वरूप का अपवाद कम ही मिलता है। कहीं–कहीं उत्तर भारत में ऐसे भी मंदिर मिलते हैं जहाँ शिखर का स्वरूप अलग है किन्तु बहुत सूक्ष्म अध्ययन करने के बाद यह पाया जाता है कि चतुष्कोणात्मक मंदिर का स्वरूप यहाँ नष्ट नहीं हुआ है। इस संबंध में यह कहा जाता है कि उत्तर भारत में प्रचलित मंदिर निर्माण की कला को प्रकाश वर्मा के देह गोपाल में ही मिला है। वहाँ के मंदिरों में स्थानीय शैली को महत्व दिया गया है। किन्तु शिखर के स्वरूप से यह ज्ञात होता है कि इसपर भारतीय मंदिर स्थापत्य का प्रभाव है और छठी शताब्दी के मध्य में यह स्थापत्य भारत से वर्माकी ओर उत्क्रमित हुआ। देह गोपाज को मंदिर नहीं कहा जा सकता है। वे तो दाह–संस्कार औरमरणोपरान्त स्थापित स्मारक हैं। इसलिए मंदिर स्थापत्य का सापेक्ष अनुकरण नहीं माना जा सकताहै। वैद्यनाथ मंदिर के स्थापत्य के परिवेश में यह भी कहा जा सकता है कि उत्तर भारत में जोमंदिर कला विकसित हुई उसमें बंगाल का विशेष स्थान है और बंगाल में जो मंदिर बने वे गुह्यकिया से संबंधित थे जिसका सम्बन्ध तंत्र से है। बंगाल में तांत्रिक अभिधान के आधार पर जोमंदिर बने उनके भू–आधार त्रिकोणात्मक हैं किन्तु मित्र ने इस त्रिकोणात्मक भूपटल वाले मंदिरोंको उत्तर भारत के आदि मदिरों की कोटि में नहीं रखा है। इन्हें पूर्णतः नवीन स्थापत्य माना है।उत्तर भारत में जो मंदिर स्थापत्य विकसित हुए हैं वे चतुष्कोणात्मक और

गोलाकार ही अधिक हैं। बंगाल, उड़ीसा, झारखंड और हिमालय की कंदराओं तक कहीं भी इस स्थापत्य का स्वरूप देखनेको मिल सकता है। कश्मीर के ज्येष्ठेश्वर मंदिर को भी इस क्रम में देखा जा सकता है। यह तख्तेसुलेमान पहाड़ी पर अवस्थित है। इनके भूपटल फैले हुए और कोणात्मक हैं। अग्निपुराण में भीचतुष्कोणात्मक मंदिर की कल्पना है। अग्निपुराण में यह बतलाया गया है कि प्रत्येक प्रासाद औरदेवालयों में चार भाग होना चाहिए। मानसार में भी इसी प्रकार के मंदिर स्थापत्य की प्रशंसा कीगई है। कभी–कभी इन मंदिरों में इसके विपरीत भी स्थानीय परिवेश मिलते हैं किन्तु मानसार औरअग्निपुराण में ऐसे मंदिर स्थापत्य की उपेक्षा की गई है। किन्तु दक्षिण भारत के मंदिरों में गोलाकारगर्भगृह की परम्परा है। केवल बिहार के बोधगया में स्थित प्राचीन मंदिर का आकार–प्रकार मंदिरस्थापत्य के सिद्धान्तों की श्रृंखला में एक नयी प्रणाली है।

वैद्यनाथ मंदिर के भूपटल को देखने से यह स्पष्ट आभास होता है कि प्राचीन शास्त्रीय परम्पराओं के साथ प्रतिभाजन के सिद्धान्त की यहाँ उपेक्षा हुई है और अग्निपुराण का सूत्र इस मंदिर के प्रकरण में ठीक–ठीक नहीं बैठता है। ऐसे तो उत्तर भारत में मंदिर स्थापत्य के छोटे–बड़े अनेक प्रकार देखने को मिलते हैं किन्तु वैद्यनाथ मंदिर के स्थापत्य से यह बात स्पष्ट होती है कि स्थापत्य सिद्धान्त के प्राचीन आधार पर ही यह आधारित है। राजाभोज ने राजमार्तण्ड नामक ज्योतिष ग्रन्थ में सोलह प्रकार के मंदिर स्थापत्य को स्थान दिया है जो इस प्रकार हैं:–

(1) आयत

(2) चतुरस्र

(3) वृत्त

(4) भद्रासन

(5) चक्र

(6) विश्वमावाह

(7) त्रिकोण

(8) मक्ताकृत

(9) दण्ड

(10) पण्वासनस्था

(11) मूर्जा

(12) वृहन्मुखा

(13) व्यजन

(14) कक्ष प्राकृक्तिका पंचमुखवृत

(15) धनुः

(16) सूर्प।

इन स्थापत्य स्वरूपों में आयत और भद्रासन को अत्यन्त ही आदर प्राप्त हुआ और भारतीय गृह–निर्माण में इसको प्राथमिकता दी गई। बंगाल में तो विशेषकर इस स्वरूप को अधिक महत्व दिया गया। यहाँ तक कि सामान्य नागरिकगण भी गृह निर्माण में भद्रासन को महत्व देते थे और यहाँ पर घर को भद्रासन के नाम से सम्बोधित किया जाता था। स्वास्थ्य और दीर्घ जीवन की दृष्टि से इस प्रकार के भवनों को सबसे अच्छा माना गया। डा. राजेन्द्र लाल मित्र ने तो यहाँ तक कहा है कि स्थापत्य के क्षेत्र में यह प्रकार रोमन्स और इटालियनों में भी प्रसिद्ध रहा है। मृच्छकटिकम् में भी इस प्रकार के भवन के निर्माण की चर्चा है। स्पष्ट है कि भारत के सभी हिस्से में चतुर्मुखी प्रासाद और देवालय बनाने की परम्परा लोकप्रिय हुई। इस प्रकार के भवनों में निवास करने वाले को सर्वत्र सफलता मिलती है और वे स्वस्थ्य और सानन्द रहते हैं। राजमार्तण्ड में वर्णित अन्य पण्व और मुर्जा शैली को प्राथमिकता नहीं मिली क्योंकि इससे मृत्यु और सभी प्रकार की हानियों की संभावना व्यक्त की गयी। मंदिर निर्माण में भूपटल को अधिक महत्व दिया गया और यह

बतलाया गया कि यदि भूपटल पूर्व की ओर ढाल हो तो मनुष्य की अभ्युन्नति होती है। यदि दक्षिण की ओर बढ़ा हो तो धन की प्राप्ति होती है किन्तु यदि पश्चिम की ओर झुकाव हो तो धन की हानि होती है और उत्तर की ओर ऊँचा हो तो कुछ अनिष्ट होता है। इस प्रकार इस प्रासाद निर्माण के स्वरूप को देवालयों के निर्माण में भी महत्व दिया गया और क्रमशः इन मान्यताओं की परम्परा धीरे–धीरे बलवती होती गई।

जब हम वैद्यनाथ मंदिर के स्थापत्य को इन सिद्धान्तों के आधार पर अधिगृहीत करते हैं तो ज्योतिर्लिङ्गों में प्रसिद्ध वाराणसी के ज्योतिर्लिङ्ग के मंदिर के सम्बन्ध में प्रचलित मान्यताओं और सामग्रियों की ओर हमारा चिंतन उन्मुख होता है। बनारस के मंदिर का आकार, ऊँचाई और शिखर सभी एक ही अनुपात में निर्मित हैं और 1.25से 1.5 और 2 से 2.5 तक के अनुपात में बनारस का मंदिर निर्मित है? क्या देवघर का वैद्यनाथ मंदिर भी इन्हीं अनुपातों के आधार पर निर्मित है। सामान्य रूप से वैद्यनाथ मंदिर को तीन हिस्सों में बाँटा जा सकता हैः

(1) कुर्सी (2) ढाँचा (3) चूड़ा या शिखर। जेन्स प्रिंसेप ने भी मंदिर स्थापत्य में इस स्वरूप को स्वीकार किया है किन्तु इसके अनुपात की चर्चा नहीं की है। हिन्दू मंदिरों की स्थापत्य कला में इस कोटि के मंदिर ही बनते रहे किन्तु मंदिर के आकार और ऊँचाई पर ध्यान दिया जाता था। कश्यप संहिता में 5 प्रकार के मंदिरों की रचना का वर्णन है जैसे शांतिका, पौष्टिका, जयदा, अभूता और सर्वकामा। इन विभिन्न नामों में मानवीय भावों को समाविष्ट किया गया है और उसी के अनुरूप मंदिर स्थापत्य को प्रमुखता दी गई है। कश्यप को वास्तुविद्या का प्रधान आचार्य माना गया है। इनके साथ ही पराशर और भारद्वाज की भी चर्चा की जाती है। प्राचीन काल में अर्चना, देवपूजा और देवालयों में चितकर्म को महत्व प्राप्त था। डा. चटर्जी ने यह स्वीकार किया है कि वास्तुविद्या का प्रकरण पुराणों और उपपुराणों में सर्वाधिक है। किन्तु भारत के विविध प्रदेशों में वास्तुशिल्प का विस्तार अपनी–अपनी शैली से हुआ जिसमें देशीय स्थापत्य का प्रकरण अधिक प्रशस्त हुआ और शास्त्रीय परम्परा की विधियाँ जहाँ की तहाँ रह गई। कश्यप शिल्प में पुराणों और उपपुराणों में वर्णित देवमंदिर निर्माण की सभी विधियों की चर्चा है। इसके साथ ही विभिन्न मूर्ति लक्षणों की भी व्याख्या की गई है। कश्यप शिल्प में 63 पटल से लेकर 81 पटल

पर्यन्त वास्तु शिल्प का वर्णन है और जिसमें चतुरस्र मंदिर की प्राचीन परम्परा का उल्लेख है। वैद्यनाथ मंदिर के आकार से चतुरस्र मंदिर की सीमा का स्पष्ट प्रतिफलन दृष्टिगोचर होता है किन्तु वैद्यनाथ मंदिर को बौद्ध मंदिर की परम्परा में यदि गिना जाता है तो यह तथ्यहीन प्रलाप है। केवल मठ शब्द के व्यवहार को इसका आधार मानना तर्कहीन है। लोक जीवन में मंदिर का रूढ़ अर्थ मठ के रूप में प्रचलित है। इससे स्पष्ट होता है कि लोक जीवन में मंदिर और मठ का व्यवहार आस्थापरक है। बौद्ध ग्रन्थों में वर्णित प्रतिमा और प्रासाद लक्षण के अन्तर्गत इस मंदिर के स्वरूप को सम्यक वर्णन नहीं मिलता है। बोधगया के बुद्ध–मंदिर के साथ भी इसकी तुलना नहीं की जा सकती है, केवल चतुरस्र आकार की प्राप्ति है। महायान सम्प्रदाय में प्रतिमा और मंदिर का महत्व अधिक है किन्तु हीनयान सम्प्रदाय में यह लक्षण अधिक स्पष्ट नहीं है। साथ ही बौद्धों के यहाँ जो देवालय या प्रतिमाएँ बनी हैं, उन्हें हिन्दू शास्त्रों से विपरीत परिस्थिति में नहीं देखा जा सकता है। पुराणों की अपेक्षा उपपुराणों में वास्तुविद्या का वर्णन अधिक है। विष्णुधर्मोत्तर, नरसिंह पुराण, क्रियायोगसार पुराण, कल्किपुराण, आदिपुराण, साम्बपुराण, सौरपुराण, धर्मपुराण, देवीपुराण, कालिकापुराण, देवीभागवत, नन्दीपुराण, शारदापुराण और वृहन्नन्दिकेश्वर पुराण में वर्णन है। विष्णुधर्मोत्तर पुराण ही एक ऐसा पुराण है जो वास्तु विद्या की समस्त प्राचीन मान्यताओं के साथ नवीन दृष्टिभेद को भी स्पष्ट करता है। डा. ब्यूलर ने इस ग्रन्थ को ईस्वी सन् की 5वीं शताब्दीके बाद का माना है। विन्टरनीज ने विष्णुधर्मोत्तर पुराण को 628 ई. से लेकर एक हजार ईस्वी बीच की रचना के रूप में स्वीकार किया है। स्टेला और क्रेमरोश ने ईसा की 5वीं शताब्दी में में इसकी रचना को स्वीकार किया है। विष्णुधर्मोत्तर पुराण के अन्तर्गत चित्र सूक्त विभिन्न देव प्रतिमाको, मंदिर स्थापन और मूर्ति प्रतिष्ठा का वर्णन द्वितीय खाष्ट प्रगतिस्तत रूप से किया गया है। ही चटर्जी यह मानते हैं कि हिन्दू देवालयों की स्थापना और प्रतिमा की स्थापना में प्राचीन युग और मध्ययुग महत्वपूर्ण है क्योंकि इन्हीं दो युग–खण्डों में हिन्दू देवालयों को व्यापक परिणति प्राप्त हुई और इसका व्यापक वर्णन वृहद् संहिता में भी मिलता है। भट्टोत्पल ने भी वाराहमिहिर की बृहदसहिता को देवालयों और प्रतिमा लक्षण के क्रम में स्वीकार किया है। इन संदों से इस बात का पता नहीं चलता है कि वैद्यनाथ मंदिर के निर्माण में उनके पूर्ण आधारों को स्वीकार किया गया। इतना तो अवश्य स्पष्ट हो जाता है कि वैद्यनाथ मंदिर का निर्माण देवमंदिर की हिन्दूशास्त्रीय पद्धति

पर ही आधारित है और उसी के आधार पर इसे निर्मित किया गया है। ऐसे प्रचलित तंत्र शास्त्रों में भी चित्र (द्वारा) मूर्ति और मंदिर निर्माण आदि की चर्चा है। लेकिन तंत्रशास्त्रों में मंदिर निर्माण के प्रसंग में सम्बन्धित शक्ति–विग्रह को ही महत्व दिया गया है। देव प्रतिमा और देवालय के निर्माण में सौन्दर्य को हमेशा महत्व दिया गया है। वैद्यनाथ मंदिर के स्वरूप को देखने से सम्पूर्ण रूप से स्पष्ट नहीं होता है कि किस शैली विशेष के प्रकार से यह निर्मित है। अतः यह कह सकते हैं कि देशीय कला के अन्तर्गत सीधी–सादी शैली में इस मंदिर को बनाया गया है, ऐसा स्पष्ट परिलक्षित होता है। वास्तु विद्या में सुलक्षण को बहुत महत्व दिया गया है और सुलक्षण ही समस्त सौन्दर्य का आधार है। वैद्यनाथ मंदिर भी इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है। परवर्ती समय में अर्थात ईस्वी सन् के एक हजार वर्ष बाद निर्मित मंदिरों में इस प्रकार फलितार्थ विधान को स्वीकार किया गया है किन्तु वैद्यनाथ मंदिर इससे पूर्व का बना हुआ है। इसलिए इस मंदिर में अभिलाषार्थ चिन्तामणि, शिल्परत्नम् के वर्णित मंदिर शिल्प से इसका कोई योगा योग नहीं है। इन ग्रन्थों में कलात्मक अभिधा का उल्लेख अधिक है और चित्र विषयक चर्चाएँ हैं। वैद्यनाथ मंदिर में ऐसी कोई पुरातात्विक बातें नहीं मिलती हैं जिनकी तुलना वास्तु ग्रन्थों में वर्णित देवालयों से की जाय। इसलिए वैद्यनाथ मंदिर का स्थापत्य मध्यकाल के बहुत पूर्व का है और क्रमशः इसका निर्माण होता गया। एक क्रम में इसे नहीं बनाया गया। पूर्व में यह निश्चय ही गुफा के आकार का मंदिर रहा होगा जैसा कि अभी भी इसके आकार को देखने से स्पष्ट होता है। वैद्यनाथ मंदिर में चतुरस्र शैली ही प्रधान है और इसके आकार को मिथिला में प्रचलित तिरहुत शैली से ही सम्बन्धित किया जा सकता है। ऐसे बनारस का प्राचीन मंदिर भी उसी शैली पर आधारित था। केवल मंदिर के कलश और शिखर के भाग में बनावट का जो प्राकृक्तिक स्वरूप है, उसे ही हम उड़ीसा शैली से सम्बन्धित कर सकते हैं। वैद्यनाथ मंदिर की प्राचीनता का सबसे बड़ा प्रमाण यह भी है कि इसे हिन्दू वास्तु कला का प्रारम्भिक रूप कह सकते हैं। इसे हम सारसैनिक शैली से बिल्कुल अलग रख सकते हैं। बंगाल में प्रचलित मंदिर स्थापत्य से भी यह अलग है क्योंकि वहाँ पर मेहराबदार छतें होती हैं। इसे हम सादगी में उड़ीसा के मंदिर स्थापत्य से जोड़ सकते हैं। किन्तु मौलिकता में यह तिरहुत शैली से ही प्रभावित है, जो यह बतलाता है कि वैद्यनाथ मंदिर न तो दक्षिण के किसी मंदिर स्थापत्य से मेल खाता है और न मध्य भारत के किसी मंदिरों से मेल रखता

है। इसकी शैली पूर्णतः देशीय है और उड़ीसा शैली जो कि 7वीं शताब्दी के मध्य में विकसित हुई, से पूर्व की है। मुख्य गर्भगृह बहुत ही छोटा है और भूपटल पर पत्थर की चट्टानें मढ़ीवैद्यनाथ मंदिर में गई हैं। मंदिर का सम्पूर्ण दीवार भी पत्थरों का ही है। गर्भगृह के मध्य में लिङ्ग विग्रह स्थापित है। दीवारों पर प्लास्टर भीतर में नहीं के बराबर है। बाहरी भाग में प्लास्टर का अंश है। यह पूर्व की पुराकालीन शैली की ओर संकेत करती है। मंदिर का सम्पूर्ण आकार चारों ओर एक समान नहीं है। लगता है कि मंदिर के स्वरूप को दक्षिण भारतीय स्थापत्य से समन्वित करने का प्रयास कभी किया गया है। प्लास्टर में प्राचीन वास्तु शैली का मिश्रण है। वैद्यनाथ मंदिर पश्चिम–दक्षिण की ओर बरामदों से घिरा हुआ है। पूर्व की ओर बाह्य कक्ष है जिसे अन्तरालय कह सकते हैं। इसलिए पूर्णतः चतुरस्र का सिद्धान्त बाह्य परिधि में नहीं स्वीकार किया गया है। मंदिर का मौलिक आकार चतुरस्र अवश्य है किन्तु उसके आस–पास के चतुर्दिक का अंश कालान्तर में निर्मित हुआ जिसे सुविधा सापेक्ष निर्माण की दृष्टि से देखा जा सकता है। स्थानीय पत्थरों का ही सम्पूर्ण निर्माण है।

वैद्यनाथ मंदिर का शिखर भुवनेश्वर के मंदिर के समान है यद्यपि शिखर बहुत ऊँचा नहीं है किन्तु समान माप पर आधारित है। शिखर पर निर्दिष्ट जाति के लोग ही चढ़ते हैं और वहाँ चढ़ने के लिए कोई सीढ़ी नहीं है। शिखर की बनावट में वास्तुशास्त्रीय आधार को महत्व दिया गया है। वैद्यनाथ मंदिर के सामान्य स्वरूप के प्रसंग में इसकी कुर्सी के सम्बन्ध में जानकारी अपेक्षित है। इसकी कुर्सी भूपटल से नीचे ही है क्योंकि लिंग विग्रह जहाँ स्थापित है, वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में वह स्थल अत्यत ही निम्नतल का है। इससे यह प्रमाणित होता है कि यह मंदिर प्राचीन शैली का है क्योंकि मंदिर वेदिका निर्माण के युग से पूर्व ऐसा वास्तुशास्त्र प्रचलित था।

इसी तरह कलश स्थापत्य भी वास्तुशास्त्र से सम्बन्धित है। वैद्यनाथ मंदिर के गुम्बद में स्वर्ण कलश है जिसे महाराजा गिद्धौर के पूर्वजों ने वैद्यनाथ की भक्ति के अर्पण–समर्पण पर स्थापित करवाया है। कलश में उनके पूर्वजों के नाम भी लिखे हुए हैं। आर.एल. मित्र ने भुवनेश्वर, पुरी और झारखण्ड के इस मंदिर के कलश को देखकर इसकी मौलिकता को स्वीकार किया है। कलश का आकार, गर्दन और अलंकरण यद्यपि आधुनिक बनावट को

स्पष्ट कर रहा है। और इसे पूर्णतः भारतीय कला के परिणाम से ही नहीं जोड़ा जा सकता है, अपितु इसका सम्बन्ध भारतीय कला से भिन्न कलाओं से भी है। प्राचीन युग में इसे घड़े के रूप में भी मान्यता प्राप्तथी।

वैद्यनाथ मंदिर का भूपटल–आकार चतुर्मुखी है। इसकी ऊँचाई, इसकी बनावट और इसके अन्तरालय मंदिर की ऊँचाई से एक तिहाई के भाग में फैले हुए हैं। मंदिर की छत के भीतर भी पत्थर का ही अष्टदल कमल बना हुआ है जिसमें एक कीमती पत्थर मण्डित है और जिसे चन्द्रकान्त मणि के नाम से सम्बोधित किया जाता है। मंदिर में दिवारात्रि दीप प्रज्ज्वलित रहने के कारण उसकी कालिख ऊपर तक चली जाती है और ऊपर उसकी अनेक परतें जम गयी हैं। इससे निरन्तर जल स्रावित होता रहता है जो लिंग विग्रह पर ही गिरता है। वैद्यनाथ मंदिर एक वृहदाकार परिसर के मध्य में अवस्थित है जो कि दीवार से चारों ओर से घिरा हुआ है। इस प्रकार कलश की बनावट से यह नहीं प्रतिभासित होता है कि बनारस की प्राचीन मंदिर शैली का अंश यहाँ पर कायम रह सका। इतना अवश्य है कि यह मंदिर कालान्तर में बंगाल और उड़ीसा में प्रचलित स्थापत्य के अनुसार है। वैद्यनाथ मंदिर में कोई मंडप नहीं है जहाँ पर नृत्यगीत किया जा सके किन्तु प्रांगण में पर्याप्त स्थल है जहाँ नृत्यगीत का आयोजन किया जा सकता है। कलश के ऊपर में पंचशूल अवस्थित है जो शिव के पंचमूर्ति आकार को इंगित करता है और यहाँ प्रचलित पंचमकार उपासना के महत्व को भी लोकप्रियता प्रदान करता है। शिव के मंदिरों में पंचशूल की परम्परा केवल वैद्यनाथ मंदिर में ही है अन्यत्र नहीं। त्रिशुल त्रिशक्ति का प्रतीक है जिसे ज्ञान, इच्छा और क्रिया के रूप में जाना जाता है। सिंधुघाटी सभ्यता में भी त्रिशूल का व्यवहार और भावार्थ होता है। वहाँ प्राप्त शिव की त्रिमुखाक्ति से भी इसका प्रचलन स्पष्ट होता है। इन चित्रों में शिव के तीन चेहरे हैं, हाथ दोनों ओर घुटनों पर रखे हैं और शिव पालथी पारकर पूर्ण योग की अवस्था में एक तिपाई पर बैठे हैं। तिपाई के दोनों ओर जानवरों का चित्रण है। सर जॉन मार्शल इरो हिन्दूकालीन शिव का हो प्राचीन रूप मानते हैं। मैके भी इसे शिव मानते हैं। त्रिकोण को ही त्रिशूल माना जाता है। पूर्वपाषाण युग में भी त्रिशूलाकृक्ति के हथियार थे। त्रिशूल की लोकप्रियता लौहयुग में अधिक हुई। भारत के विभिन्न भागों में धातुओं के व्यवहार में समानता क्रमशः आयी। उत्तर भारत में तास्त्रयुग के बाद लौहयुग आया। दक्षिण

भारत में प्रस्तर युग के बाद सीधे लौडयुग आया। इसी ऐतिहासिक मान्यता के क्रम में शिव के त्रिशूल आयुध का निर्माण पहले दक्षिण भारत में माना जाता है। इसी युग में आयुधों का अधिक विस्तार हुआ किन्तु यह सत्य है कि ताम्रयुग और लौहयुग के आविर्भाव से ही हम ऐतिहासिक युग में चेतना के साथ प्रवेश करते हैं। ताम्रयुग का प्रारम्भ सिंधुघाटी की सभ्यता में हुआ। यहाँ स्वास्तिक का चिह्न मिला। अभिनवगुप्त ने भी त्रिशूल का समर्थन किया है।

किन्तु मंदिर स्थापत्य में पंचशूल की उपस्थिति पूर्णतः तांत्रिक अभिचार को स्पष्ट करती है। इसे कालमूर्ति की शक्ति के रूप में मान्यता है। यह किसी को स्थिर नहीं रहने देता है। पंचशूल के पीछे पंचमुखी शिवलिंग को भी आधार माना जाता है। मयमत में भी पंचशूल की चर्चा है जिसे पद्मपीठ के नाम से सम्बोधित किया गया है। टी. गोपीनाथ राव ने हिन्दू अभिलेख में इसकी चर्चा की है। पुरातत्व की दृष्टि से पंचमुखी शिवलिङ्ग मथुरा के संग्रहालय में सुरक्षित है। इसका ऊर्ध्वास्थित पाँचवाँ सिर छोटा हो गया है। पंचशूल का मूल सम्बन्ध शिवतत्व से है। शिव तत्त्व और योग क्रिया समानार्थक है। योग में मूल शक्ति को मेरुदंड के पाँच चक्रों में स्थापित पंचामृत माना गया है। एक–एक चक्र में एक–एक तत्व का अधिष्ठान है। पंचतत्व, पंचचक्र और पंचेन्द्रियाँ ये परस्पर सम्बद्ध हैं। मूलाधार (पृथ्वी) स्वाधिष्ठान (जल), मणिपुर (तेज), अनाहत (वायु) और विशुद्धि (आकाश) ये पंच भौतिक शक्ति के केन्द्र हैं। इनसे परे छठा आज्ञाचक्र अभौतिक है। इन्हीं का पंचधा विकास मनुष्य के पाँच इन्द्रियों के द्वारा अभिकल्पित है। पंचशूल की प्रतीकात्मकता पंचप्राणों में अन्तर्निहित समस्त शक्तियों को प्रगट करती है। एक ही शक्ति त्रैगुण्य में त्रिधा और पंचप्राण रूप में पंचधा कही जाती है। ये पाँचों पृथक होते हुए भी सम्मिलित हैं। वैद्यनाथ मंदिर की स्थापत्य कला में यह पंचमुखी शिवलिंग और शिव के मंदिर में पंचशूल के रूप में प्रसिद्ध है। अद्वैत शिव की एक संज्ञा पंचानन है।

ऐतिहासिक दृष्टि से पंचमुखी शिवलिंग की परम्परा कुषाण काल में प्रारम्भ हुई। विमकफिस के सिक्के पर भी शिव के विग्रह मिले हैं। इस युग में पंचमुखी नागों के भी अनेक चित्र मिलते हैं। इस प्रकार पंचसंख्यात्मक निकृक्ति कुषाणकाल की देन है। शिवाराधन के क्षेत्र में यह परम्परा स्थायी हो गई। इलाहाबाद के समीप भीटा में पंचमुखी

शिव की मूर्ति इसका प्रमाण है। पंच शब्द की सनातन मान्यता इतनी बलवती हो गयी है कि पंचदेवोपासना धार्मिक क्रिया–कलाप का अंग बन गयी। इसी समय पंचलिंग की स्थापना को व्यापक लोकप्रियता मिली। शिवकांची में पृथ्वी तत्त्व का लिंग, जम्बूनाथ में जल लिंग, अरुणाचल पर तेज लिंग, कालहस्तिगिरि पर वायु लिंग, चिदम्बरम में आकाश लिंग और छायवन में छायवनेश्वर लिंग स्थापित हुए। जहाँ तक वैद्यनाथ मंदिर में पंचशूल की स्थापना का प्रश्न है, इसका सम्बन्ध पूर्णतः तांत्रिक रहस्य से है। श्रीचक्र में षोडशदल कमल को पंचभाग करने की व्यवस्था है। वैद्यनाथधाम में भी श्रीविद्या की उपासना होती है। इन्हें राज–राजेश्वरी के नाम से सम्बोधित किया जाता है। त्रिपुरा में शिवशक्ति का एकात्मक रूप माना जाता है। उनके हाथ में अंकुश, पाश, ईक्षुदण्ड और पाँच पुष्पों से निर्मित तीर हैं। अंकुश घृणा, पाश इच्छा, पंचपुष्प शब्द, स्पर्श, रस, रूप और गंध हैं। ईक्षुदंड बुद्धि का प्रतीक है। 8वीं शताब्दी से ही श्रीचक्र की आराधना को शैवपीठों में लोकप्रियता मिली है। वैद्यनाथ मंदिर में भी पंचशूल लगाने की परम्परा उसी समय से प्रारम्भ हुई है। श्रीयंत्र का सम्बन्ध शक्तिपीठों से है। इस दृष्टि से भी वैद्यनाथधाम एक शक्तिपीठ है। इसे हृदयपीठ के रूप में अभिज्ञापित किया जाता है। वैद्यनाथ ज्योतिर्लिङ्ग की आराधना कामद् लिंग के रूप में की जाती है। श्रीचक्र में भी सृष्टि काम की आराधना की जाती है। पंचशूल की उपस्थिति 'शिवः शक्त्यायुक्तो' की अंतिम परिणति है। त्रिपुर सुन्दरी के सिंहासन के स्तम्भ के स्थान में पाँच मूर्तियाँ हैं, इसे साधक क्षेत्र में पंचब्रह्म और पंचप्रेत के नाम से जाना जाता है। पंचशूल की स्थापना का समर्थन ज्ञानार्णव तंत्र भी करता है। लिंग पुराण में भी पंचशूल के व्यावहारिक पक्ष पर प्रकाश डाला गया है। यज्ञ वैभव खण्ड भी पंचशूल के तथ्य को उजागर करता है।

अतः यह कहा जा सकता है कि वैद्यनाथ मंदिर में पंचशूल की स्थापना के पीछे तांत्रिक साधना की स्थिति का बोध वर्तमान है। पूर्व मध्यकालीन भारत में धार्मिक जागरण के फलस्वरूप वैद्यनाथ मंदिर में पंचशूल की स्थापना की परम्परा वर्तमान है। वस्तुतः पंचशूल में अद्वैतवाद का अद्वैतभाव छिपा है। नागर और देशीय शैली की मिश्रित प्रणाली से निर्मित इस मंदिर में पंचशूल की उपस्थिति तांत्रिक सम्प्रदाय की मान्यता को स्पष्ट कर रही है।

वैद्यनाथ मंदिर की बनावट में चतुष्कोणात्मक मंदिर आकार का स्वरूप तो भूपटल से लेकर शिखर पर्यन्त दृष्टिगोचर होता है किन्तु इसकी स्थापत्य व्यवस्था में भोग मंदिर का वर्णन नहीं मिलता है। वैद्यनाथ मंदिर के मुख्य द्वार के प्रवेश पूर्व मध्यम खंड है जिसमें लम्बाई अधिक और चौड़ाई कम वाली जगह है जिसे मध्यम खण्ड के नाम से जाना जाता है और प्रत्येक ऋतु में जो वैद्यनाथ ज्योतिर्लिङ्ग के प्रति भोग अर्पित किया जाता है उसे इसी स्थल में रखा जाता है, इसलिए दक्षिण के विशाल भोग मंदिर के समान यहाँ भोग मंदिर नहीं है किन्तु लघु आकार का भोग मंदिर अवश्य है। इस भोग मंदिर में प्रवेश करने के लिए दक्षिण–उत्तर और पूरब की ओर से द्वार है। पूर्व का द्वार एक ऐसा द्वार है जो बाहर से ही वैद्यनाथ ज्योतिर्लिङ्ग के विग्रह का प्रत्यक्ष दर्शन कराता है। वैद्यनाथ मंदिर में स्थापित ज्योतिर्लिङ्ग विग्रह और पार्वती मंदिर में स्थापित जयदुर्गा और त्रिपुर सुन्दरी के विग्रह सामान्य रूप से एक ही रेखा में परिदर्शनीय हैं। मध्यम खण्ड को भोग मंदिर के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। इस भोग मंदिर की छत भी पत्थरों से ही मढ़ी हुई है। कहीं भी ईंट का प्रयोग नहीं है। इसकी दीवारें भी कलात्मक चित्रों से युक्त नहीं हैं और मुख्य मंदिर के भूपटल से इसकी बनावट कुछ ऊँची ही है किन्तु वैद्यनाथ मंदिर के साथ इसका निर्माण नहीं हुआ है। इसे परवर्ती समय में बनाया गया है। इसकी दीवारें काफी मोटी हैं और पूर्णतः एक दूसरे पत्थर के ऊपर रखकर निर्मित हैं। इसे पवित्र प्रवेश मंडप के रूप में भी स्वीकार किया जा सकता है। वास्तुकला की दृष्टि से इसे ग्रेसियन मंदिरों के आकार का भी स्वीकार किया जा सकता है। मित्र ने ग्रीक देश के मंदिरों के भी इस स्थापत्य पर निर्मित होने की चर्चा की है। भुवनेश्वर के मंदिरों में भी ऐसी बनावट मिलती है किन्तु पुरी और कोणार्क के मंदिर में कलात्मक शैली का स्वरूप देखने को मिलता है।

वैद्यनाथ मंदिर के स्थापत्य की विशिष्टता का सबसे बड़ा नमूना यह है कि यह प्राचीन हिन्दूशास्त्रीय धार्मिक पद्धति पर आधारित है क्योंकि इस मंदिर के मुख्य द्वार और बहिर्द्धार दोनों ही पूर्वाभिमुख हैं। इससे यह प्रमाणित होता है कि उगते हुए सूर्य की प्रथम रश्मि से ज्योतिर्लिङ्ग विग्रह को स्नात होने का सहज ही अवसर प्राप्त हो। इतना ही नहीं यह अदृश्य ईश्वर के स्वरूप के अदृश्य प्रतीक का विधान भी प्रस्तुत करता है। इस प्रकार के मंदिर केवल भारतीय परिवेश में ही बनते थे। मित्र ने स्वीकार किया है कि एक्रापौलिश

अटीका, आमोनिया और सिसली में निर्मित मंदिर भी इसी शैली पर आधारित हैं। उन देशों की चर्चा के व्यापक परिवेश को प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं है किन्तु इतना तो कहा जा सकता है कि भारतीय परिवेश में ऐसे मंदिर अधिकांश बने। छोटे–छोटे मंदिरों में इस नियम की उपेक्षा की गयी और उन्हें सुविधानुसार पश्चिम–दक्षिण और उत्तर की ओर मुँह करके बनाया गया।

जहाँ तक वैद्यनाथ मंदिर के सम्बन्ध में पर्यालोचन का प्रश्न है। बंगाल और पूर्वी भारत में अधिकांश दक्षिण और पश्चिम मुँहवाले मंदिर बने। पूर्व और उत्तर मुखवाले मंदिर नहीं के बराबर बने। धार्मिक संस्कारों के प्रतिपादन में पुरोहित गण हमेशा धार्मिक अभिचारों का सम्पादन पूर्व की ओर मुँह करके ही करते हैं। विभिन्न पुराणों में इस सम्बन्ध में चर्चाएँ विद्यमान हैं। विशेषकर कालिका पुराण में भी लिखा है कि उत्तर की ओर मुख करके शिव की आराधना करनी चाहिए। इस संदर्भ से यह स्पष्ट नहीं होता है कि वैद्यनाथ मंदिर उत्तराभिमुख है। यह तो पूर्णतः पूर्वाभिमुख मंदिर है। इसी प्रकार के मंदिर (जगन्नाथपुरी) भुवनेश्वर में भी हैं और यहाँ पुरोहित को दक्षिणाभिमुख होकर भी बैठना पड़ता है। शास्त्रों की भी परस्पर विरोधी चर्चाएँ हैं जैसे रुद्रयामल में पूर्वाभिमुख का निषेध और शिव पूजा के प्रसंग में पश्चिम–उत्तर दिशा का निषेध है। शास्त्रों में अनेक प्रसंग हैं जिनमें एकवाक्यता नहीं है। पूर्वाभिमुख का मंदिर यह प्रमाणित करता है कि पूर्व और उत्तर दिशा का मुखवाला मंदिर बंगाल और पूर्वांचल में बना। वैष्णवों में तो विशेषकर उत्तर और पूर्व दिशा को श्रेयस्कर माना गया है। मिथिला के महामनीषी वाचस्पति मिश्र ने त्रिकाल प्रार्थना के सम्बन्ध में यह कहा है कि प्रातःकालीन प्रार्थना पूर्व दिशा की ओर, सायंकालीन प्रार्थना पश्चिम की ओर, रात्रिकालीन प्रार्थना उत्तर दिशा की ओर मुख करके करना चाहिए। इस दृष्टि से वैद्यनाथ मंदिर के स्थापत्य की चर्चा में शास्त्रीय स्वरूप विद्यमान है।

वैद्यनाथ मंदिर की बनावट में यह बात भी है कि सम्पूर्ण मंदिर का स्वरूप पिरामिड के आकार के सादृश्य को प्रकट करता है। मंदिर की ऊँचाई काफी अधिक नहीं होने पर भी तीन मील की दूरी से कहीं से भी मंदिर का शिखर परिदर्शनीय है। प्रातः कालीन उगते सूर्य के समय और सायंकालीन अस्ताचलगामी सूर्य के समय भी सूर्य की ज्योत्स्ना से यह मंदिर धुलता रहा है। वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में जो चारों ओर दीवार है वह भी

चतुष्कोणात्मक ही है और उसकी लम्बाई–चौड़ाई का अनुपात भी एक है जो कि वैद्यनाथ मंदिर को मुख्य केन्द्र मानकर निर्मित है। यदि एक दूसरी परिधि बनाई जाय तो पूर्व और पश्चिम में निर्मित द्वारों की परम्परा स्पष्ट होती है। प्राचीन काल में राजा के किले में चार द्वार बनाने की परम्परा थी और उसे प्रशस्त माना जाता था। वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में भी प्राचीन काल में चार द्वार थे जिसे सर्वतोभद्र कहा जाता था। विश्वकर्मा प्रकाश भी इसका समर्थन करता है किन्तु विश्वकर्मा प्रकाश में जाता और गृह निर्माण के क्रम में विविध कलात्मक अभिधान की भी चर्चा है। शिलानिर्मित मंदिर की भी है। वैद्यनाथ मंदिर भी शिला निर्मित है। सर्वतोभद्र को वैदिक परिपाटी पर यह निर्मित है। इसलिए शिल्ला का प्रयोग इसमें स्वाभाविक है। विश्वकर्मा प्रकाश यह मानता है कि यह नामक भवन के लिए शिलाओं का प्रयोग होता था और इस दृष्टि से वैद्यनाथ मंदिर में शिलाओं का ही प्रयोग है जो कि परवर्ती समय का बनाया हुआ है। एक बात और यह है कि विश्वकर्मा प्रकाश में जिय प्रस्तर खंड की चर्चा है, उसमें यह लिखा है कि मंदिर गृह की शिला का जो आधार हो, यह दूद, मनोहर एवं परिमाण के आधार पर हो और न अधिक बड़ा हो और न अधिक छोटा तथा काले रंग के पत्थर का हो। विश्वकर्मा प्रकाश और परवर्ती ग्रन्थों के जो निर्देश हैं उससे इसका साध्यत्व नहीं है। वैद्यनाथ मंदिर के प्रस्तर खंडों का प्रसंग विश्वकर्मा प्रकाश से पुष्ट होता है। इससे प्रस्तुत मंदिर की स्थापत्य कला का सम्बन्ध ऐतिहासिक सिद्ध होता है। विभिन्न देव मंदिरों के निर्माण की महत्ता के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि विश्वकर्मा प्रकाश में शिला द्वारा निर्मित मंदिर को अत्यन्त ही श्रद्धा से देखा गया है। साथ ही वैद्यनाथ मंदिर चूँकि ज्योतिर्लिङ्ग का एक मंदिर है, इसलिए ज्योतिर्लिङ्ग के प्रसंग में तो नहीं लिङ्ग पूजा के प्रमाण से पीठिका निर्माण की चर्चा है। पीठिका के आधे भाग के प्रमाण से भी भौत्ति का निर्माण किया जाता है और बाहर की भीत्ति के प्रमाण से ऊँचाई का उद्बोधन होता है। मंदिर की दीवार की ऊँचाई से शिखर की ऊँचाई दुगुनी होती है और शिखर की ऊँचाई से चार गुणा मान के बराबर प्रदक्षिणा की जगह का विस्तार होता है। इस प्रकार मंदिर के निर्माण के प्रसंग को विश्वकर्मा प्रकाश में प्रस्तुत किया गया है। इस प्रसंग में यदि हम वैद्यनाथ मंदिर के स्थापत्य पर विचार करते हैं तो लिङ्ग विग्रह के आयत के अनुसार बेदी निर्मित है किन्तु पीठिका के आधे भाग के प्रमाण से भीत्ति बनाने की बात का भाव सही नहीं जान पड़ता है क्योंकि वैद्यनाथ मंदिर की भीत्ति

की चौड़ाई मंदिर के गर्भगृह के बराबर है। साथ ही सम्पूर्ण मंदिर के आकार में भीत्ति की ऊँचाई से शिखर की ऊँचाई दुगुनी का सिद्धान्त भी खंडित हो जाता है क्योंकि मंदिर के गर्भगृह में स्थित भीत्ति की ऊँचाई से शिखर की ऊँचाई सात–आठ गुनी अधिक है।

जहाँतक प्रदक्षिणा की जगह की बात है यह सिद्धान्त भी विश्वकर्मा प्रकाश के सिद्धान्त से सम्पुष्ट नहीं होता है। वैद्यनाथ मंदिर के गर्भगृह के बाहर प्रदक्षिणा का आधार स्पष्ट है जिसका सम्बन्ध मुख्य मंदिर से अलग है अर्थात प्रदक्षिणा में मुख्य ज्योतिर्लिङ्ग विग्रह के प्रत्यक्ष दर्शन का आधार नहीं है। यहाँ पर प्रदक्षिणा के सम्मुख भाग में मंडप गृह भी नहीं है। मंदिर के मुख्य द्वार से निकलने का मार्ग भी संकीर्ण है। साथ ही ज्योतिर्लिङ्ग विग्रह के चारों ओर जो वेदी है उसे वास्तुशास्त्र में आमलक सार कहा जाता है। यहाँ पर आमलक सार भी संकीर्ण है। विश्वकर्मा प्रकाश में मंदिर के निर्माण के सम्बन्ध में यह बतलाया गया है कि इसे आठ पादों में विभाजित करना चाहिए और इसी में वेदिका की व्यवस्था संतुलित है। विश्वकर्मा प्रकाश में इस प्रसंग में यह कहा गया है कि उपर्युक्त क्रम के आधार पर ही मंदिर या प्रासाद का विस्तार करना चाहिए। वैद्यनाथ मंदिर के संदर्भ में देखने से पता चलता है कि भीत्तियों की ऊँचाई की अपेक्षा पाद की ऊँचाई को महत्व दिया गया है। तब क्या वैद्यनाथ मंदिर के प्रकरण में विश्वकर्मा प्रकाश के इस स्वरूप की परिकल्पना नहीं की गई है या वैद्यनाथ मंदिर का निर्माण इस ग्रन्थ के आधार पर नहीं है? जहाँ तक मंदिर की ऊँचाई, गर्भगृह, भीत्ति, शिखर का प्रश्न है सर्वत्र अनुपात को महत्व दिया गया है। अतः यह कहना कठिन नहीं होगा कि वैद्यनाथ मंदिर के स्थापत्य में विश्वकर्मा प्रकाश के संदर्भ का संकेत नहीं मिलता है।

वैद्यनाथ ज्योतिर्लिङ्ग की स्थापना में शिखर की ऊँचाई अवश्य ही विधानपूर्वक निर्मित है। अतः यह कहना ठीक नहीं होगा कि वास्तुविद्या के प्रसंग को महत्व नहीं दिया गया। इस मंदिर के निर्माण को सर्वतोभद्र के अनुसार ही माना जाता है। पूर्वांचल में प्रचलित चतुरस्र मंदिर प्रणाली से इसे सम्बद्ध किया जा सकता है किन्तु इसे सर्वतोभद्र मंदिर की श्रेणी में रखते हैं तो यहाँ अनेक शिखरों का अभाव है। यहाँ तो केवल एक ही शिखर है और अनेक शिखरों से युक्त मंदिर को ही सर्वतोभद्र मंदिर कहा गया है। इस मंदिर में शुक की नासिका के समान कोण होता है और वृष के समान ऊँचाई होती है,

साथ ही यहाँ पर चित्रों का अभाव है। ऐसे मंदिरों को वल्लभिछन्दक कहा गया है। विश्वकर्मा प्रकाश के अनुसार क्या वैद्यनाथ मंदिर इस श्रेणी में परिवर्तित हो सकता है। इस मंदिर में चित्रात्मक परिवेश का पूर्ण अभाव है और इसे भूपटल से नीचे की ओर से प्रारम्भ किया गया है। पूर्व की ओर इसका मुख है। अतः इसे विश्वकर्मा प्रकाश के अनुसार मृगराज मंदिर भी कहा जा सकता है किन्तु इसे वृष या वल्लभिछन्दक कहना अधिक सटीक होगा। वल्लभिछन्दक को सभी कामनाओं की पूर्ति करने वाला कहा गया है। ऐसे मंदिर ईंट या पत्थरों से बनाये जाते हैं। इस मंदिर में न मेरु न मंदर न कैलाश न विमानक और न नन्दीवर्धन है। जहाँतक सर्वतोभद्र की बात है, इस श्रेणी में भी तीस हाथ का उल्लेख है जबकि यह मंदिर लगभग 144 हाथ का है। प्राचीन काल में यह गुफा की आकृति का रहा होगा। ऐसे मंदिरों में 8 हाथ का मंदिर क्रम विनिर्मित करने की परम्परा रही है। कालान्तर में इसे विस्तार प्राप्त होता था। वैद्यनाथ ज्योतिर्लिङ्ग के विग्रह के तीन गुना से भी अधिक पीठिका का विस्तार है। पीठिका का एक भाग भूमि में ठहरा है और अवशिष्ट चार भाग को जगती कहते हैं और इसके तीनों भाग को कंठ कहा जाता है। कंठ के तीसरे भाग को पद कहते हैं। लिङ्ग विग्रह में उसके शीर्ष भाग को स्थूल माना गया है जैसा कि यहाँ वर्तमान है। वैद्यनाथ मंदिर के प्रकरण में करीब–करीब संदर्भगत बातें तो मिलती हैं किन्तु इसे ठीक–ठीक विश्वकर्मा प्रकाश के अनुसार ही बनाया गया है ऐसा नहीं कहा गया है। वैद्यनाथ मंदिर के मध्य में जिसे मध्यम खण्ड कहा जाता है, वहाँ केवल दो ही स्तंभ हैं। विश्वकर्मा प्रकाश के अनुसार बीस स्तंभ हैं। अतः इसे कर्णिकार कहा जा सकता है।

इन नामों के साथ ही पुत्र लाभ, लक्ष्मी, स्त्री, पुत्र आदि के मंगल–बोध को संकलित किया गया है। द्वार स्पष्ट है। सुविधा भी है क्योंकि लिंग विग्रह भी पूर्व दिशा के मुख्य द्वार से परिदर्शनीय है। मंदिर का आकार प्रस्तरमय है। पूर्व दिशा के द्वार को धान्य कहा गया है किन्तु सर्वसिद्धि का द्वार सर्वतोभद्र को ही कहा गया है। प्राचीन काल में राजाओं के प्रासाद और देवालयों में पत्थर के गृह के निर्माण की व्यवस्था थी। इस दृष्टि से वैद्यनाथ मंदिर का द्वार निश्चय ही मंगलमय संकल्प की व्यवस्था को प्रस्तुत करता है। वैद्यनाथ ज्योतिर्लिङ्ग का विग्रह गर्भगृह के मध्य भाग में स्थापित है जो यह प्रमाणित करता है कि

यह शुभदायक और मंगलमय है। वास्तुशास्त्र के इन्हीं अकाट्य आधारों पर स्थापित होने के कारण ही वैद्यनाथ ज्योतिर्लिङ्ग को कामद् ज्योतिर्लिङ्ग के रूप में भारतवर्ष में लोकप्रियता प्राप्त है।

वास्तुविद्या में भी ऐसे प्रसंग विद्यमान हैं जिसमें निम्न स्थल के स्थावर (भूपटल) को मंगलमय कहा गया है। इसी प्रकरण में वेदी निर्माण की विधि की भी चर्चा है। चौवालिस मान के आधार पर देवताओं और राजाओं के भवन के निर्माण की चर्चा है। टी.गणपति शास्त्री ने शिवालय आदि के निर्माण में पूर्व दिशा के प्रसंग को स्वीकार किया है। देवविग्रह की स्थापना को भी वेदी विस्तार के आधार पर चतुरस्र मंदिर प्रणाली में महत्व दिया गया है। गर्भगृह के मध्य में नौ पद पर देवता के विग्रह की स्थापना की चर्चा है। पूर्व मुख में दो द्वारों की स्थापना की भी चर्चा है और सामने की ओर भी दो द्वार बनाने की चर्चा है। वैद्यनाथ ज्योतिर्लिङ्ग का मंदिर और स्थापत्य अति प्राचीन काल का है।

## वैद्यनाथ मंदिर और मूर्तिकला

मूर्तिकला का निर्माण प्राकृतिक उपादानों के मानवीकरण की भीत्ति पर प्रस्तुत करने का निरन्तर प्रयास जारी रहा है। विशेषकर उत्तर भारत की मूर्तिकला के क्षेत्र में प्राकृक्तिक साधनों की विभिन्न सामग्रियों पर अंकित करने का प्रयास रहा। प्रारम्भ में मूर्तिकला के निर्माण में प्रतीकात्मक स्वरूप को प्राथमिकता दी गई, किन्तु धीरे–धीरे भावना का रूपांतरण कलात्मक अभिधान की ओर अग्रसर होने लगा। जिस प्रकार हमारे यहाँ कला का विकास मूर्तियों के निर्माण से हुआ, ठीक उसी प्रकार ग्रीस में भी हुआ। मित्रा ने इस संबंध में बेकन का उदाहरण प्रस्तुत किया है और कभी–कभी इसमें भ्रम होने की भी चर्चा की है। सभी अनुभव अन्तर्पर्शी नहीं होते हैं, किन्तु ऐसे ही होते–होते मूर्तिकला में जीवनीशक्ति आने लगी। पशु– पक्षियों के चित्रों से प्रारम्भ होकर देव प्रतिमाओं का गठन प्रारम्भ हो गया और फिर कलात्मक प्रतिमाएँ पनपने लगीं। परवर्ती युग में मानवीय स्वरूप को आधार दिया जाने लगा। इससे यह प्रतीत होता है कि प्राकृतिक साधनों के बाद मानवीय साधनों को कला के मंच पर लाने का प्रयास अनायास ही प्रारम्भ हो गया। भारतीय कला में मूर्तिकला का विशेष स्थान है। यद्यपि मि. वेस्ट येफोट ने भारतीय कला को महत्व नहीं दिया, किन्तु

उन्होंने राष्ट्रीय चरित्र के उद्घाटन में भारतीय मूर्तिकला को महत्व दिया है। मित्रा ने यह स्वीकार किया है कि बौद्ध युग में मूर्तिकला का व्यापक विस्तार हुआ और त्रिदेव की मूर्तियों को कल्पना और लोकप्रियता हुई। भारतीय मूर्तिकला में प्राचीन गाथाओं को बहुत महत्व दिया गया है। यद्यपि मूर्तिकला के निर्माण में मित्रा ने ब्राह्मण धर्म की प्रशंसा की है और पीछे बौद्धों ने इसका अनुसरण किया है। ऐसा स्वीकार किया गया है। स्युके ने कहा है कि भारतीय मूर्तिकला में लोगों की भावना को रूपायित किया गया है, किन्तु उसमें मानवीय भाव है। साथ ही ''कामधेनु'' कल्पना का रूपान्तरण प्राप्त होता है। भारत में उड़ीसा की मूर्तिकला को अत्यन्त ही समृद्ध कला के रूप में स्वीकार किया जाता है और स्थापत्य कला के सिद्धान्तों के अनुरूप ही इसका गठन हुआ है।

यहाँ पर मूर्तियों के निर्माण के ऐतिहासिक परिचय को प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं है। इसलिए विस्तृत विवरण देना समीचीन नहीं होगा। केवल वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में उपलब्ध मूर्तियों के संबंध में ही विचार करना है। यहाँ अनेक प्रकार की मूर्तियों मिलती हैं। इसके संबंध में पुरातत्वविदों ने अपना मत अभी तक निश्चित नहीं किया है। वैद्यनाथ मंदिर नागर शैली का मंदिर है और उत्तर भारत की मंदिर निर्माण कला की सबसे बड़ी विशेषता शिखर कला से युक्त है। परिसर की सभी मूर्तियाँ तराश करके बनायी गई हैं। धातु की मूर्तियाँ यहाँ (राधाकृष्ण को छोड़कर) नहीं हैं। इन मूर्तियों को ठप्पा लगाकर भी नहीं बनाया गया है। स्पष्ट रूप से इन्हें पत्थरों को तराश करके ही बनाया गया है। वैद्यनाथ मंदिर के निर्माण के संबंध में यह मान्यता अभीतक स्थापित हो चुकी है कि इसका निर्माण 7वीं से 13वीं शताब्दी के बीच में हुआ है। इसकी कालावधि को आधार मानकर इन मूर्तियों के स्वरूप को देखना पड़ेगा और इसके अनुसार इसका समय मूर्तिकला के प्रभाव क्षेत्र के अन्तर्गत यदि आता है तो गुप्तयुगीन मूर्तिकला के बाद में विकसित शैली के अन्तर्गत ही मूर्तियों को ग्रहण कर सकते हैं। पार्वती मंदिर में स्थित त्रिपुर सुन्दरी और जयदुर्गा की मूर्तियाँ पाल कालीन मूर्तिकला के विकास के पूर्व की है। क्या वे दोनों मूर्तियाँ पूर्ववर्ती कुषाणयुगीन तथा गुप्तकालीन मूर्तिकला के काल की मूर्तियाँ हैं। यदि इसे कुषाणयुगीन मानते हैं तो प्रभामंडल का अभाव है। साथ ही गुप्तकाल में जो प्रभामंडल बनाये जाते थे, वे मनोरम तक्षणों से युक्त होते थे। फिर भी इन मूर्तियों के पीछे कुछ

छोटी–छोटी मूर्तियाँ हैं जिनके आधार पर इन्हें कुषाणयुगीन मानने में कोई बाधा नहीं है। गुप्तयुगीन मूर्ति के पीछे विस्तृत प्रस्तर फलक होते थे। इन दोनों मूर्तियों के पीछे प्रस्तर फलक हैं। त्रिपुर सुन्दरी की मूर्ति और जयदुर्गा की मूर्ति में सुघटित शरीर, उभरे वक्षस्थल और भव्य चेहरा अभी भी आकर्षक है। इससे यह प्रतीत होता है कि ये मूर्तियों कुषाणयुगीन ही हैं। मूर्तियों की आँखें खुली हुई हैं। त्रिपुर सुन्दरी के चारों हाथ अत्यन्त ही स्पष्ट और अभय मुद्रायुक्त हैं। इससे यह प्रतीत होता है कि इन दोनों मूर्तियों को पूर्ववर्ती कुषाणयुग और गुप्तकालीन मूर्तिकला के मध्य ही बनाया गया और किसी अन्य स्थान से लाकर यहाँ स्थापित किया गया। पार्वती के स्थान पर त्रिपुर सुन्दरी की मूर्ति को स्थापित करने का ऐतिहासिक रहस्य यह सोचने के लिए बाध्य करता है कि मिथिला की कुलदेवी त्रिपुर सुन्दरी हैं और यहाँ के तीर्थपुरोहित–गण भी मूल से सभी मैथिल हैं। अतः त्रिपुर सुन्दरी को ही पार्वती के रूप में साधना की पूंजीभूत इकाई मानते हैं। जगत जननी मंदिर या श्याम कार्तिक मंदिर में अनेक मूर्तियाँ हैं, किन्तु उन सभी मूर्तियों को पालकालीन मूर्तिकला के विकास के साथ ही सम्बोधित किया जाता है। जगत जननी का विग्रह संगममर पत्थर का बना है और प्रचलित सौ वर्षों की मूर्तिकला के विकास का स्वरूप इसमें विद्यमान है। डॉ० राजेन्द्र लाल मित्र ने इस मंदिर में स्थित कई मूर्तियों की चर्चा की है और इस मंदिर को एक बरामदे के रूप में चित्रित किया है तथा यहाँ स्थित कार्तिकेय को लोकनाथ के रूप में वर्णित किया है। प्राचार्य कृष्णनन्दन सहाय ने इस बरामदे में स्थित मूर्तियों में से एक मूर्ति को वीणाधर शिव मूर्ति के रूप में वर्णन किया है। यह मूर्ति करीब दो फीट ऊँची और करीब डेढ़ फीट चौड़ी है। मूर्ति एक तोरण के भीतर अवस्थित है। युगल कमल पर शिव आसन पर बैठे हैं। उनके नीचे उनका वाहन नन्दी है। इस मूर्ति के चार हाथ हैं। दाहिने हाथ में से पीछे वाले में अक्षमाला है और आगेवाले की उंगलियाँ वीणा को झंकृत कर रही हैं। पीछे के बायें हाथ में त्रिशूल और आगे वाले में वीणा है। शिव के सिर पर जटाजूट है। इस मूर्ति की कला के संबंध में 9वीं से 10वीं शताब्दी का समय निर्धारित किया गया है।

इसी बरामदे में संकष्टा काली का भी एक विग्रह है, जिसमें मूर्ति के पीछे प्रस्तर फलक है। इस मूर्ति को भी पालकालीन मूर्तिकला के अधीन ही रखा जाता है। मूर्ति देखने में सुन्दर है और पालकालीन इसीलिए है कि प्रस्तर काला और पॉलिस्ड है। साथ ही

राजमहल की पहाड़ी का काला पत्थर है। पालों के युग में सबसे अधिक मूर्तियाँ राजमहल की पहाड़ी से ही बनायी जाती थीं। संकष्टा काली की मूर्ति भी उसी समय की है। ऐतिहासिक दृष्टि से एक बात अवश्य ही संदेहास्पद है कि 1883 ई० डा0 मित्रा ने अपने लेख में इस बरामदे का उल्लेख तो अवश्य किया है, लेकिन इस मूर्ति की कोई चर्चा नहीं की है, जिससे यह प्रमाणित होता है कि परवर्ती समय में इस मूर्ति को यहाँ स्थापित किया गया।

जगत जननी मंदिर के बरामदे में और भी कई मूर्तियाँ हैं जो अस्पष्ट एवं विकृत हैं। इनमें से कुछ मूर्तियाँ अति प्राचीन काल की भी लगती हैं, किन्तु चेहरा स्पष्ट नहीं होने के कारण इनकी प्राचीनता एवं ऐतिहासिकता के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता है। डॉ० मित्रा ने जिस लोकनाथ मूर्ति की चर्चा की है, उस मूर्ति की आज से लगभग 15 वर्ष पूर्व चोरी हो गई है। वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में श्याम कार्तिक मंदिर के बाद गणेश जी का मंदिर है, जोचतुरस्र आकार का मंदिर है।[47]

इस मंदिर में एक छोटा–सा मंडप भी है। मंडप में चार भूरे पत्थर के स्तम्भ हैं। मंदिर के मध्य में गणेश जी की प्रतिमा है। प्रतिमा एक उच्च वेदी पर स्थापित है, जिसके ऊपर चढ़ने के लिए तीन सीढ़ियाँ हैं। गणेश जी की प्रतिमा पालकालीन पत्थर की बनी हुई है। मूर्ति के पीछे एक प्रस्तर फलक भी है जो तोरण के समान प्रतीत होता है। प्रस्तर फलक के साथ प्रतिमा जुड़ी हुई है जिससे प्रतीत होता है कि काले पत्थर में ही तक्षण करके इस प्रतिमा का निर्माण किया गया है। मूर्ति की ऊँचाई डेढ़ फीट और चौड़ाई डेढ़ फीट से कुछ अधिक है। इस प्रतिमा में गणेश जी के आठ हाथ हैं और गणेश जी खड़े हैं। उनके दाहिने हाथ में सर्वप्रथम अंकुश है। इसके बाद वेद पट्टिका है। नीचे के दोनों हाथों में क्या है, यह स्पष्ट नहीं है। गणेश जी की आकृति पालकालीन पॉलिश्ड पत्थर पर अत्यन्त ही भव्य है। इस प्रतिमा को देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि शारीरिक आकार अत्यन्त ही सुडौल है। इस प्रकार की बनावट अन्यत्र उपलब्ध नहीं है। पालों के समय में इस प्रकार की कला 8वीं से 12वीं सदी के बीच विकसित हो चुकी थी। बौद्धों और हिन्दुओं की मूर्तिकला में स्थानीय काले पत्थरों का पर्याप्त उपयोग किया गया है। पालकालीन मूर्तिकला की सबसे बड़ी

विशेषता यह है कि इसमें मूर्ति को अत्यन्त ही सुन्दर बनाया जाता है और इसे अलंकृत किया जाता है। दूर से देखने से इन मूर्तियों के संबंध में कोई यह नहीं कह सकता है कि यह पत्थर की बनी मूर्ति है। गणेश जी की मूर्ति में भी इन विशेषताओं को देखा जा सकता है। इस मूर्ति को उड़ीसा मूर्ति निर्माण कला से संबंधित नहीं कर सकते हैं और न गरुड़ पुराण की मूर्तिकला से इसका संबंध है, क्योंकि गरुड़ पुराण में छत्राकार शीर्ष और गोलाकार मूर्ति का वर्णन है क्योंकि गरुड़ पुराण में कपाल का आकर मध्यम और अर्द्धचन्द्राकार भी बतलाया गया है। वहीं पर सामुद्रिकशास्त्र के प्रकरण में लिखा है कि ललाट विस्तृत और आकर्षक हो, छोटा होना अच्छा नहीं है।

स्पष्ट है कि गणेश जी की प्रतिमा पालकालीन मूर्तिकला से ही संबंधित है। गणेश जी की आँखें भी स्पष्ट दिखलाई पड़ती हैं जो यह प्रमाणित करता है कि इस मूर्तिकला के निर्माण च पर्याप्त कुशलता का परिचय दिया गया है और हाथी की आँख जैसी छोटी होती है उसी करता का समावेश इसमें किया गया है। मित्रा ने इस मूर्ति के संबंध में कुछ विशेष नहीं लिखा है। केवल इतना बतलाया है कि टीकाराम ओझा ने इस मूर्ति की स्थापना 1762 ई० में की है, किन्तु इससे यह नहीं प्रमाणित होता है कि मूर्ति भी टीकाराम ओझा ने ही बनवाया है। निश्चय ही यह मूर्ति बहुत प्राचीन है इसे यहाँ बहुत पहले से ही प्रस्तर वेदी पर रखा गया था। मंदिर का निर्माण भले टीकाराम ओझा ने किया हो, किन्तु देवस्थान अत्यन्त ही प्राचीन है।

गणेश जी की प्रतिमा के बाद ब्रह्मा जी की प्रतिमा है जो एक छोटे से मंदिर में अवस्थित है। ब्रह्मा की मूर्ति भी चतुर्मुखी है। मस्तक पर केश–गुच्छ को दिखलाया गया है। मूर्ति गर्दन तक ही है और मूर्ति के चारों ओर जलहरि है जिसका मुँह उत्तर की ओर है। ब्रह्मा की मूर्ति जिस पत्थर से बनायी गयी है वह प्रस्तर स्थानीय है और कला भी मूर्ति निर्माण की आधुनिक विधा की अभिव्यक्ति प्रदान करती है। ऐसे ज्योतिर्लिंग के तीर्थों में ब्रह्मा की मूर्ति स्थापित करने की परम्परा नहीं के बराबर है, किन्तु यहाँ पर आज से तेरासी वर्ष पूर्व वैद्यनाथ मंदिर के प्रभारी प्रधान तीर्थपुरोहित (रिसीवर) स्वर्गीय सखीचन्द ओझा ने इस मंदिर का निर्माण करवाया है और ब्रह्मा की मूर्ति भी स्थापित की है। इस मूर्ति को स्थानीय पत्थरों से बनवाया गया है, क्योंकि मूर्ति में पालकालीन मूर्तियों के समान न तो

पालिश है और न अलंकरण। इस प्रकार यह मूर्ति वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में बहुत लोकप्रिय नहीं बन सकी। केवल भीड़ या मेले के अवसर पर ही इस मंदिर में भीड़ रहती है।

**संध्या (कामाख्या) :** वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में कामाख्या की मूर्ति्त मूर्तिकला की प्राचीन विधा को स्पष्ट करती है। कामाख्या या संध्या की मूर्ति वैद्यनाथ मंदिर के बाद सबसे विशाल मंदिर के गर्भगृह के बीच अवस्थित है। पालकाल के पूर्व के प्रस्तर में उत्कीर्ण संध्या की मूर्ति है जिसमें मूर्ति वेदी के दक्षिण की ओर एक प्रस्तर फलक में अवस्थित है। देवी के चारों हाथ स्पष्ट रूप से दिखलाई पड़ते हैं। दाहिनी ओर के ऊपर के हाथ में खड्ग है। यह मूर्तिकला की दृष्टि से अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है, किन्तु इसे कुषाण मूर्तिकला से संबंधित कह सकते हैं। कुषाणकाल में भारी मूर्तिकला का प्रमुख केन्द्र मथुरा था। मधुरा कलाकेन्द्र में भारत की बहुविध साम्प्रदायिक कला की मूर्तियों का वर्णन है। इस मूर्ति के पीछे कभी प्रभामंडल भी रहा होगा, लेकिन देवी के शरीर में जो वस्त्र है वह दिखलाई नहीं पड़ता है। मूर्ति के मुखमंडल सभी सानुपातिक नियमों से युक्त हैं। यह मूर्ति इतनी घिस गयी है कि इसका मौलिक रूप नष्ट हो गया है। अतः इसके संबंध में कोई आनुमानिक वक्तव्य देना समीचीन नहीं होगा। लगता है कि यह मूर्ति प्राच्य मूर्तिकला का प्रतिनिधित्व करती है तथा असम और बंगाल, बिहार में जो मूर्तिकला की शैली प्रचलित थी, उसी के अनुरूप यह बनायी गयी है। इस मूर्त्ति में अधिक अलंकरण नहीं है। यद्यपि वेदी पर मूर्ति अवस्थित है जिससे यह अनुमान लगता है कि बौद्धकाल में इस प्रकार की मूर्ति को प्रतिष्ठित करने का विकास हो गया था। इस मूर्ति के आंगिक विन्यास और लावण्य के बारे में अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। कोई बात सटीक ढंग से नहीं कही जा सकती है। इस मूर्ति के स्वरूप के संबंध में पद्मपुराण पाताल खण्ड में जो वर्णन आया है, वह अनेक विरोधाभासों से युक्त है। एक ओर तो इसे संध्या की मूर्ति्त कहते हैं, तो दूसरी ओर इसे कामाख्या के नाम से जाना जाता है। इसके संबंध में लिखा है जो माया के पीठ से सम्पूर्ण जगत् को मोहित करती है, जो माया के कौतूहल मनोरथ का विस्तार करती है, नारायण की प्रियतमा, तमाल के समान श्यामवर्ण घोड़े पर आरूढ़ शूल आयुधधारी देवी की जय हो। इस वर्णन में संध्या को श्याम वर्ण घोड़े पर आरूढ़, हाथ में त्रिशूलधारी देवी के रूप में वर्णित किया गया

है। इस देवी के यहाँ आने के प्रसंग में ऐसा है कि यह कुंजिका नामक पीठ से सत्य योनिमंडल में पतित होकर विलीन होती है और इसे कामाख्या नामक पीठ से जोड़ा गया है। यह मूर्ति महामाया है जिसे कामाख्या के नाम से भी सम्बोधित किया गया है। यह प्रिय नील शैल पर्वत पर निवास करती है। इसके दाहिने हाथ में माला है और दूसरे हाथ में सिद्ध सूत्र है, बायें हाथ में सिद्ध सूत्र और अभय है। इनके विभिन्न रूपों की भी चर्चा है। कभी भगवती तलवार को त्याग कर माला धारण करती हैं, कभी वे श्वेत कमल, कभी लाल कमल और कभी केसर पर कामरूपिणी होकर विहार करती हैं और इस मूर्ति की स्थापना के सन्दर्भ में चर्चा पहले ही की जा चुकी है। जहाँ तक इसकी मूर्तिकला का प्रश्न है, यह मूर्ति निश्चय ही किसी अन्य क्षेत्र से लाकर यहाँ स्थापित की गई है जो कि पद्मपुराण पातालखण्ड के सन्दर्भ से स्पष्ट है। साथ ही, इसके विभिन्न स्वरूप हैं और यह रावण के वध निमित्त इस पीठ में स्थापित की गई है। निश्चित ही संध्या की मूर्तिकला अत्यन्त ही प्रशस्त है। इसे यदि कामाख्या की मूर्ति से संबंधित करते हैं तो यह बौद्धों की तारा से भी सामीप्य रखती है क्योंकि वैद्यनाथ मंदिर परिसर में जो नीलचक्र है उससे भी इसको संबंधित किया जाता है। कुब्जिका तंत्र के सप्तम पटल में ''नारीकेलम च विरजा'' का प्रयोग आया है और वहीं पर ''कामरूपं कलौयुगे'' के साथ ''क्षीरग्रामं वैद्यनाथं यानियाद वामलोचने'' का भी प्रयोग आया है। तंत्र चूड़ामणि में भी कामाख्या महापीठ का वर्णन है और वैद्यनाथ के प्रसंग का भी वर्णन है। इतना ही नहीं, वैद्यनाथ को महातीर्थ कहा गया है। स्पष्ट है कि कामाख्या की मूर्ति की स्थापना का प्रसंग कामाख्या तांत्रिक साधन में विशेष महत्व के कारण ही है। मूर्ति सम्पूर्ण रूप से प्रस्तर की है जो पालों के पूर्व की है, किन्तु यदि हम इसे तारा की मूर्ति से संबंधित करते हैं तो कई प्रकार के सन्देह और तर्क उपस्थित हो जाते हैं। तारा की यदि यह मूर्ति कामाख्या के रूप में पूजी जाती है तो यह भी कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है, क्योंकि तारा का पूजन हिन्दुओं ने बौद्धों से सीखा अथवा यह कहें कि तारा भगवती का पूजन पहले बौद्ध सम्प्रदाय में प्रारम्भ हुआ। कहीं यह संध्या देवी की मूर्ति यह ऐतिहासिक संकेत तो नहीं देती कि यह तीर्थ बौद्धों के वर्चस्व से ओतप्रोत था। वैद्यनाथ माहात्म्य के प्रकरण में जिन महामाया का वर्णन संध्या के रूप में है और फिर उसे कामाख्या के रूप में वर्णित किया गया है वह भी नीलतंत्र की महामाया के वर्णन से कहीं–कहीं साम्य रखती है, क्योंकि महामाया को काली के रूपान्तरण से भी जोड़ा

गया है और यदि ऐसा सन्दर्भ है तो यह मानना पड़ेगा कि वह विभिन्न रूपों में वर्णित की जा सकती है, क्योंकि उसे विष्णु से भी संबंधित किया गया है। लगता है वैद्यनाथ एक शक्तिपीठ है और शक्तिपीठों की परम्परा की तीन प्रमुख पीठों में कामाख्या का भी एक नाम है जिससे यह प्रतीत होता है कि वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में कामाख्या की मूर्ति को ही संध्या के नाम से जाना जाता है। कामाख्या की मूर्ति भी नील सरस्वती की मूर्ति्त से बहुत कुछ मिलती है।

**काल भैरव :** वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में काल भैरव का मंदिर है जिसे राजेन्द्र लाल मित्रा ने भगवान बुद्ध की मूर्ति्त के रूप में स्वीकार किया है, क्योंकि काल भैरव की मूर्ति के रूप में वही मूर्ति है जो भगवान बुद्ध की मूर्ति पद्मासन की मुद्रा में अन्यत्र उपलब्ध है। इस मूर्ति में बुद्ध पद्मासन की मुद्रा में बैठे हुए हैं। एक हाथ अभय मुद्रा को इंगित कर रहा है जो दायां हाथ है और दूसरा हाथ पादतल पर लेटा हुआ है। मस्तक में कुचित केशराशि है। भगवान बुद्ध की आँखें और मुखमंडल भव्य हैं। दाहिनी आँख टूटी हुई है जो स्पष्ट दिखलाई पड़ती है तथा जनेऊ धारण किए हुए हैं। विस्तृत ललाट पटल है। मूत्तिं का आधार एक प्रस्तर फलक से लगा है जो प्रकाश मंडल को इंगित करता है। मूर्ति की ऊँचाई तीन फीट और चौड़ाई दो फीट होगी। मूत्तिं एक ऊँचे चबूतरे पर स्थापित है। चबूतरे का पत्थर मूर्ति के पत्थर से भिन्न है। इससे यह भी प्रमाणित होता है कि किसी कुशल कलाकेन्द्र से निर्मित है। मूर्ति को देखने से ऐसा लगता है कि यह पालकालीन मूर्ति है और इसे परवर्ती समय में यहाँ स्थपित किया गया है। इस मूर्ति से संलग्न एक प्रस्तरखंड है, जिसमें गर्त है उसे लोग बटुक भैरव के नाम से सम्बोधित करते हैं, किन्तु यहाँ कोई देव विग्रह नहीं है और इस प्रकार काल भैरव की मूर्ति के रूप में ही इसकी ख्याति है। मित्रा ने इस मूर्ति को बुद्ध की मूर्ति के रूप में स्वीकार किया है और इसे प्राचीन मूर्ति की कोटि में रखा है। साथ ही, यह भी माना है कि इस मूर्ति को कहीं अन्यत्र से लाया गया है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह इस क्षेत्र के ऐतिहासिक स्वरूप को प्रकट करती है। इस मूर्ति की स्थापना किसने की, यह अभी भी विवादास्पद है। वैद्यनाथ माहात्म्य के प्रकरण में काल भैरव की प्रस्तुति है। इसके अनुसार काल भैरव की मूर्ति के संबंध में उल्लेख है कि उन्होंने सर्पयज्ञसूत्र धारण किया है और मस्तक पर चन्द्रमा धारण किया है

और ये काशीपुरी के अधीश्वर हैं। काल भैरव का यह ध्यान काल भैरव के परम्परागत स्वरूप का वर्णन करता है, जबकि वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में अवस्थित काल भैरव की मूर्ति में मस्तक पर न तो चन्द्रमा है न ध्यान के अनुरूप अन्य वर्णन है, साथ ही ''काशिकापुराधिनाथं कालभैरवं भजे'' के स्थान पर ''रणखण्ड वैद्यनाथ पुराधिनाथ कालभैरवम् भजे'' होना चाहिए था। अतः मूर्त्ति शिल्प के आधार पर यह प्रमाणित नहीं होता है कि यह काल भैरव की मूर्ति है, किन्तु मूर्ति की बनावट का प्रकरण मानसार के सन्दर्भ से अवश्य मिलता है। उपर्युक्त सन्दर्भ को इस दृष्टि से दिया गया है कि बुद्ध की मूर्तियाँ उस समय पालकाल और उससे पूर्व इसी दृष्टि से बनायी जाती थीं। बुद्ध की मूर्ति उत्तर भारत में इस प्रकार बनती थी, इसका प्रमाण सुल्तानगंज की भी मूर्ति है।

इस मंदिर के मंडप में एक चुनार पत्थर का बना हुआ लिंगाकार तीन फीट का लम्बा और एक फीट का चौड़ा स्तम्भ है जिसे काल भैरव के मुद्गर के रूप में पूजा जाता है, किन्तु इसका कोई ऐतिहासिक विवरण नहीं मिलता है। मित्रा एवं अन्य इतिहासकारों ने इसकी कोई चर्चा नहीं की है। इस मंदिर में देवगृह में प्रवेश के पूर्व दो मूर्तियां दीवार में खुदी हुई हैं जिसे मूर्तिकला का कलात्मक स्वरूप कहा जा सकता है। कालभैरव के मंदिर प्रवेश के पूर्व इन मूर्तियों का खोदा जाना भी ऐतिहासिक प्रसंग को नहीं जोड़ता है, क्योंकि काल भैरव की मूर्ति के समीप अप्सराओं का कोई तर्क नहीं है। ऐसी मूर्तियों का संबंध बुद्ध की मूर्तियों के साथ ही प्रासंगिक है।

**हनुमान मंदिर :** हनुमान मंदिर जगतजननी मंदिर के समान ही एक बरामदे के आकार का है। इस मंदिर में कुल 25 मूर्तियाँ हैं, जिसमें स्पष्ट रूप से दो ही विग्रह मूर्तिकला की विधा को स्पर्श करता है। हनुमान जी की मूर्ति डेढ़ फीट लम्बी और आधी फीट चौड़ी है। इनके दो हाथ हैं। बायें हाथ में गदा है और दाहिने हाथ में अभयमुद्रा। हनुमान जी की मूर्ति के पैर के नीचे अहिरावण की मूर्ति है। यह मूर्ति स्थानीय प्रस्तरों से ही बनी हुई है। हनुमान जी की मूर्ति से पूरब की ओर एक शिवलिंग है जिसकी ऊँचाई 6 इंच है और चौड़ाई 6 इंच है। वह एक जलहरी के बीच में स्थित है। बाकी मूर्तियां अस्पष्ट हैं। कलात्मक दृष्टि से कुबेर की मूर्ति स्थानीय प्रस्तरों से निर्मित है। जहाँ तक मूर्ति शिल्प का प्रश्न है, इन दोनों मूर्तियों को शास्त्रीय परम्परा से निर्मित मूर्ति शिल्प के रूप में ग्रहण तो अवश्य किया

जा सकता है, किन्तु इसे प्राचीन मूर्तियों की कोटि में नहीं रखा जा सकता है। वैद्यनाथ माहात्म्य के प्रकरण में इस मंदिर में धनदा देवी की मूर्ति के होने का भी प्रसंग है।

**मनसा मंदिर :** वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में मनसा देवी की मूर्ति्त एक छोटे से मंदिर में अवस्थित है। मूर्ति की ऊँचाई एक फीट और चौड़ाई डेढ़ फीट से कुछ अधिक है। मूर्ति एक चौकोर प्रस्तर फलक से जुड़ी हुई है। लगता है कि एक ही पत्थर को उत्कीर्ण करके यह मूर्ति बनायी गयी है। देवी का मुख मंडल प्रशस्त है। दो हाथ हैं। दोनों हाथों का निर्माण एक ही आयत से दिया गया है। मनसा देवी के दाहिने हाथ में सर्प है और बाये हाथ में भी सर्प है। देवी की आँखें स्पष्ट हैं और उनके चेहरे में स्मित हास्य की रेखा अंकित है। देवी पद्मासन में बैठी हुई हैं। देवी की दाहिनी ओर एक पक्षी का चित्र खुदा हुआ है। मूर्ति्त काले पत्थर की है जिससे यह लगता है कि इस मूर्ति को राजमहल की पहाड़ियों के प्रस्तर से ही बनाया गया है। मनसा के वर्णन का प्रसंग देवी भागवत् में आया है जिसके अनुसार देवी श्वत चम्पे के समान वर्णवाली रत्नों के भूषण से भूषित और अग्नि के समान शुद्ध वस्त्र से युक्त हैं। मनसा देवी की इस मूर्ति के स्थापत्य शिल्प को बौद्धों की जांगुली से जोड़ा जाता है। अर्थात् बौद्धों की तारा जब जोगुली के रूप में प्रसिद्ध हुई तो हिन्दुओं की देव प्रतिमा पूजन में उसे ही मनसा कहा गया। मनसा देवी की कथा का संबंध महाभारत से है और ब्रह्मवैवर्त पुराण में भी मनसा की चर्चा शिव की पुत्री के रूप में है। वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में स्थापित मनसा की मूर्ति की स्थापना के प्रसंग में रामदत्त ओझा की चर्चा की जाती है, जिनका समय 1782 से 1793 के बीच मंदिर प्रसंग में स्वीकार किया गया है।

**सरस्वती मंदिर :** सरस्वती की प्रतिमा वैद्यनाथ मंदिर के दक्षिण की ओर एक छोटेसे मंदिर में अवस्थित है। पहले सरस्वती की प्रतिमा काले रंग के पत्थर की बनी हुई थी। पीछे यह प्रतिमा तीर्थ यात्रियों के द्वारा अंग–भंग कर दी गई। प्राचीन प्रतिमा की स्थापना वैद्यनाथ मंदिर के प्रधान तीर्थ पुरोहित रामदत्त ओझा ने 1882 से 1893 ई० के बीच की थी। वर्तमान प्रतिमा की स्थापना सन् 1969–70 में मंदिर के प्रधान तीर्थपुरोहित भवप्रीतानन्द ओझा ने किया था। यह प्रतिमा संगमरमर पत्थर की बनी है। देवी की प्रतिमा में चार भुजाएँ हैं। दायें और बायें हाथ में वीणा ध ारण किये हुए हैं एवं एक हाथ में पुस्तक तथा दूसरे में

वेदपट्टिका है। मूर्ति हंस पर विराजमान है। मंदिर में प्रवेश करने का मार्ग अत्यन्त ही संकीर्ण है। मूर्ति जमीन से ऊँची एक फीट की वेदिका पर स्थापित है। सरस्वती की मूर्ति के दक्षिण पार्श्व में आज से 18 वर्ष पूर्व लक्ष्मी की अंग–भंग प्रतिमा थी, पीछे उसे वहाँ से हटा दिया गया। वर्त्तमान समय में वहाँ केवल एक प्रस्तर रेखा है जिसे यात्री–गण लक्ष्मी देवी के प्रतीक के रूप में पूजते हैं।

**सूर्यनारायण मंदिरः** वैद्यनाथ मंदिर के पश्चिम–दक्षिण कोण पर भगवान सूर्य कामंदिर है, जिसमें सूर्य की प्रतिमा स्थापित है। आज से 21 वर्ष पूर्व तक इस मंदिर में जो भगवान सूर्य की प्रतिमा स्थापित थी, वह मूर्तिकला की दृष्टि से एक भव्य मूर्ति थी। मित्रा ने उसे लोकनाथ को मूर्ति के रूप में 1883 ई० में स्वीकृत किया था। लोकनाथ बुद्ध का ही एक नाम है। इस मूर्ति की स्थापना के प्रसंग को मित्रा ने 1782 से 1793 के बीच स्वीकृत किया है और तत्कालीन प्रधान पुरोहित रामदत्त ओझा ने इसकी स्थापना की थी। यहाँ पर इस मूर्ति की उपासना सूर्य के रूप में ही होती थी, किन्तु प्राचीन मूर्ति की चोरी हो गई और वर्तमान में जो भगवान सूर्य की मूर्ति है वह भी अत्यन्त ही आकर्षक है। कमल पुष्प पर सूर्य विराजमान हैं। उनकी चार भुजाएं हैं। बायें हाथ एवं दाहिने हाथ में एक–एक कमल फूल है तथा अन्य दो हाथों में क्या है, स्पष्ट नहीं दिखता है। मूर्ति स्थानीय पत्थरों से ही निर्मित है। अतः मूर्ति का पॉलिश ठीक से नहीं हो पाया है। मूर्ति एक प्रस्तर फलक से लगी हुई है। मंदिर के गर्भगृह में चबूतरे पर एक फीट ऊँची वेदी पर मूत्ति स्थापित है। वैद्यनाथ माहात्म्य में जो सूर्य का ध्यान दिया गया है उससे इस प्रतिमा का वर्णन ठीक–ठीक नहीं मिलता है।

**माँ बगला मंदिर :** वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में माँ बगला देवी की प्रतिमा है जोमुख्य मंदिर से पश्चिम की ओर है। इस मंदिर में माँ बगला की एक भव्य मूर्ति स्थापित है। यह मूर्ति मंदिर के भीतरी गर्भगृह में ढाई फीट ऊँची वेदी पर स्थापित है। मूर्ति की ऊँचाई डेढ़ फीट से अधिक नहीं है और चौड़ाई डेढ़ फीट के लगभग है। मूर्ति काले पत्थर की बनी हुई है। इसकी पॉलिश अभी भी दूर से ही लोगों को आकर्षित करती है। मूर्ति प्रस्तर फलक से लगी हुई है जो मेहराबदार है। माँ बगला देवी की मूर्ति की बायीं ओर एक राक्षस की मूर्ति है। इसमें देवी अपने बांये हाथ से राक्षस की जिह्वा को पकड़ी हुई हैं और देवी के दाहिने

हाथ में खड्ग है। देवी वस्त्र धारण किये हुई हैं, जैसा कि तांत्रिक साहित्य में पीत वर्ण का उल्लेख है। माँ बगलामुखी की मूर्ति्त वैद्यनाथ क्षेत्र के संदर्भ में बहुत ही महत्वपूर्ण है, क्योंकि देवी के इस विग्रह को इस पीठ का आधार माना जाता है और यह कहा जाता है कि वैद्यनाथधाम एक सिद्धपीठ है, जहाँ सती का हृदय गिरा है और बगलामुखी इस पीठ की पीठाधिष्ठात्री देवी हैं। माँ बगला को सिद्धि की देवी माना जाता है। इस मूर्ति की स्थापना को वैद्यनाथ मंदिर के प्रधान पुरोहित रामदत्त ओझा से संबधित किया जाता है और इसकी स्थापना का वर्ष 1782 से 1793 ई0 के बीच माना जाता है। मित्रा ने भी ऐसा ही विचार व्यक्त किया है। मूर्ति के प्रस्तर की बनावट से यह प्रतीत होता है कि यह पालकालीन प्रस्तरों की बनी हुई है। असम, बंगाल और बिहार में प्राप्त मूर्तियों की निर्माण कला से इसका तुक बैठता है। प्राच्य मूर्ति के प्रसंग में इस मूर्ति को स्वीकार किया जा सकता है। प्राचीन वास्तुकला के नमूने के रूप में इस मूर्ति को स्वीकार किया जा सकता है। सम्भवतः 7वीं या 8वीं शताब्दी या उसके बाद ऐसी मूर्तिकला का निर्माण हुआ। उत्तर–पूर्व के मंदिरों में ऐसी मूर्तियाँ स्थापित की गई हैं। ऐसे प्रो० शिवदत्त ज्ञानी ने ईसा की दूसरी सदी से ही इस प्रकार की मूर्तियों की स्थापना को महत्व दिया है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि माँ बगला की मूर्ति शाक्त्य साधना की व्यापक परम्परा को इंगित करती है।

**स्वर्णविल्व महादेव** : माँ बगला मंदिर के बाद वैद्यनाथ मंदिर के पश्चिम की ओर खुला प्रांगण है एवं उसी से संबंधित पश्चिम की ओर बर्हिद्वार है। उस द्वार से थोड़ा आगे बढ़ने पर स्वर्ण विल्व महादेव का लिंगविग्रह है। यह लिंग विग्रह एक ईंट के मकान में है। वैद्यनाथधाम के धार्मिक इतिहास के प्रसंग में स्वर्ण विल्व महादेव का लिंगविग्रह इसकी धार्मिक ऐतिहासिकता को अनेक प्रश्नों से युक्त करता है और वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग के काल से ही स्वर्ण विल्व महादेव के लिंग विग्रह को स्थान दिया है। यह लिंग विग्रह स्थानीय प्रस्तर का है, जिनका चारों किनारा घिसा हुआ है और जलहरी के बीचो–बीच अवस्थित है जिसका मुंह उत्तर दिशा की ओर है। इसके दक्षिण पार्श्व में एक छोटा बसहा है तथा उसके समीप ही एक छोटा कुंड है, किन्तु इसमें शिवलिंग का जल नहीं गिरता है जिससे

यह प्रमाणित होता है कि प्राचीन काल में स्वर्ण विल्व महादेव की कोई दुर्लभ प्रतिमा यहाँ थी जिसे यहाँ के स्थानीय शासक या आक्रमणकारी ने उठा लिया।

**रामचन्द्र मंदिर :** रामचन्द्र के मंदिर में कई मूर्तियाँ हैं, किन्तु मुख्य रूप से रामचन्द्र की मूर्ति के कारण यह देवस्थान प्रसिद्ध है। [48]

रामचन्द्र भगवान के गर्भगृह के प्रवेश द्वार पर हनुमान जी की एक छोटी सी मूर्ति है जो चित्रात्मक शैली को अभिव्यक्त करती है। साथ ही द्वार पर ही दोनों तरफ गोल आकृक्ति का नक्शा बना हुआ है। गर्भगृह के बीचो–बीच पाँच फीट की ऊँची वेदी है, जिस पर चढ़ने के लिए पत्थर की सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। वेदी पर क्रमशः बाई से दाईं तरफ लक्ष्मण, रामचन्द्र और सीता की प्रतिमाएँ हैं।

लक्ष्मण की मूर्ति वामपार्श्व में है जो काले पत्थर की है तथा उसमें अत्यन्त ही सुन्दर पॉलिश है। इस मूर्ति की दोनों ओर छोटी–छोटी दो मूर्तियां स्थापित हैं और मूर्तियों के नीचे कुछ आकृतियाँ बनी हुई हैं जो हनुमान जी के विग्रह के समान लगती हैं। लक्ष्मण जी के पृष्ठ प्रदेश में तरकस वाण स्पष्ट दिखते हैं। दाहिना हाथ नीचे की ओर है तथा बायें हाथ में धनुष है, साथ ही बायें हाथ की मुट्ठी बन्द है। मस्तक पर मुकुट है और गले में दो हार हैं। यह मूर्ति पालकालीन काले पत्थर की बनी है। मूर्ति डेढ़ फीट लम्बी और एक फीट चौड़ी है। रामचन्द्र जी की मूर्ति ढाई फीट ऊँची तथा एक फीट चौड़ी है। इनका बायां हाथ अभयमुद्रश को प्रदर्शित करता है तथा दाहिने हाथ में धनुष बाण है। इनकी मूर्ति की दोनों ओर भी दो छोटी–छोटी मूर्तियां हैं और पैर के नीचे भी चार छोटी–छोटी मूर्तियों की आकृ ति खुदी हुई है। मूर्ति की बायों ओर एक छोटा सा चक्र है। ये मुकुट धारण किये हुए हैं। इनके हाथ में वलय है, गले में एक हार भी है। मूर्ति की बनावट में विष्णुधर्मोत्तर पुराण की चित्रशैली में वर्णित प्रसंग के वैशिष्ट्य के दर्शन होते हैं, अर्थात् इन सबों का मुखमंडल सदैव प्रसत्र रहेगा। दृष्टि भी निर्मल रहेगी और मुकुट, कर्णकुंडल, हार, कैयूर और अंगद द्वारा विभूषित होगा। विष्णुधर्मोत्तर पुराण के इस देव विग्रह वर्णन के अनुसार ही रामचन्द्र की मूर्ति है। वैद्यनाथ तीर्थ क्षेत्र में रामचन्द्र की मूर्ति को बहुत महत्व दिया जाता है और

कहा गया है कि जब–जब धर्म की ग्लानि होती है, तब–तब भक्तों के कष्ट को हरनेवाले कमललोचन राम प्रकट होते हैं। राम की मूर्ति को नीलकमल के समान श्यामवर्ण बतलाया गया है। और यह मूर्ति वस्तुतः उसी परम्परा को इंगित करती है। डा0 मित्रा ने इस मूर्ति की स्थापना में वैद्यनाथ मंदिर के प्रधान पुरोहित रामदत्त ओझा को महत्व दिया है। और 1772 से 1793 ई0 के बीच इस मूर्ति को स्थापित बतलाया है।

रामचन्द्र की प्रतिमा के बगल में सीता की भी मूर्ति है जो चतुष्कोणात्मक प्रस्तर फलक से लगी हुई है। राम तथा लक्ष्मण से यह छोटी मूर्ति 9 इंच लम्बी और 6 इंच चौड़ी है। मूर्ति का दाहिना हाथ नीचे की ओर है तथा बायें हाथ में फल है। इनके दोनों पार्श्व में प्रस्तर फलक में ही दो चक्र हैं। इनके मस्तक पर मुकुट और हाथ में कंगन है।

रामचन्द्र के मंदिर में लक्ष्मण, रामचन्द्र और सीता की मूर्तियां हैं और संभवतः वैद्यनाथ मंदिर परिसर में स्थापित सभी मूर्तियों में से ये तीनों ही मूर्तियाँ अत्यन्त आकर्षक और दुर्लभ हैं। तीनों मूर्तियां चतुष्कोणात्मक प्रस्तर फलक में हैं जो यह प्रमाणित करती हैं कि गुप्तकालीन मूर्तिकला से इनका संबंध है।

**गंगा :** वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में मुख्य मंदिर से उत्तर–पश्चिम में गंगा का एक छोटा सा मंदिर है। आज से 20 वर्ष पूर्व इस मंदिर में गंगा और यमुना की काले पत्थर की दो प्रतिमाएं थीं, किन्तु तीर्थयात्रियों के द्वारा क्षत–विक्षत होने के कारण इन दोनों के स्थान पर केवल गंगा की ही सफेद संगमरमर की मूर्ति है। गंगा मगर पर खड़ी हैं। अपने दाहिने हाथ से मगर के मुंह को पकड़ी हुई हैं और बायां हाथ नीचे की ओर इंगित करता है।

**आनन्द भैरव :** वैद्यनाथ मंदिर परिसर में आनन्द भैरव की जो प्रतिमा है वह वस्तुतः शिव की प्रतिमा है जिसे भैरव के नाम से सम्बोधित किया जाता है। यह प्रतिमा गर्भगृह के बीचो–बीच एक वेदी पर स्थापित है। प्रतिमा काले पत्थर की है जिसकी ऊँचाई साढ़े तीन फीट और चौड़ाई डेढ़ फीट होगी। प्रतिमा एक प्रस्तर फलक से लगी हुई है। इसमें 18 भुजाओं को इंगित किया गया है। ये 9–9 भुजाएं वाम पार्श्व और दक्षिण पार्श्व में है। मूर्ति में तीन नेत्र हैं। सर्प– यज्ञोपवीत भी विद्यमान है। भैरव पद्मासन की मुद्रा में बैठे हुए हैं। इनके दोनों कानों में कुंडल हैं। इनके मस्तक पर कुंचित जटाराशि है। वाम पाश्वं और

दक्षिण पार्श्व में एक–एक हाथ वृहदाकार हैं तथा अन्य हाथ प्रस्तर फलक पर तक्षण किया हुआ है। इनके दाहिने हाथ में मुद्गर है तथा बायां हाथ अभयमुद्रा में है।

वैद्यनाथ माहात्म्य के अनुसार इस मंदिर में दो मूर्तियाँ होनी चाहिए थीं, क्योंकि वहाँ पर आनन्द भैरव और द्विभुजानन्द भैरव का ध्यान दिया गया है, किन्तु दोनों ही ध्यान के अनुसार वर्तमान मूर्ति को देखा नहीं जा सकता है। इससे यह प्रतीत होता है कि धार्मिक विश्वासों के साथ ही शिव और भैरव में कोई अन्तर नहीं है। शिव का ही एक रूप भैरव है। जहाँ तक इस मूर्ति को आनन्द भैरव के नाम सम्बोधित करने का प्रश्न है, इसके पीछे ऐतिहासिक संदर्भ यह बतलाता है कि इसकी स्थापना आनन्द दत्त ओझा ने 1810 ई0 के बाद किया था और 1823 ई० में सर्वानन्द ओझा ने इस मंदिर के अधूरे निर्माण को पूरा किया।[49]

आनन्द भैरव के नाम से विख्यात यह मूर्ति की ऐतिहासिकता इसी संदर्भ से जुड़ी है। इस मूर्ति्त के निर्माण में शिल्पशास्त्र के धार्मिक आधारों को महत्व दिया गया है। यह मूर्ति भी काले पत्थर की बनी हुई है और पॉलिश बहुत ही आकर्षक है। ऐसा लगता है कि यह मूर्ति भी पालयुगीन मूर्तिकला के शिल्प को प्रकट करती है। इस मूर्ति की वेदी के नीचे एक नन्दी की भी मूर्ति्त स्थापित है जिससे यह स्पष्ट होता है कि यह शिव की मूर्ति है और भैरव नाम के साथ शिव की उपासना के क्रम में आनन्द दत्त ओझा का नाम भी जुड़ गया है। शाक्त पीठों में भैरव की उपासना को अधिक महत्व दिया गया है, क्योंकि यह उक्ति प्रचलित है ''अग्रतः भैरवः पातु पृष्ठतः पातु खेचरः।' गौरी शंकर : गौरी शंकर की प्रतिमा चुनार पत्थर की बनी हुई है। यह मूत्तिं चुनार पत्थर की एक वेदी पर स्थापित है। इस मूर्ति के प्रसंग में यह कहा जाता है कि यह कामेश्वर रूपी शिव की मूर्ति है और इनके वामांग में पार्वती बैठी हुई हैं। इनके आठ हाथ, चार वाम तथा चार दक्षिण पावं में हैं। इनके हाथों में विभिन्न प्रकार के वाण और पाश्वं हैं। इनके मस्तक पर चन्द्रमा है तथा स्मित हास्य की मुद्रा में यह भक्तों को वर और अभय प्रदान करते हैं तथा विभित्र प्रकार के अलंकार भी इनके शरीर पर हैं तथा मस्तक पर पटा है। मूर्ति्त का शिल्प यह बतलाता है कि यह आज से दो सौ वर्ष पूर्व के भीतर की बनी है और मित्रा ने इस मूर्ति के शिल्प के

बारे में नहीं लिखा है, जिससे यह भी प्रमाणित होता है कि इस मूर्ति की स्थापना 20वीं शताब्दी के प्रथमाई में हुई है और सम्भवतः इसकी स्थापना तत्कालीन प्रधान तीर्थ पुरोहित शैलजानन्द ओझा ने की है। मंदिर की पूर्वी दीवार पर जो लिपि खुदी हुई है उसमें पूर्णानन्द ओझा का नाम है। इस तीर्थ में वैद्यनाथ को कामद लिंग के रूप में ग्रहण किया गया है। अतः कामेश्वर रूपी शिव की मूत्तिं की प्रतिष्ठा की गयी है। इनके दानों पैरों में नूपुर हैं और अंगुल में अंगुलीयक रत्न है।

**नर्मदेश्वर लिंगः** नर्मदेश्वर लिंग की मूर्ति सफेद पत्थर की अदभुत बनी हुई है। नर्मदेश्वर मूर्ति के लिंग की चौड़ाई तीन इंच एवं ऊँचाई छः इंच की है। नर्मदेश्वर लिंग स्थानीय पत्थर की जलहरी से आवृत है, जिसका मुंह उत्तर की ओर है, वहीं से शिव पर चढ़ाये गये जल प्रवाहित होते रहते हैं। इस लिंग के दक्षिण पार्श्व में नन्दी जी की मूर्ति है जिसका मुंह थोड़ा टूटा हुआ है जो स्थानीय पत्थरों का ही बना है। नर्मदेश्वर लिंग विग्रह की वैद्यनाथ मंदिर परिसर के देवालयों में गिनती होती है तथा मित्रा ने भी इसकी चर्चा की है। उसने लिखा है कि यह दूधनाथ महादेव की लिंग मूर्ति है तथा यह परवर्ती समय की बनी हुई है। 19वीं शताब्दी के अंतिम दशक में जब शैलजानन्द ओझा वैद्यनाथ मंदिर के प्रधान तीर्थ पुरोहित हुआ करते थे उस समय उन्होंने चांदी के पंचमुखी लिंग को भी इस पर स्थापित किया था। कालान्तर में चांदी के पंचमुखी शिव लिंग की चोरी हो गयी एवं तब से यह लिंग विग्रह के रूप में ही विराजमान है। ऐतिहासिक दृष्टि से इसका महत्व भले ही कम हो लेकिन वैद्यनाथधाम के धार्मिक परिवेश में इस कामद लिंग का काफी महत्व है। मंदिर परिसर में अत्यधिक भीड़ रहने पर अधिकांश भक्त खासकर जो स्थानीय होते हैं नर्मदेश्वर महादेव पर ही अपना जल अर्पित करते हैं।

**ताराः** तारा मंदिर के मंडप गृह में दोनों ओर ताक पर दो छोटी–छोटी मूर्तियां हैं जोसंगमरमर की बनी हुई हैं। मंदिर के प्रवेश द्वार की बांयी ओर कमला महाविद्या की मूर्ति एक ताक पर है जिसमें चार भुजाएं तथा बायीं ओर ऊपरी हाथ में नाग और नीचे के हाथ में कमल पुष्प है। देवी कमल पुष्प पर बैठी हुई हैं।

दक्षिण पावं में भुवनेश्वरी महाविद्या की मूर्ति है। देवी की मूर्ति एक वेदी पर है। उनके बायों ओर के दोनों हाथों में वर और अभय के संकेत हैं तथा दाहिनी ओर के हाथ में अंकुश और नाग हैं। मूर्ति में वस्त्र है, गले में मुक्ताहार है तथा तीन नेत्र हैं।

मंदिर के मुख्य गर्भगृह में तारा की मूर्ति ऊँचे चबूतरे पर संगमरमर में तक्षण करके विग्रह को बनाया गया है। दस महाविद्या के अन्तर्गत तारा को द्वितीय महाविद्या के रूप में जाना जाता है। तारा की मूर्ति में तारा की केश राशि फैली हुई है। इनके चार हाथ हैं। दाहिनी ओर के ऊपर के हाथ में खड्ग है और नीचे के हाथ में 'कत्रिंकत्ता' और बांयी ओर के ऊपर के हाथ में मुंड और पात्र का एक ही हाथ में है तथा नीचे के हाथ में श्वेतास्थि पट्टिका और मुंड। ये पंच कपाल को धारण किये हुए हैं और इनके तीन नेत्र हैं। ये रागहार धारण किये हुई हैं। यह पेत्कारिणी तंत्र में वर्णित उग्रतारा के ध्यान से संबंधित मूर्ति है। कलात्मक दृष्टि से यह मूर्ति अत्यन्त ही आकर्षक है और मूर्ति शिल्प के सिद्धान्तों एवं तांत्रिक साधना को आधार मानकर तारा की मूर्ति बनायी गयी है। तारा की मूर्ति में यह भी दिखलाया गया है कि तारा शिव पर खड़ी हैं और दाहिना पाँव शिव के वक्षस्थल पर और बायां जंघा पर। इसलिए इस मूर्ति की मुद्रा प्रत्यालीढ़ मुद्रा के रूप में भी जानी जाती है। साथ ही शिव जहाँ सोये हुए हैं, वहां चारों ओर अग्नि स्फुलिंग का प्रकाशन हो रहा है। मंदिर के गर्भगृह एवं मंडप में संगमरमर के पत्थरों की नक्काशी और कला है।

इस मूर्ति के संबंध में मित्रा ने वर्णन नहीं किया है। इसका अर्थ यह है कि यह मूर्ति 20वीं शताब्दी के तृतीय दशक के बाद बनी है और इसे तत्कालीन प्रधान पुरोहित भवप्रीतानन्द ओझा ने स्थापित किया था।

**दक्षिण कालीः** वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में काली की मूर्ति सेण्डस्टोन की बनी हुई है, जो उत्तर गुप्तकालीन की है। मूर्ति की ऊँचाई 20 इंच के लगभग है और चौड़ाई 6 इंच है। मूर्ति में महाविद्या काली का दक्षिण पाद शिव के वक्षस्थल के समीप है और वाम पाद उनके दाहिने पैर पर है। देवी के विग्रह में चार हाथ हैं। दाहिनी ओर के दोनों हाथों का आधार दो इंच का है और मणिबन्ध से लेकर हाथ की अंगुलियों के भागपर्यंत चांदी के बने हुए हैं जिसमें स्पष्ट रूप से अलग–अलग अंगुलियों को एक ही साथ ढालकर बनाया गया है।

देवी की बांयी ओर के हाथ प्रस्तर के ही हैं, जो बिल्कुल स्पष्ट हैं। ये चारों हाथ वर और अभय को इंगित करते हैं। स्पष्ट रूप से मूत्तिं के सवाँग ही दिखते हैं। नीचे में शिव जी सोये हुए हैं। उनके मस्तक पर जटाजूट है। उनके हाथ–पैर दोनों स्पष्ट रूप से दिखलाई पड़ते हैं। काली के मस्तक पर केशराशि बिखरी हुई है, जो प्रस्तर में ही तक्षण किया हुआ है। मूर्ति प्रस्तर फलक से लगी हुई नहीं है, किन्तु मेहरावदार एक प्रस्तर खंड मूर्ति के पृष्ठ प्रदेश में है। मूर्ति चार फीट ऊँची वेदी पर है जिस पर सीढ़ियों के द्वारा आरूढ़ होकर देवी का दर्शन किया जाता है।

काली की मूर्ति के संबंध में जो ध्यान वैद्यनाथ माहात्म्य में दिया गया है उसमें काली कोब्रह्म के रूप में वर्णित किया गया है और नित्य आनन्दमय कहा गया है। साथ ही अंजन पर्वतके समान वर्णवाली करालमुखी काली का वर्णन किया गया है। इनके गले में नाग यज्ञोपवीत है,मस्तक पर अर्द्धचन्द्र विद्यमान है जो घिस गया है। इनके आसपास में शिव की मूर्ति तक्षण करबनायी गयी है जो कि घिस गयी है। मुंडमाला धारण की हुई हैं। इनके हाथ में खड्ग आदि कावर्णन है, किन्तु वर्त्तमान विग्रह में वे आयुध नहीं दिखलाई पड़ते हैं। काली की मूर्ति के दो प्रकारके ध्यान का वर्णन है। एक में काली के ब्रह्मस्वरूप का वर्णन है और दूसरे में काली के करालरूप का वर्णन है। एक ध्यान स्वतंत्र तंत्र से लिया गया है जिसकी चर्चा पंडित मुरलीधर झा नेपुरश्चर्यार्णव में भी की है।

वैद्यनाथ क्षेत्र को हृदयपीठ कहा जाता है और यहाँ शाक्त उपासना की परम्परा प्रचलित है। काली की मूर्ति की पूजा देवघराबाद (देवघर) की ग्राम देवी के रूप में की जाती है। यह मूर्ति वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में स्थापित अन्य शाक्त मूर्तियों की अपेक्षा प्राचीन है। इस मूर्ति के प्रस्तर का वर्णन संध्या देवी के विग्रह के प्रस्तर के वर्णन से मिलता–जुलता है। लगता है यह मूर्ति अति प्राचीन काल से ही यहाँ स्थापित है और देवघराबाद की ग्राम देवी के रूप में इसकी अर्चना होती है।

वस्तुतः यह मूर्ति दक्षिण काली की है। काली की मूर्तियाँ आठ प्रकार की हैं। इन मूर्तियों में से दक्षिण काली की उपासना सबसे अधिक प्रचलित है और पूर्वांचल में इसकी उपासना सबसे अधिक होती है। जहाँ तक काली की मूर्तियों का प्रश्न है। इनकी मूर्ति की

स्थापना के विभिन्न क्रम मिलते हैं। वर्तमान मूर्ति में मणिवर्ण, मेघमाला के भीषण गर्जन, विद्युत पुंज सचकित क्रीड़ा, ग्रह–नक्षत्र की कच्छप युति तथा चतुर्दिक संहार के तांडव नृत्य की कल्पना कर सकते हैं, लेकिन विशेष इस मूर्ति के साथ यह है कि इसमें शिव–शक्ति को एक ही साथ दिखलाया गया है। शाक्त साधना की परम्परा पूर्वांचल में 8वीं शताब्दी से ही प्रचलित है। त्रिपुरा के अहोम शासक लोग पहले राजा थे, जिन्होंने शक्ति की उपासना पहले पूर्वांचल में की थी। इसके बाद समतट के राजा ने शक्ति पूजा की और बंगाल में लोकप्रिय बनाया। देवघर में भी काली की मूर्ति के साथ पूर्वांचल का वह प्राचीन रूप देखने को मिलता है जिससे यह प्रमाणित होता है कि यह मूर्ति 7वीं शताब्दी से लेकर 9वीं शताब्दी के मध्य स्थापित की गई। जनश्रुति यह बतलाती है कि आज से 200 वर्ष पूर्व इस मूर्ति के सम्मुख कभी नरबलि भी हुआ करती थी जिससे यह अनुमान लगाया जा सकता है, क्योंकि यह पहाड़िया जाति की ग्रामदेवी थीं। उसी परम्परा के अनुरूप आज भी इनकी उपासना ग्रामदेवी (काली) के रूप में होती है। इस संबंध में एक तथ्य है कि सारवाँ के एक घाटवाल मर्दन सिंह ने भीखन देव को स्पर्धा युद्ध में पराजित कर इसी मूर्ति के समक्ष उसके मुंड को गाड़ दिया था। इससे प्रमाणित होता है कि यह देवस्थल के रूप में आज भी विख्यात है। इस मंदिर में जयनारायण ओझा और हरिनारायण के दो शिलालेख हैं। जयनारायण का लेख 1712 ई0 का और हरिनारायण का लेख उससे पूर्व का है। काली की मूर्ति उत्तर गुप्तकालीन मूर्ति कला से संबंधित है। इस मूर्ति की कलात्मक भित्ति को मथुरा के कला केन्द्र की मूर्तियों से संबंधित किया जा सकता है, क्योंकि इसमें शरीर के छोटे–बड़े सभी अंगों का सानुपातिक विन्यास मनोरम है।

**अन्नपूर्णा मंदिर :** वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में अन्नपूर्णा की मूर्ति्त लगभग एक फीट लम्बी और चार–पाँच ईंच चौड़ी है। मूर्ति के दो हाथ हैं। देवी खड़ी हैं उनके एक हाथ में अन्नपात्र है और दूसरे में कोई वस्तु रखी हुई है जो स्पष्ट रूप से दिखलाई नहीं पड़ती और वे अन्न बांट रही हैं। इस मुद्रा में मूर्ति को चित्रित किया गया है। देवी के पैर की उंगलियां तक्षण करके बनायी गयी हैं। लगता है समस्त मूर्ति फलक को तक्षण के द्वारा ही बनाया गया है। गले में अलंकार और वस्त्र देवी के हैं। मूर्ति्त प्रस्तर फलक से लगी हुई है। मुखमंडल की शोभा आकर्षक है, किन्तु मूर्ति्त में कोई पॉलिश नहीं है।

वस्तुतः अन्नपूर्णा पार्वती का ही एक रूप है, क्योंकि इन्हें महेश्वरी और शंकरवल्लभ के रूप में स्वीकार किया जाता है।शक्ति की मूर्ति के क्रम में लक्ष्मी और पार्वती की मूर्तियाँ अधिक पायी जाती हैं। इसी परम्परा के क्रम में इनकी मूर्ति भी इस शक्तिपीठ में स्थापित की गयी है। अन्नपूर्णा की मूर्ति बनारस के मंदिर में भी है और सम्भवतः वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में इस परम्परा की कड़ी के रूप में इस को स्थापित किया गया है। भारत में ऐसा कोई स्थान नहीं है जहाँ शिव–पार्वती की पूजा नहीं होती हो। यहाँ भी अन्नपूर्णा की मूर्ति इसी कला–कौशल को प्रदर्शित कर रही हैलगता है कि इस मूर्ति का निर्माण स्थानीय पत्थरों से ही हुआ है और मित्रा ने स्वीकार किया है कि 1782 ई0 में यह मूर्ति यहाँ स्थापित की गयी है जिससे यह स्पष्ट संकेत मिलता है कि 1782 ई0 में तत्कालीन प्रधान तीर्थ पुरोहित रामदत्त ओझा ने इस मूर्ति की स्थापना की। बनारस का अन्नपूर्णा माँदर अत्यन्त ही प्राचीन है और अत्यन्त ही उत्तम शैली में है, जिसे हेवेल ने दो सौ वर्षों से अधिक का माना है। वैद्यनाथ मंदिर परिसर में स्थित अन्नपूर्णा की मूर्ति भी दो सौ वर्षों के अन्तराल की है, जिससे यह प्रमाणित होता है कि अन्नपूर्णा की प्रतिष्ठा यहाँ भी लगभग उसी समय में हुई।

**लक्ष्मीनारायण :** वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में लक्ष्मीनारायण का मंदिर एक प्रसिद्ध मंदिर है, जिसमें एक साथ नारायण, लक्ष्मी, वसुमती और गरुड़ की मूर्तियाँ हैं। मूर्ति कला की दृष्टि से इनकी विवेचना इस प्रकार हैः–नारायण की मूर्ति काले पत्थर की बनी हुई है। उनके चार हाथ हैं, मस्तक पर मुकुट है, अजानुबाहु वस्त्राभरण से विभूषित हैं। उनके दाहिने हाथ के ऊपर में गदा तथा नीचे वाले हाथ में अभय और बायीं ओर के हाथ में शंख और नीचे वाले में पद्म है एवं गले में हार पहने हुए हैं, कान में कुंडल है। मूर्ति का पॉलिश अभी भी यह बतला रहा है कि यह मूर्ति अभी ही बनी हो। यह मूर्ति भी पालकालीन प्रस्तर कला का एक नमूना है और पूर्वांचल में प्रचलित मूर्तिकला के शिल्प का एक उदाहरण है। मुखमंडल में स्मित हास्य का परिदर्शन होता है। मूर्ति शिलापट पर उत्कीर्ण है। इस मूर्ति में मूर्तिकला का अभिनव सौन्दर्य विद्यमान है। इस मूर्ति को देखने से ऐसा लगता है कि यह सारनाथ मूर्तिकला से प्रभावित है, क्योंकि इस मूर्ति में अंगों की गोलाई और लचीलापन मूर्तिशिल्प के क्षेत्र में एक उदाहरण है। साथ ही वस्त्र–विन्यास की दृष्टि से भी मूर्ति उसी प्रवृत्ति की ओर

संकेत देती है, जिसके अन्तर्गत सारनाथ की मूर्ति भी आधुनिकता की ओर प्रवृत्त होने लगी थी। मूर्ति के सम्पूर्ण स्वरूप को देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि बौद्ध कला का इस पर गहरा प्रभाव है और यही कारण है कि पालकालीन मूर्तिकला से कुछ भित्र बनावट को प्रस्तुत करता है।

इतना ही नहीं, विष्णु के प्रस्तर फलक लिए शारीरिक सौष्ठव का प्रदर्शन किया गया है। वह मूर्ति शिल्प में सौन्दर्य की विधा को स्पष्ट करता है। अतः यह निश्चय ही पालकालीन मूर्ति शिल्प के निर्माण के पूर्व का है। इस मूर्ति में विष्णु प्रस्तर के साथ ही दिखलाये गये हैं और मूर्ति मंदिर के गर्भगृह के बीचो–बीच चार फीट ऊँची वेदी पर स्थित है। मित्रा ने इस मूर्ति को वामदेव नामक किसी व्यक्ति द्वारा निर्मित माना है और इसका समय 1630–40 के बीच माना है। साथ ही वामदेव को प्रधान तीर्थ पुरोहितों के वंश का स्वीकार किया है।

विष्णु के वाम पार्श्व में लक्ष्मी की एक कलात्मक मूर्ति है जिसमें चार भुजाएं हैं। यह मूर्ति भी नारायण के समान ही है। दोनों की बनावट में कोई अन्तर नहीं है। प्रथम मूर्ति क साथ ही इसे भी यहाँ लाया गया है, किन्तु मूर्तिकला की दृष्टि से दोनों मूर्तियां समान हैं। परम्पराओं के अनुसार यह लक्ष्मी की मूर्ति मानी जाती है, किन्तु यह मूर्ति विश्वकर्मा की भी कही जाती है। दोनों ही मूर्तियां विष्णुधर्मोतर पुराण के अनुसार रिजुवागत शिला में बनी हैं, जिसका तात्पर्य है कि मूर्ति में सरल रूप से चेहरे को विष्णुधर्मोत्तर पुराण में एक उत्तम शैली के रूप में स्वीकार किया गया है। इस मूर्ति में बायीं ओर के ऊपर वाला हाथ क्षतिग्रस्त हो गया है। इस मूर्ति के निर्माण का काल भी पूर्वोक्त ही है।

वसुमति की मूर्ति लक्ष्मी के वाम पार्श्व में स्थित है जो प्रस्तर फलक में तक्षण करके बनाया गयी है। यह मूर्ति्त आकार और आयत में 12ध्4 है और इसके भी दो हाथ हैं जो उसी अनुपात में मूर्ति्त शिल्प के आधार पर बनाये गये हैं। वसुमति पृथ्वी देवी का पर्याय है। वसुमति की मूर्ति से यह प्रमाणित होता है कि नारायण के साथ पृथ्वी मूर्ति स्थापित करने की परम्परा पूर्वांचल में ही नहीं है, फिर भी यहाँ पर यह है। प्रस्तर फलक और रंग पूर्व पालकालीन मूर्ति– शिल्प से संबंधित है। इसी मूर्ति के पार्श्व में गरुड़ की मूर्ति है जो

कि अत्यन्त ही लघु आकार की है और पक्षी का चेहरा ग्रीवापर्यंत मानवीय है। शेष भाग पक्षी की नासिका को इंगित करते हैं एवं पंख हैं। गरुड़ की मूर्ति की उपस्थिति ही यह बात प्रमाणित करती है कि यह मंदिर विष्णु का मंदिर है, क्योंकि किसी भी शिव के मंदिर में गरुड़ की मूर्ति नहीं रहती है। आर. मित्रा का कहना समीचीन है कि चारों मूर्तियां एक ही वेदी पर स्थापित हैं। वेदी का पत्थर बालुई पत्थर का बना है, किन्तु मूर्तियां राजमहल की पहाड़ी की बनी हुई हैं। ईसा की छठी शताब्दी से ।। वीं शताब्दी तक राजमहल की पहाड़ियों के प्रस्तर ही समस्त उत्तर भारत में मूर्ति निर्माण के कार्य में आते थे। चूंकि राजमहल के निकट ही देवधर अंचल है, इसलिए ये मूर्तियां भी वहीं के स्थानीय प्रस्तरों से निर्मित हैं।

**नीलकंठ महादेव :** वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में अंतिम मूर्ति की श्रृंखला के क्रममें नीलकंठ महादेव की मूर्ति है जिससे यह पता चलता है कि शिव की अनेक मूर्तियों में से नीलकंठ की मूर्ति को भी इस तीर्थ क्षेत्र में स्थान दिया गया है। शिव के नीलकंठ की मूर्ति की कल्पना समुद्र–मंथन के बाद विषपान के उपरान्त ही हुई है, किन्तु सर्वप्रथम शिव को नीलकंठ के रूप में सम्बोधित करने का वर्णन है कैवल्य उपनिषद् में मिलता है। भारत में भी अपने नाट्यशास्त्र में शिव के नीलकंठ रूप का वर्णन किया गया है।

प्रस्तर मूर्ति एक फीट ऊँची और चार इंच चौड़ी है। मूर्ति में दो हाथ हैं, दोनों ही हाथ शिल्प शास्त्र के सिद्धांत के अनुसार ही बने हुए हैं। शिव अश्व पर सुखासन की मुद्रा में बैठने को उद्यत हैं। उनके एक हाथ में भाला और दूसरे हाथ में अभय है। मूर्ति प्रस्तर फलक से जुड़ा हुई है। प्रस्तर फलक तोरण के समान है जो इस मूर्त्ति शिल्प को उत्तर गुप्तकालीन मूर्तिकला से जोड़ता है, किन्तु जिस पत्थर से यह बनायी गयी है वहाँ काला पॉलिश किया हुआ पत्थर है। इस तरह की मूर्ति बनाने की विधा पालों के समय में विकसित हो चुकी थी और उत्तर बौद्धयुग में जिसके अन्तर्गत कुषाण, मौर्य और शुंगकालीन मूर्त्ति शिल्प भी है, के अन्तर्गत ऐसी मूर्तियां थीं। ब्राह्मण धर्म और बौद्ध धर्म के समन्वय के युग में भी ऐसी ही मूर्तियाँ बनती थीं। नीलकंठ महादेव की मूर्त्ति मध्यप्रदेश के खजुराहो में भी प्राप्त है। जहाँ तक इस मूर्त्ति–शिल्प का प्रश्न है, इसे पालकालीन मूर्ति कला के अन्तर्गत माना जाता है। डॉ० मित्रा ने इस मूर्ति के संबंध में कोई विवरण प्रस्तुत नहीं किया

है और केवल इतना कहकर संतोष कर लिया है कि 12 मूर्तियों के अतिरिक्त शेष मूर्तियाँ प्रधान तीर्थ पुरोहितों द्वारा ही प्रतिष्ठित की गई हैं। शुक्र : नीलकंठ मूर्ति के दक्षिण पार्श्व में शुक्र की मूर्ति है। मूत्ति छः ईंच लम्बी और तीन ईंच चौड़ी है। मूर्ति का प्रस्तर सेण्ड स्टोन का ही बना हुआ है और स्थानीय प्रस्तर खंडों से ही बना है। मूर्ति अति प्राचीन नहीं है, क्योंकि मित्रा ने भी इस मूर्ति की चर्चा नहीं की है।

**शनि :** नीलकंठ के मंदिर में भी नीलकंठ और शुक्र के बाद शनि की मूर्ति है जो शुक्र की मूर्ति के आकार की ही है और यह मूर्ति भी सेण्ड स्टोन की ही बनी हुई है। मूर्ति में शनि का विग्रह तक्षण करके बनाया गया है जो बिल्कुल स्पष्ट नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि इन मूर्तियों को स्थापित कर दिया गया है। मूर्तिकला की दृष्टि से बंगाल के शिल्प का प्रभाव इस पर है, किन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत पुरानी नहीं है। मूर्ति में विग्रह भी स्पष्ट रूप से दिखलाई नहीं पड़ता है।

**दंडपाल :** नीलकंठ मंदिर में ही शनि की मूर्ति के उत्तर भाग में एक दंडपाल की मूर्तिहै। मूर्ति में दो हाथ हैं। मूर्ति चार ईंच ऊँची और तीन इंच चौड़ी है और एक प्रस्तर फलक में तक्षण करके बनायी गयी है। मूर्ति में दंडपाल मुकुट पहने हुए हैं जो इस बात का द्योतक है कि यह धर्मराज की भी मूर्ति हो सकती है, क्योंकि अपने यहाँ दंडपाल के रूप में धर्मराज की ही उपासना होती है। मूर्ति की दोनों ओर अप्सराओं का विग्रह है जो यह बतलाता है कि यह मूर्ति बुद्ध की भी हो सकती है, क्योंकि 8वीं सदी से 10वीं सदी तक बौद्धों का वर्चस्व इस क्षेत्र पर रहा है जिसके कारण यह बुद्ध की भी मूर्ति हो सकती है और बुद्ध को भी दंडपाल के रूप में सम्बोधित किया जाता है। ऐसे अमरकोश में भी धर्मराज का नाम दंडधर आया है। स्पष्ट है कि यह मूर्ति धर्मराज के रूप में ही यहाँ पूजी जा रही है और इस तीर्थ क्षेत्र में समस्त पाप कर्मों के दंड देने के लिए इन्हें साक्षी माना जाता है। मूर्तिकला की दृष्टि से यह पालकालीन मूर्ति है। बंगाल में धर्मराज की पूजा की परम्परा अति प्राचीन है। अतः दंडपाल के नाम से विख्यात मूर्ति धर्मराज की ही है।

**त्रिपुर सुन्दरी :** वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में पार्वती का मंदिर है। इस मंदिर में देवी पार्वती के विग्रह के साथ जयदुर्गा की भी मूर्ति है। वैद्यनाथ माहात्म्य में त्रिपुर सुन्दरी का ध्यान

दिया गया है। ध्यान में यह बताया गया है कि जगत के जीवन की आधार बाहर ब्रह्मा, विष्णु, शिवरूपानन्द के सार के पात्र रूप वरुणा की चन्द्रिका से युक्त देवी का विग्रह है। देवी के हाथ में पाश, अंकुश, इच्छुकदंड ये पाँच वाण हैं। देवी के इस विग्रह को देखते ही सभी देवता दुखरहित हो जाते हैं। प्रस्तुत वर्णन से त्रिपुर सुन्दरी के विग्रह के सर्वांग के संबंध में बोध नहीं होता है। त्रिपुर सुन्दरी का ध्यान कामेश्वरी के नाम से भी दिया गया है, जिसमें यह बतलाया गया है कि यह देवी निरामय महिमा तीनों जगत को मोहनेवाली सम्पूर्ण व्यवहारों की स्वामिनी और परम ज्ञानमयी हैं। उदय होते हुए सहस्र सूर्य के समान कातिवाली दाड़िमी कुसुम के समान इसका वर्ण है। यह देवी स्फुरायमान विद्युतहार के समान तप्त कांचनवाली भी कही गयी हैं, किन्तु यहाँ पर जो प्रतिमा मिलती है, उसमें देवी पद्मासन की मुद्रा में बैठी हुई हैं। देवी के विग्रह में चार हाथ हैं। दोनों नीचे के हाथ ठहुने पर रखे हुए हैं और ऊपर के एक दायें हाथ में अम्बे आयुध हैं और बायें हाथ में पाश है। देवी के मस्तक पर मुकुट है कानों में कुंडल है। देवी एक प्रस्तर फलक में लगी हैं। प्रस्तर फलक गोलाकार है। देवी की आकृक्ति के नीचे कुछ मूर्तियां हैं, जो ठीक से नहीं देखी जाती हैं। यह मूर्ति बहुत प्राचीन प्रतीत होती है और कुषाणकाल के पूर्व की मूर्तिकला से इसका संबंध जुड़ता है। मूर्ति सेण्डस्टोन की बनी हुई है। काले पत्थर की बनी हुई नहीं है। मूर्ति के अंग प्रत्यंग से सौकुमार्य की अभिव्यक्ति होती है। त्रिपुर सुन्दरी की यह मूर्ति जो पार्वती के नाम से विख्यात है, कलात्मक दृष्टि से पूर्वांचल की एक उत्तम कोटि की मूर्ति है। लगता है कि इस मूर्ति के निर्माण में स्थापत्य कला के सिद्धांतों को महत्व दिया गया है। डॉ० मित्रा के अनुसार यह मूर्ति 1701–10 ई0 के बीच वैद्यनाथ मंदिर के प्रधान तीर्थपुरोहित रत्नपाणि ओझा के द्वारा निर्मित या स्थापित की गयी है। मूर्ति शिल्प के बारे में यह कहा जा सकता है कि यह पालकालीन मूर्ति शिल्प से पूर्व की है। डा0 मित्रा ने स्वीकार किया है कि पार्वती शिव की सहधर्मिणी के रूप में हिन्दूशास्त्रों में वर्तमान हैं। पार्वती को मार्कण्डेय पुराण में वर्णित महाशक्ति के रूप में देखा जाता है। त्रिपुर सुन्दरी का ध्यान वस्तुतः विभिन्न तंत्रों एवं ग्रंथों में चतुर्भुज और पाश अंकुश से युक्त बतलाया गया है।

शिव महापुराण के अनुसार पराशक्ति ही सती के रूप में अवतरित हुई थीं। दक्षयज्ञ में योगाग्नि के द्वारा अपने शरीर का परित्याग करने पर सती अर्थात् परमात्म शिव के रूप

में प्रादुर्भूत हुईं। जहाँ तक पार्वती की मूर्ति का प्रश्न है, इस संबंध में यह कहा जा सकता है कि सती एवं उमा पार्वती एक ही सत्ता के दो नाम हैं। दोनों में अभेद है और दोनों ही पराशक्ति के रूप में महादेवी उमा एवं परमार्थ शिव की शक्ति के अभेद प्रदर्शन के लिए दार्शनिक क्षेत्र में शक्ति की ही भांति पौराणिक क्षेत्र में उमा को सम्पूर्ण शक्तियों की आदिभूत, त्रिलोक जननी, शिवा आदि अनेक अभिधानों से अभिहित किया जाता है। यहाँ यह भी स्मरणीय है कि वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में पार्वती के विग्रह को त्रिपुर सुन्दरी के माध्यम से दर्शाया गया है, क्योंकि त्रिपुर सुन्दरी परमार्थ शिव की सहवासिनी हैं। इतना ही नहीं, पुराणों के मनन से ज्ञात होता है कि सर्वप्रथम अम्बा की इच्छा शिव की सहचरी के रूप में हुआ करती थी, किन्तु कालान्तर में शिव की सहचरी माने जाने के बाद देवी की उपासना स्वतंत्र रूप से होती रही और धीरे–धीरे उसने एक अलग विग्रह का रूप धारण कर लिया जिसका अपना अलग साहित्य और अलग ग्रंथ थे। ऐसे तो देवी के दुर्गा, चंडिका नाम भी हैं, किन्तु जहाँ तक प्रतिमा का प्रश्न है, पार्वती की प्रतिमा को त्रिपुर सुन्दरी से भिन्न आकार का बनाना चाहिए था, जिसका उल्लेख कालिदास ने कुमार संभव में किया है, भक्ति साधना की दृष्टि से देवी की इस प्रतिमा को पार्वती की प्रतिमा कहने में कोई दोष नहीं है। देवी की प्रतिमा का निर्माण भी तो लोक–कल्याण के लिए ही हुआ है। भगवान शिव के समान ही देवी के भी असंख्य गण हैं। इनके गणों में स्त्रियां ही रहती थीं। इसमें काली, तारा, छिन्नमस्ता, श्रीविद्या, भुवनेश्वरी, भैरवी, बगला, धूमावती, त्रिपुर सुन्दरी, मातंगी आदि महाविद्याएं हैं। धीरे–धीरे लोक कल्याणकारिणी देवी उमा का इतना अधिक प्रभाव बढ़ा कि इनके मंदिर एवं इनकी प्रतिमा का निर्माण सर्वाधिक पुण्यप्रद कार्य के रूप में मान्य हो गया। मृच्छकटिकम में महादेवी के रूप में पार्वती का भी एक बार उल्लेख हुआ है और इनके द्वारा शुभ–निशुंभ के वध की कथा का संकेत मिलता है। रघुवंश के प्रथम सर्ग के प्रथम श्लोक में भी पार्वती और परमेश्वर का वर्णन है। मेघदूत के भी 34, 35 और 36 श्लोक में पार्वती का वर्णन आता है। वैद्यनाथ मंदिर में जो पार्वती का मंदिर है इससे यह प्रमाणित होता है कि पार्वती को शिव के माने जाने के फलस्वरूप शिव और पार्वती का जो तादात्म्य हुआ, इस विचार की अभिव्यक्ति जनसाधारण में एक नई कल्पना द्वारा हुई। स्पष्ट है कि शिव के साथ पार्वती का विग्रह अनिवार्य सत्य है, क्योंकि शिव–पार्वती की सार्वजनिक उपासना साधारणतया मंदिरों में होती थी, जिनमें इनकी मूर्तियों की स्थापना की

जाती थी। वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में भी शिव और पार्वती के संस्कार पूजन की प्रधानता है जिसके अधीन पाग या गठबंधन समर्पित किया जाता है। मत्स्यपुराण में एक और संस्कार की चर्चा है जिसमें शिव और पार्वती की एक साथ ही पूजा होती थी। वैद्यनाथ मंदिर परिसर में इस प्रतिमा को दूध और सुगंधित जल से स्नान कराया जाता था और तदन्तर देवी का अभिवादन किया जाता था। स्पष्ट है कि ईसा की छठी शताब्दी से लेकर 13वीं सदी के अंत तक के काल को हम पुराणों का काल कहते हैं। इस काल में अनेक मंदिर और शिव की प्रतिमाएँ हैं।

इस प्रकार अनन्त वर्मा (7वीं शताब्दी) नागार्जुन पर्वत गुफा लेख में भी शिव और पार्वती की प्रतिमाएँ हैं जिससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि त्रिपुर सुन्दरी की प्रतिमा ही कालान्तर में पार्वती के रूप में प्रसिद्ध हुई और वैद्यनाथ मंदिर परिसर में स्थित इस प्रतिमा को पूर्व मध्यकालीन भारत के पूर्व की बनी हुई प्रतिमा की कोटि में रखने से यह गुत्थी सुलझ जाती है। वस्तुतः त्रिपुरसन्दी की प्रतिमा कलात्मक अभिधान की दृष्टि से बहुत ही महत्व रखती है। मूर्ति में चमक नहीं है, किन्तु लगातार पूजन–अर्चन के कारण मूर्ति की आंखों में एक अद्‌भुत लावण्य है जो यह बतलाता है कि मूर्ति की अभिव्यक्ति शास्त्रीय विवेचनाओं से युक्त है और इसे बंगाल, बिहार एवं उड़ीसा की मूर्तिकला के निर्माण की शैली से अलग नहीं रखा जा सकता है। पार्वती को हमेशा शिव के साथ दिखलाया गया है। पार्वती शिव की सहधर्मिणी के रूप में चित्रित हैं। कालिदास ने भी कुमारसम्भव में द्विभुज होने की चर्चा की है जो यह बतलाता है कि पार्वती का सही रूप वही है। इन संदभों के आलोक में पार्वती के विग्रह के स्थान पर त्रिपुर सुन्दरी की मूर्ति्त कल्पना को सटीक नहीं भी कहें, फिर भी यह तो मानना ही पड़ेगा कि भगवती के विभिन्न रूप हैं। उन विभिन्न रूपों के क्रम में त्रिपुर सन्दरी और पार्वती के रूप–साम्य में अंतर कम है, क्योंकि त्रिपुर सुन्दरी के ध्यान में वैद्यनाथ माहात्म्य में ब्रह्मा, विष्णु और सदाशिव को ज्योतिर्मय कहा गया है। ये ही जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरीय और सुषुप्त ब्रह्म सदाशिव हैं। देवी के सिंहासन के नीचे जो विग्रह है क्या वे पंचब्रह्म स्वरूप हैं और इसी पंचब्रह्म को त्रिपुरा के सिंहासन के नीचे देखा जाता है। इसमें अ–कार ब्रह्मा, उ–कार, विष्णु और म–कार रूद्र और अर्द्‌धमात्रा पर है। परमब्रह्म वाच्य और प्रणव वाचक हैं। त्रिपुर सुन्दरी की प्रतिमा में

उपासना के क्रम को वाच्य वाचक संबंध में उपचार के रूप में देखा गया है और त्रिपुर सुन्दरी को दस महाविद्या में तृतीय महाशक्ति के रूप में जाना जाता है। श्रीविद्या के नाम से भी भारत में उनकी उपासना होती है। प्राचीन युग में ब्रह्मा, विष्णु और महेश ने इनकी अर्चना की. इसलिए देवताओं ने इन्हें त्रिपुर नाम दिया।जहाँ तक वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में त्रिपुरा की मूर्ति को पार्वती से सम्बोधित करने का रहस्य है। इस संबंध में यह कहा जा सकता है कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर से पुरातन होने के कारण अम्बिका का नाम त्रिपुरा है। शिव का एक नाम त्रिपुर भी है। त्रिपुर अर्थात् परम शिव की सुन्दरी भार्या होने के कारण भी इसे त्रिपुर सुन्दरी कहा जाता है। इस परिस्थिति में त्रिपुर सुन्दरी को यदि पार्वती के नाम से सम्बोधित किया जाता है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं, क्योंकि त्रिपुर सुन्दरी को शिवा के नाम से सम्बोधित किया गया है। इसलिए वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में पार्वती के विग्रह के स्थान पर त्रिपुर सुन्दरी का विग्रह स्थापित किया गया है।

दूसरी बात यह है कि वैद्यनाथधाम एक शक्तिपीठ है। यहाँ सती का हृदय गिरा है, इसलिए इसे हृदयपीठ कहते हैं। शक्तिपीठ की यह परम्परा है कि यहाँ पर श्रीयंत्र की पूजा होती है। आदि शंकराचार्य (8वीं सदी) के समय से ही यह परम्परा प्रचलित है। त्रिपुरा का एक नाम श्रीविद्या भी है। जहाँ–जहाँ श्रीविद्या की उपासना होती है वहाँ–वहाँ श्रीचक्र पूजा जाता है। इसका संबंध योग और तंत्र शास्त्र के गूढ़ रहस्यों से युक्त है।

स्पष्ट है कि वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में पार्वती की उपासना त्रिपुर सुन्दरी के रूप में प्रचलित है। वैद्यनाथ को यहाँ चिंतामणि स्वरूप कहा गया है। इसलिए शक्ति को चिंतामणि देवी के रूप में सम्बोधित किया गया है और वह चिंतामणिमय परमैशानि महात्रिपुर सुन्दरी है।

**जयदुर्गा :** जयदुर्गा की मूर्ति पार्वती मंदिर में त्रिपुर सुन्दरी के वाम पार्श्व में स्थित है। दुर्गा की मूर्ति 12 इंच लम्बी और चार इंच चौड़ी है। मूर्ति सेण्ड स्टोन की बनी हुई है। यह मूर्त्ति गुप्तकालीन लगती है, क्योंकि भगवती दुर्गा की भंगिमा इस मूर्ति को अनुपम बना देती है। मूर्ति के चार हाथ हैं। नीचे के दाहिने हाथ में त्रिशूल है जो राक्षस के हृदयस्थल को भेद रहा है। बायें के निचले हाथ में राक्षस की ओर संकेतित है। देवी राक्षस के ऊपर

पैर रखकर खड़ी हैं। शेष हाथों में शंख, चक्र, त्रिशूल हैं। प्रतिमा में देवी का मुखमंडल सौम्यता को प्रकट कर रहा है। देवी की मूर्ति एक प्रस्तर फलक में तक्षण करके बनयी गयी है। प्रस्तर फलक मेहराबदार है। वैद्यनाथ माहात्म्य में चर्तुभुजा देवी दुर्गा का ध्यान दिया गया है। स्वर्ण वर्ण के समान कातिवाली तीन नेत्र, मधुर हास्य, सब लक्षणों से सम्पन्त्र, अर्द्धचन्द्र जिसके मस्तक पर शोभायमान है, ऐसी देवी का ध्यान करता हूँ। देवी की चार भुजाएं हैं और उन भुजाओं में शंख, चक्र विद्यमान है। वह त्रिशूल से महिषासुर का हृदय विदीर्ण कर रही हैं। प्रस्तुत ध्यान के परिप्रेक्ष्य में जयदुर्गा की मूर्ति सटीक बैठती है जिससे यह ज्ञात होता हैकि पार्वती और दुर्गा में कोई भेद नहीं है। देवी के मस्तक पर केशराशि है जो अत्यन्त हीकलात्मक कृति को प्रकट करती है। इस प्रकार की मूर्ति यहाँ गुप्तयुग में भी बननी शुरू हो गयीथी, क्योंकि ऽवीं सदी की मूर्ति में प्राप्त पार्वती की शिरोमूर्ति की केश–रचना के निदर्शन औरमुखाक्ति के सौन्दर्य से इस जयदुर्गा की मूर्ति की तुलना की जा सकती है। सम्भवतः जयदुर्गा कीमूर्ति भी गुप्तकाल की बनी हुई है, क्योंकि वैद्यनाथ मंदिर के परिसर की अधिकांश मूर्तियाँ पालोंके समय की हैं और वर्तमान मूर्ति का संबंध पालकालीन मूर्तिकला से नहीं जुड़ता है, जिससे यहस्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि यह मूर्ति अत्यन्त ही प्राचीन है। दुर्गा की इस मूर्ति को देखनेसे यह ज्ञात होता है कि यह मूर्ति सौम्यता को प्रकट करती है। दुर्गा की मूर्ति यहाँ पर त्रिभंग कीमुद्रा में है, जो दुर्गा के खड़े होने के भाव को स्पष्ट करती है। जैसे शिव के रुद्र रूप में रौद्ररूप का समावेश है, वैसे ही जयदुर्गा की इस मूर्ति में भी भयावह मुखमंडल का संकेत है। दुर्गाकी उपासना के क्रम में यह मूर्ति अत्यन्त ही अनोखे ढंग की है जो प्राचीन भारतीय मूर्तिकला कोप्रदर्शित करती है। बंगाल के मंदिरों में जो दुर्गा की मूर्ति मिलती है वह दस भुजा की ही अधिकमिलती है। कहीं–कहीं उसमें देवी के कानों को अलंकार से युक्त प्रदर्शित किया गया है। बनारसके दुर्गा मंदिर में दुर्गा की जो मूर्ति है वह भी अपने ढंग की है और वहाँ भी छाग–बलि देने कीपरम्परा है। हिमाचल प्रदेश की चम्बा घाटी में भी ऐसी मूर्ति पायी जाती है। इस प्रकार दुर्गा हिन्दुओंमें एक प्रसिद्ध देवी हैं जिसे उमा और पार्वती के रूप में स्वीकार किया गया है। उसे दुर्गा भी कहागया है। जहाँ तक परशु का प्रश्न है, दुर्गा के हथियार परशु भी हैं। देवी पुराण में देवी के स्वरूपकी चर्चा है जिसकी उत्पत्ति की चर्चा

मार्कण्डेय पुराण में व्यापक रूप से है। दुर्गा के प्रिय पशुहैं– भैंसा, बकरी, भेड़ आदि। दुर्गा को इन वस्तुओं के भोग लगाने की परम्परा है।

हिन्दू धर्मशास्त्रों में दुर्गा की मूर्ति को प्रधान मूर्तियों में से एक माना गया है। यद्यपि दुर्गा की मूर्ति बनने की परम्परा को मध्यकालीन भारत की उपज माना जाता है। वर्तमान मूर्ति्त में जो कलात्मक अभिधान है वह अपने ढंग का है और जो पूर्व मध्यकालीन भारत के पहले का ही है।

पार्वती मंदिर में जयदुर्गा की मूर्ति स्थापित करने के पीछे तांत्रिक साधन पटल का प्रभाव है। यहाँ पर सती का ह्रदय गिरा है और इसे ह्रदयपीठ कहते हैं। इसलिए इस पीठ की देवी के रूप में बगला देवी का नाम आता है। साथ ही देवी भागवत एवं अन्य पुराणों में जयदुर्गा नाम की महाशक्ति को इस पीठ की अधिष्ठात्री देवी के रूप में मान्यता प्राप्त है। यही कारण है कि पार्वती मंदिर की ऊँची वेदिका पर जयदुर्गा और त्रिपुर सुन्दरी की मूर्तियां स्थापित हैं यद्यपि पार्वती मंदिर में स्थापित दोनों मूर्तियों को इस पीठ की उपासना से जोड़ा गया है। चूंकि जय दुर्गा इस पीठ की अधिष्ठात्री देवी है, इसलिए पार्वती मंदिर में जयदुर्गा की मूर्ति स्थापित की गयी है जिसे अम्बिका के रूप में भी जाना जाता है। दुर्गा की मूर्ति की प्राचीनता के संबंध में पूर्व वैदिककाल की विकसित संस्कृति को जोड़ा जाता है जिसे हड़प्पा या मोहनजोदड़ो की सभ्यता कहते हैं। वासम ने दुर्गा के आदि रूप को हड़प्पा के चित्र संख्या–2, प्लेट संख्या 13 से जोड़ा है जिससे यह स्पष्ट होता है कि वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में दुर्गा की मूर्ति अत्यन्त ही प्राचीन है और निश्चय ही यह गुप्तकाल के पूर्व की है।

जयदुर्गा की मूर्ति पार्वती मंदिर में वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग से संबंधित है। इसलिए आगम शास्त्रों में नवदुर्गा की चर्चा के क्रम में दुर्गा के अनेक रूपों की चर्चा है। दुर्गा की कथा भी महिषासुर वध के साथ जुड़ी हुई है, किन्तु दुर्गा की अधिकांश अष्टभुजी मूर्तियां ही मिलती हैं। बनारस में भारती कला भवन में ऐसी मूर्ति है।

दार्शनिक दृष्टि से त्रिपुर सुन्दरी और जयदुर्गा की मूर्तियों की स्थापना का उद्देश्य एक ही है और वह है वैद्यनाथ तीर्थ क्षेत्र की महत्ता को शास्त्रीय अभिधानों से समन्वित

करना। परमात्म शिव की यह शक्ति एक परा चिन्मयी एवं शिव संज्ञया कही गयी है। यह शक्ति एवं परमात्व शिव में अभेद संबंध है। अतः परमात्म शिव के सम्पूर्ण गुण शक्ति में भी स्वीकार किये जाते हैं। यही कारण है कि शक्ति को परमात्म शिव की समान धर्मिणी कहा गया है। इस तीर्थ क्षेत्र में वैद्यनाथ को भैरव स्वरूप में स्वीकार किया जाता है और पीठ की अधिष्ठात्री के रूप में जय दुर्गा और कहीं–कहीं दस महाविद्या के अन्तर्गत बगला के तत्व का प्रतिपादन मिलता है। इस मूर्ति की स्थापना के काल के संबंध में 18वीं शताब्दी के प्रथमार्द्ध को रखा गया है जो कि सटीक नहीं है। वस्तुतः यह मूर्ति पूर्व गुप्तकाल की बनी हुई है और भले ही यहाँ के प्रधान तीर्थपुरोहित रत्नपाणि ओझा ने इसे यहाँ स्थापित किया है, लेकिन यह मूर्ति्त इसी परिसर में अनादिकाल से विराजमान है।

वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग (वैद्यनाथ महालिंगम) वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग को महालिंग के रूप में सम्बोधित किया गया है। शिवरहस्य के अनुसार इस लिंग की स्थापना विष्णु ने की है। लिंग विग्रह का आकार 6 इंच लम्बा, 6 इंच चौड़ा और गोरी पृष्ठ का विस्तार 18 इंच लम्बा–चौड़ा है। यह वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग मंदिर के मध्य में केन्द्रित है। धार्मिक प्रसगों के अनुसार यह सप्तपाताल तक चला गया है और लंकेश रावण को इस लिंग को कैलाश से यहाँ तक लाने का बंद है। लिंग विग्रह सप्तपाताल का अतिक्रमण कर पृथ्वी के ऊपर आठ अंगुलमात्र स्थित है, जिसका दर्शन त्रिलोक में सभी कामानाओं को पूरा करनेवाला है। वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग की स्थापना के प्रसंग में इतनी चर्चाएँ धार्मिक ग्रन्थों के सन्दर्भ में विद्यमान हैं। साथ ही वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग विग्रह को दो कोस मात्र तक फैला बतलाया है। स्पष्ट है कि वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग के विग्रह के संबंध में वास्तु शास्त्रीय विमर्श का वर्णन नहीं मिलता है। डॉ० मित्रा ने लिखा कि वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग का विग्रह वर्तुलाकार पत्थर के समान है और गौरी पृष्ठ के मध्य में लिंग विग्रह वर्तमान है। गौरी पृष्ठ से जल प्रवाह जो उत्तर की ओर निकलता है और यह पाँच इंच के डायमीटर में फैला है और यह स्टोन ऑफ बेसाल्ट है। लगता है कि एक निश्चित स्थान में पूर्व से ही रखा गया है। यद्यपि इसका शीर्ष भाग क्षतिग्रस्त हो गया है तथापि इसकी सतह एक तरफ ऊँची और एक तरफ नीची है। धार्मिक मान्यताओं के अनुसार लिंग विग्रह जो ऊँचा–नीचा है वह रावण के द्वारा दमित होने के कारण है। कुछ लोग ऐसा कहते हैं कि बैजू भील ने ही इसे दबा दिया था।

जो भी हो, लिंग विग्रह अति प्राचीन है और इसका प्रस्तर वर्ण भी प्राचीन लिंग विग्रह की परम्परा को प्रतिभासित करता है। हमारे देश में तो हिमालय में मानसरोवर और कैलाश से लेकर कन्याकुमारी और रामेश्वरम तथा साथ ही अटक से लेकर कटक तक शिवालयों और शिवलिंगों की असंख्य संख्या है। शिवलिंग और शिवालय भारतीय संस्कारों में रक्त के अणु–अणु में भींगता चला गया है। इस बात के साक्ष्य आज भी मिलते हैं।

वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग के प्रसंग में यहाँ राम के आने की चर्चा है और शिवभक्त रावण की कथा भी । वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग के विग्रह की पौराणिकता त्रेता युग से मान्य है और ऐतिहासिक दृष्टि से पालों के वंशज लक्ष्मण सूर 9वीं शताब्दी के पूर्व इस लिंग की स्थापना की है। वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग का विग्रह अति प्राचीन है। बैजू नामक आदिवासी की लोककथा से भी इस लिंग विग्रह की कथा को जोड़ा जाता है, किन्तु इन संदर्भों का ऐतिहासिक पक्ष आज भी प्रमाणित नहीं हो पाया है। तांत्रिक साहित्य के विकास के युग से यह लिंग विग्रह प्रचलित और मान्य है, जिसकी पुष्टि श्रीचक्र और चक्रपूजा के परिप्रेक्ष्य से हो जाती है।

जहाँ तक वास्तुशास्त्र का प्रश्न है. मूर्तिकला की दृष्टि से पर्वत पूजा एवं शिला पूजा एवं परवर्ती युग में लिंग पूजा के विग्रहों के प्रकरण में मान्य वैद्यनाथधाम में इस लिंग विग्रह की स्थापना के पीछे भी उस अज्ञात काल को ही प्रमाण मानना पड़ेगा, जब किसी सभ्यता का विकास नहीं हुआ था। प्राणी आरण्यक दशा में अपना जीवन बिताते थे। अपनी उस दशा में उन्हें दुर्गम जीवन पहाड़ों एवं मनुसाद हिंस जीवों से निरंतर समाना करना पड़ता था। अपनी इस विवशावस्था में अन्य किसी का सहारा न प्राप्त कर किसी अज्ञात शक्ति के रूप में वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग की ओर प्रत्यया उनका मन खिंच गया और तभी से यह लिंग विग्रह पूजित और प्रतिष्ठित है। सम्पूर्ण संसार में लिंग–पूजा का यही कारण है। शैवों ने शिव के प्रमाणत्व के प्रति लिंग–पूजा को प्रतिष्ठा दी। द्वादश ज्योतिर्लिंगों की परम्परा में शिव के तेजस को द्वादश रूपों में प्रतिष्ठित किया गया है। वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग कामद ज्योतिर्लिंग है और सभी लिंगों के मध्य में इसकी उपासना विशेष रूप से की जाती है।

वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग विग्रह अति प्राचीन है। इस विग्रह को देखने से आज भी सहस्रों वर्ष पुरानी कला का मानो परिचय मिलता है। जब धातु और पत्थर से ही मूर्तिकला को सजाया–संवारा जाता था, उसी समय की यह लिंग मूर्ति जान पड़ती है। लगता है कि इस मूर्ति को पत्थर तक्षण करके ही बनाया गया है, क्योंकि पत्थर को तक्षण करके मूर्ति का निर्माण सिन्धु सभ्यता के अवशेषों में भी प्रचलित था। काले पत्थर की मूर्ति्त है यह, किन्तु इसके पत्थर में कुछ बेसाल्ट और कुछ लोग ग्रेनाइट की उपस्थिति मानते हैं। पूर्वांचल में जब मूर्तिकला का व्यापक विकास नहीं हुआ था, उसी समय की यह लिंग प्रतिमा है, क्योंकि यदि ऐसा नहीं होता तो यहाँ भी मूर्तिकला के अन्य रूप देखने को मिलते। यही कारण है कि डा0 मित्रा ने इस लिंग–विग्रह को पूर्णतः देशीय कला से युक्त बतलाया है, जिसे कला शास्त्र प्रणाली के आधार पर स्थानीय मूर्ति–कला की शैली भी कह सकते हैं। मित्रा ने यह भी स्वीकार किया है कि वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग अनादिकाल से ही है और मंदिर परवर्ती युग का है।

ज्योतिर्लिंग का दार्शनिक पक्ष अत्यन्त ही व्यापक है और यह लिंग–विग्रह तो केवल उसका प्रतीक है।

**वृषभ (बसाहा) :** शिव मंदिर के बाहर पूर्व द्वार के दक्षिण एवं वाम पार्श्व में वृषभ की चार मूर्तियाँ हैं, जिन्हें नन्दी के रूप में जाना जाता है। इन मूर्तियों में दो मूर्तियाँ तीन फीट और चार फीट चौड़ी हैं। शेष दो मूर्तियों में से एक संगमरमर की है और एक काले पत्थर की है। नन्दी की दो बड़ी मूर्ति्तयाँ पहले यहाँ नहीं थी। एक मूर्ति्त शैलजानन्द ओझा के समय (1889) में रखी गयी है और दूसरी मूर्ति वैद्यनाथ मंदिर के प्रधान पुरोहित भवप्रीतानन्द ओझा की मृत्यु के बाद भीतरखण्ड से लाकर रखी गयी है। संगमरमर वाली मूर्ति भी पहले भीतरखण्ड में ही थी। काले पत्थर की नन्दी की मूर्ति और बड़े पत्थर की नन्दी की मूर्ति यहाँ पर पहले से थी और उनकी आराधना शिव के वाहन नन्दी के रूप में यहाँ के धार्मिक इतिहास के परिवेश में मान्य है।

वृषभ मूर्तियों के अतिरिक्त कई नार्मद लिंग की मूर्तियाँ हैं, जो तीर्थ यात्रियों ने भक्ति से प्रभावित होकर यहाँ स्थापित कर दी हैं। इनकी ऐतिहासिकता की दृष्टि से कोई विशेष

उपयोगिता नहीं है, किन्तु वैद्यनाथ माहात्म्य में वैद्यनाथ के वाहन का ध्यान इस प्रकार लिखा गया है श्रृंग ही आयुध, श्वेत काया, चार चरण, सितखुर बड़ा ऊँचा, कंधा कृष्ण पक्ष, श्याम स्कन्ध वाले वृष को भजता हूँ। इस ध्यान में नन्दी के स्वरूप के संबंध में अद्‌भुत वर्णन है। एक ओर तो उनके शरीर को श्वेत कहा गया है और दूसरी ओर उनके स्कन्ध को श्याम वर्ण से युक्त माना गया है। जो भी हो, मूर्तिकला की दृष्टि से इन मूर्तियों का महत्व तो अवश्य है, किन्तु उन्हें बहुत प्राचीन मूर्तियों की कोटि में नहीं रखा जा सकता है। ये सभी मूर्तियाँ सौ–डेढ़ सौ वर्ष भीतर के स्थानीय पत्थरों से बनी हैं। केवल एक काले पत्थर की नन्दी की मूर्ति बाहर के किसी स्थान से लायी गयी है। वैद्यनाथ माहात्म्य में नन्दी के संबंध में कई प्रसंग आये हैं, जिनमें ऐसा वर्णन है कि रावण ने नन्दी को वैद्यनाथ मंदिर के निकट नन्दन पर्वत पर फेंक दिया था।

स्पष्ट है कि नन्दी की पूजा वृषभ के रूप में होती है, क्योंकि शिव का यह वाहन है। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो में भी वृषभ और मुहर पर पशुओं के बीच मानव पलथी मारकर बैठा दिखाया गया है जिससे यह प्रमाणित होता है कि उस जमाने में भी वृषभ की धार्मिक एवं सामाजिक मान्यता थी। वृषभ की आराधना और मान्यता वैदिक काल से ही चली आ रही है। इससे यह स्पष्ट होता है कि ज्योतिर्लिंग के मंदिर परिसर में नन्दी की मूर्ति को महत्वपूर्ण स्थान है। कलात्मक दृष्टि से हम इन मूर्तियों को प्राचीनकाल की वीथी में नहीं ले जाना चाहते हैं और पुरातात्विक दृष्टि से इनका महत्व नगण्य है, किन्तु इन मूर्तियों में देशीय कला के स्वरूप को देखा जा सकता है और वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग के परिसर में नन्दी की मूर्ति मूर्तिकला की दृष्टि से ऐतिहासिक मूल्य नहीं रखती है। ऐसे वैदिक साहित्य में वृषभ के ध्यान और स्तोत्र की चर्चा है। शिव को वृषांचल, वृषभ ध्वज की परम्परा के अन्दर महत्व दिया गया है। वृषभ की उपासना ज्योतिर्लिंगों के क्षेत्र में काम, क्रोध आदि षड्रिपुओं से शमन के लिए होती है। प्राचीन काल के भारत में मंदिर निर्माण के प्रसंग में भी नन्दी की चर्चा है और मंदिर के आकार को ही नदिन कहा गया है।

**राधाकृष्ण :** वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में भीतरखण्ड के नाम से ख्यात एक स्थलहै जिसे वैद्यनाथ मंदिर के प्रशासनिक भवन के रूप में जाना जाता है। यहाँ पर वैद्यनाथ मंदिर के प्रधान तीर्थ पुरोहित का निवास स्थान है। भीतरखण्ड के प्रशासनिक कक्ष में ही पश्चिम की

ओर एक कमरे में राधा–कृष्ण की अष्टधातु की बनी हुई मूर्तियाँ हैं। राधाकृष्ण दोनों ही पारम्परिक वक्र भंगिमा में खड़े हैं। मूर्ति में चमक है और आँख में रंग होने के कारण मुखमंडल पर सुन्दरता विराजमान हो जाती है। जहाँ तक मूर्तिकला का प्रश्न है, इन दोनों ही मूर्तियों में वैष्णव सम्प्रदाय की कलात्मक मूर्ति–शिल्प के स्वरूप का दर्शन होता है। कृष्ण हाथ में वंशी लिए हुए हैं और अपने अधर से उसको लगाये हुए हैं। राधा मौन खड़ी हैं। राधा के सम्पूर्ण अंग में वस्त्राभूषण सुसज्जित हैं और कृष्ण भी अपने नट–वेश में सुन्दर दीख रहे हैं।

वैद्यनाथ माहात्म्य में राधा–कृष्ण का ध्यान क्रमशः इस प्रकार है जिससे प्रस्तुत मूर्ति शिल्पके सौन्दर्य का बोध होता है। कृष्ण के वर्णन के क्रम में ऐसा लिखा है कि फूले नीले कमल की कांति के समान जिनका चन्द्रमुख है, मयूर पुच्छ सिर पर धारण किये हैं, श्रीवस्त्र का चिह्न और कौस्तुभ मणि भी उनके गले में है, ऐसे श्रीकृष्ण हैं जो पीताम्बर पहने हुए हैं और गोपियों के नेत्र रूपी कमल से जिनका शरीर पूजित है, गो समूहों से वे घिरे हुए हैं, उनके हाथ में सुन्दर वेणु है और शरीर में दिव्य भूषण विद्यमान है। इस प्रकार कृष्ण के स्वरूप का वर्णन किया गया है।

राधा जी का ध्यान इस प्रकार है श्रीकृष्ण के कंधे पर भुजा धारण किये, रास मंडल के मध्य में स्थित, गोपियों के मध्य में नृत्य और संगीत में तत्पर विमला के समान विशाल नेत्र पूर्ण चन्द्रमा के समान मुखवाली, सम्पूर्ण गहनों से संयुक्त, कोंधनी और नूपुर से शोभायमान, श्री राधा का ध्यान करता हूँ। भीरतखण्ड में स्थित राधा का विग्रह भी प्रस्तुत ध्यान के अनुरूप ही है।

मूर्तिकला की दृष्टि से इन दोनों ही मूर्तियों का महत्व अवश्य है, किन्तु ये दोनों मूर्तियाँ अति प्राचीन नहीं है और शैलजानन्द ओझा के समय से ही इन मूर्तिया की उपासना की परम्परा अधिक प्रचलित है। चूँकि वैद्यनाथधाम एक शावत क्षेत्र है, इसलिए राधिका की उपासना को महत्व देने के लिए यहाँ राधाकृष्ण की मूर्तियाँ स्थापित की गई हैं। राधोपनिषद् में राधा के महत्व का प्रतिपादन है। पुरातात्विक दृष्टि से इन मूर्तियों का कोई

विशेष महत्व नहीं है. किन्तु मूर्ति कला की दृष्टि से इन मूर्तियों की विशेषताएँ स्वीकार की जा सकती हैं।

**श्रीचक्र :** भीतरखण्ड में पश्चिम की ओर एक कक्ष में एक पत्थर की चतुष्कोणात्मकबेदिका है। इस वेदिका पर श्रीचक्र बना हुआ है। तांत्रिक मत के अनुसार श्रीविद्या की उपासना में औचक का महत्व है। इसे वेदों का मूल कोष भी कहा गया है। श्रीचक्र की उपासना यहाँ पर मंगल कामना के लिए की जाती है। इसमें काम–कला के मंत्र ऐं हीं क्लीं तीन बिन्दुओं के रूप में अंकित हैं और हृदयपीठ की यह अधिष्ठात्री त्रिपुर सुन्दरी देवी की उपासना की प्रतीक हैं। आदि शंकराचार्य ने सभी प्रमुख पीठ स्थानों में श्रीचक्र की उपासना को महत्व दिया है। इसलिए वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग के इस पीठ–स्थान में भी आदिकाल से ही श्रीचक्र की उपासना की परम्परा प्रचलित है। जिस प्रस्तर पर यह अंकित है वह स्थानीय पत्थरों का ही बना हुआ है। श्रीचक्र की यहाँ जो उपासना होती है उसमें प्रत्येक ऋतु में अलग–अलग भोग और अनुपान लगाये जाते हैं। प्राचीन काल में श्रीचक्र की आराधना ताम्बे के पात्र पर होती थी। रामदत्त ओझा के समय से इसे प्रस्तर शिला पर अंकित और सिद्ध पूजन करके यह परम्परा इस कक्ष में पूजा के रूप में प्रचलित हो गयी जो आजतक विद्यमान है।

**नीलचक्र :** वैद्यनाथ मंदिर के परिसर में संध्या मंदिर के ठीक सामने गोल एक पत्थर की शिला है जिसमें तक्षण करके चक्र खुदा हुआ है। इसे यहाँ आनेवाले तीर्थयात्री नीलचक्र के रूप में जानते हैं। इस चक्र का संबंध संध्या देवी के मंदिर से है जिसे कामाख्या का मंदिर भी कहा जाता है। कामाख्या देवी जब कामरूप को त्यागकर हृदयपीठ में आई थीं, उस समय वह इसो प्रिय नील पत्थर शिला पर निवास करती थीं। तभी से इसे नीलचक्र के रूप में कामाख्या का निवास स्थान समझकर पूजा जाता है और विपत्ति से त्राण देनेवाली इस पत्थर शिला की आराधना जारी है। मूर्तिकला की दृष्टि से यह शिलाखंड कोई विशेष महत्व नहीं रखता है, क्योंकि यह स्थानीय पत्थरों से ही निर्मित है और बहुत प्राचीन नहीं प्रतीत होता है, किन्तु प्रचलित धार्मिक परम्परा के आलोक में संध्या देवी की मूर्ति अति प्राचीन है और उस मूर्ति की कथा से इस प्रस्तरखंड के संबंध होने के कारण इसे मूर्तिकला की दृष्टि से यदि महत्व नहीं भी दिया जाय तो धार्मिक दृष्टि से वैद्यनाथ मंदिर के परिसर

में यह एक महत्वपूर्ण शिलाखंड है। इससे यहाँ प्रचलित तांत्रिक अभिचारों की परम्परा की भी पुष्टि होती है। इस चक्र के संबंध में इतिहासकारों ने कोई विशेष प्रकाश नहीं डाला है। फिर भी यह युगों–युगों से प्रचलित धार्मिक मान्यता की परम्परा को पुष्ट करता है।

वैद्यनाथ मंदिर के स्थापत्य एवं मंदिर निर्माण कला संबंधी स्वरूप के विभिन्न आयामों का अध्ययन प्रस्तुत करने के बाद यह बात स्पष्ट होती है कि संताल परगना के परवर्ती प्रदेश में स्थित देवघर का यह मंदिर इतिहासकारों की दृष्टि में पुरातत्व का विषय इसलिये नहीं बन पाया, क्योंकि इस मंदिर को पुराविद् परवर्ती युग की उपलब्धि मानते हैं। वैचारिक पृष्ठभूमि में जिज्ञासा का आधार दृढ़तर होता जाता है और आज नहीं तो कल इस मंदिर में संबंधित सभी प्रश्नों का उत्तर ढूंढना पड़ेगा।

वैद्यनाथ मंदिर की मूर्तियों के निर्माण में प्राचीन भारतीय स्थापत्य शिल्प को अक्षरशः आधार बनाया गया है। स्थापत्य के विभिन्न ग्रंथों में वर्णित मूर्ति एवं मंदिर निर्माण कला के आधार पर ही वैद्यनाथ मंदिर का निर्माण किया गया है। विशेषकर तांत्रिक साहित्य में वर्णित मूर्ति शिल्प के आधार पर यहाँ के देव देवियों की व्याख्या की जा सकती है। देव–देवियों के ये ध्यान पद्मपुराण पातालखंड, शिवरहस्य, कालिका पुराण, तंत्रसार, कुब्जिका तंत्र, ज्ञानार्णव तंत्र, महानिर्वाण तंत्र, रुद्रयामल तंत्र में वर्णित हैं। स्थापत्य के जिन ग्रंथों के आधार पर देव मंदिरों को महत्व दिया गया है, वे हैं विश्वकर्मा प्रकाश, मयमत्त, वास्तु सूत्र, वाशिष्ठ शिल्प शास्त्रम् आदि।[50]

अतः निष्कर्ष के रूप में विभिन्न ग्रंथों एवं स्तोत्रों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि यह मंदिर पूर्वांचल का एक नमूना है जो प्राचीन मिथिला की शैली से मिलता–जुलता है।

अध्याय–6

# साक्षात्कार का विषयगत विश्लेषण

बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर स्थानीय समुदाय तथा व्यापक हिंदू आबादी के लिए सामाजिक व सांस्कृतिक महत्व रखता है। यह मंदिर धार्मिक समारोहों, सांस्कृतिक कार्यक्रमों एवं सामुदायिक गतिविधियों के लिए केंद्र बिंदु के रूप में कार्य करता है, साथ ही यह भक्तों के बीच एकता की भावना और साझा पहचान को बढ़ावा देता है।

बैद्यनाथ धाम मंदिर स्थानीय अर्थव्यवस्था के विकास में भी एक आवश्यक भूमिका निभाता है। धार्मिक आयोजनों एवं त्योहारों के दौरान भक्तों की आगमन से क्षेत्र में व्यवसायों को काफी बढ़ावा मिलता है। एक सांस्कृतिक तथा धार्मिक स्थल के रूप में मंदिर का संरक्षण और प्रचार पूरे समुदाय के सामाजिक और आर्थिक कल्याण में विशेष योगदान देता है।'

**बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर की स्थापत्य कलाः सर्वेक्षण और समीक्षा**' नामक इस शोध को तैयार करने में देवघर जिला के बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर में आाने वाले लोगों की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक आदि की जानकारी आवश्यक होती है। अतः इस जानकारी के लिए दैव प्रतिदर्श विधि से200 लोगों के नाम, उम्र, जाति, लिंग, पेशा, धर्म, शिक्षा, परिवार के आय एवं उसके आकार, लोगों की गतिशीलता एवं स्वास्थ संबंधी संरचना का विश्लेषण करते हुए प्रश्नावली एवं साक्षात्कार विधि द्वारा जानकारी प्राप्त करने की कोशिश की गई है। संकलन के पश्चात् जो तथ्य उभरकर सामने आये हैं, उन्हें निम्नांकित सारणी एवं तथ्यगत् विशलेषण के आधार पर रखा जा रहा हैः–

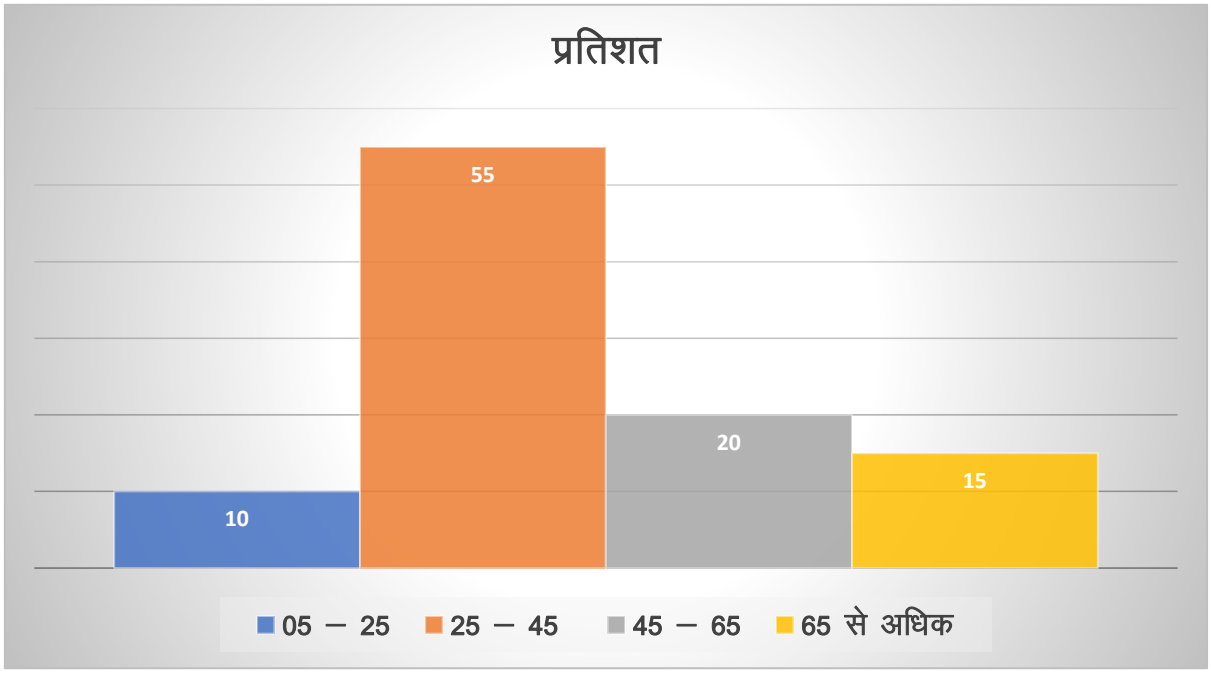
उत्तरदाताओं की पृष्ठभूमि–

**तालिका संख्या –05.01 आयु के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण**

| आयु वर्ग | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| 05 – 25 | 10 | 20 |
| 25 – 45 | 55 | 110 |
| 45 – 65 | 20 | 40 |
| 65 से अधिक | 15 | 30 |
| कुल | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या – 05.01 आयु के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण**



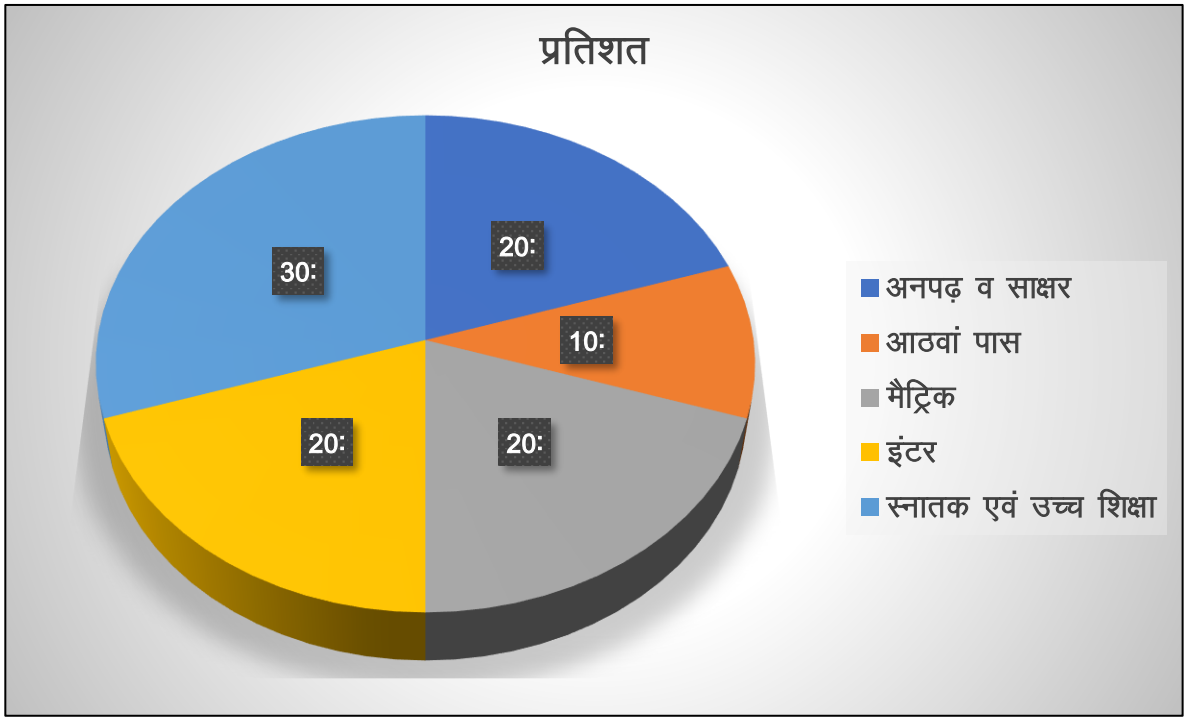

प्रस्तुत तालिका संख्या 5.1 एवं चित्र में पाया गया कि सर्वाधिक सूचना दाता की आयु 25 से 45 वर्ष है, जो कुल का 55 प्रतिशत है। 45 से 65 वर्ष के आयु वाले सूचनादाताओं का प्रतिशत 20 है, 65 वर्ष से अधिक आयु वाले सूचनादाताओं का प्रतिशत 15 है। सबसे कम अर्थात् 10 प्रतिशत 05 से 25 आयु वर्ग के सूचना दाताओं का है अर्थात् सूचनादाताओं में युवाओं की संख्या सर्वाधिक है।

**तालिका संख्या :05.02 शैक्षणिक स्थिति के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण**

| शैक्षणिक स्थिति | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| अनपढ़ व साक्षर | 20 | 40 |
| आठवां पास | 10 | 20 |
| मैट्रिक | 20 | 40 |
| इंटर | 20 | 40 |
| स्नातक एवं उच्च शिक्षा | 30 | 60 |
| कुल | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2021**

**चित्र संख्या–05.02 शैक्षणिक स्थिति के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण**




प्रस्तुत तालिका संख्या 5.2 एवं चित्र से स्पष्ट है कि सूचनादाताओं में सभी प्रकार के शैक्षणिक स्थिति वाले लोग शामिल हैं, जिसमें सर्वाधिक संख्या स्नातक एवं उच्च शिक्षा वाले का है स्नातक एवं उच्च शिक्षा वाले सूचनादाताओं का प्रतिशत 30 है। वहीं दूसरे स्थान पर इंटर,मैट्रिक पास एवं अनपढ़ व साक्षर तीनों सूचनादाता की संख्या 20.

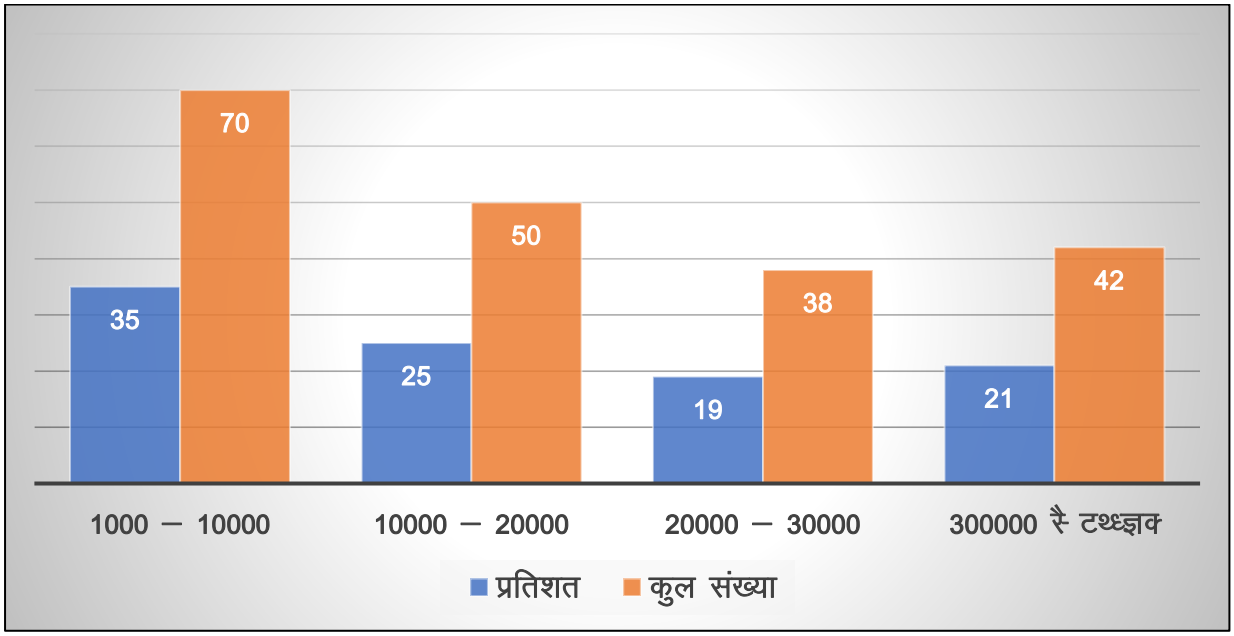
00–20.00 प्रतिशत है। सबसे कम संख्या वाले सूचनादाता जो मात्र 8वां पास है, जो कुल का 10 प्रतिशत है।

**तालिका संख्या:05.03 परिवार की मासिक आय के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण**

| परिवार की मासिक आय | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| 1000 – 10000 | 35 | 70 |
| 10000 – 20000 | 25 | 50 |
| 20000 – 30000 | 19 | 38 |
| 300000 से अधिक | 21 | 42 |
| कुल | 100 | 200 |

**स्रोतः प्राथमिक समंक, 2021**

**चित्र संख्या–05.03 परिवार की मासिक आय के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण**




प्रस्तुत तालिका संख्या 5.03 एवं चित्र से स्पष्ट है कि सूचनादाताओं में विभिन्न आय विभिन्न मासिक आय वर्ग के लोग शामिल हैं सर्वाधिक सूचनादाताओं की संख्या जो कुल का 35 प्रतिशत है, 1000 से 10000 मासिक आय वर्ग के लोग हैं। दूसरे स्थान पर 10000 से 20000 मासिक आयु वर्ग के लोग हैं जो कुल का 25 प्रतिशत है, तीसरे स्थान

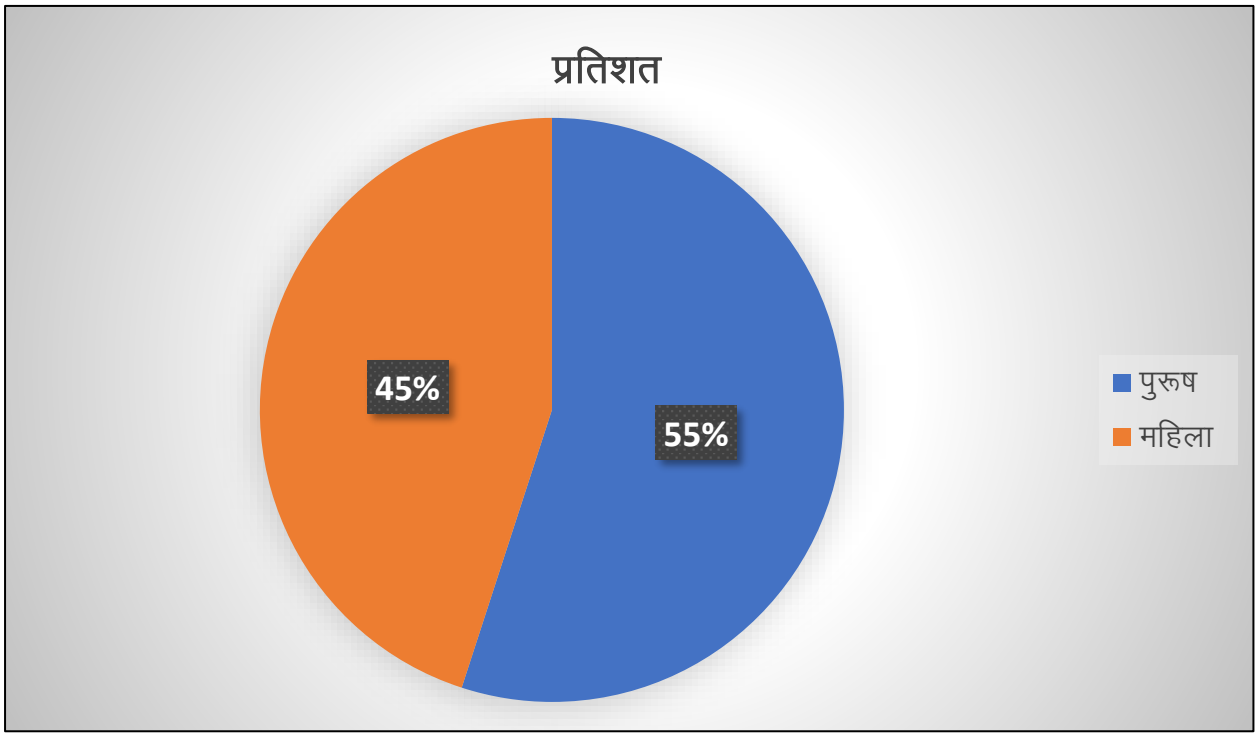
पर 30000 से अधिक मासिक आय वर्ग के लोग हैं जो 21 प्रतिशत हैं और सबसे कम सूचनादाताओं की संख्या 20000 से 30000 मासिक आय वर्ग के लोग हैं, जिसका प्रतिशत 19 है।

**तालिका संख्या :05.04 लिंग के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण**

| लिंग | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| **पुरूष** | 55 | 110 |
| **महिला** | 45 | 90 |
| **कुल** | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.04 लिंग के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण**



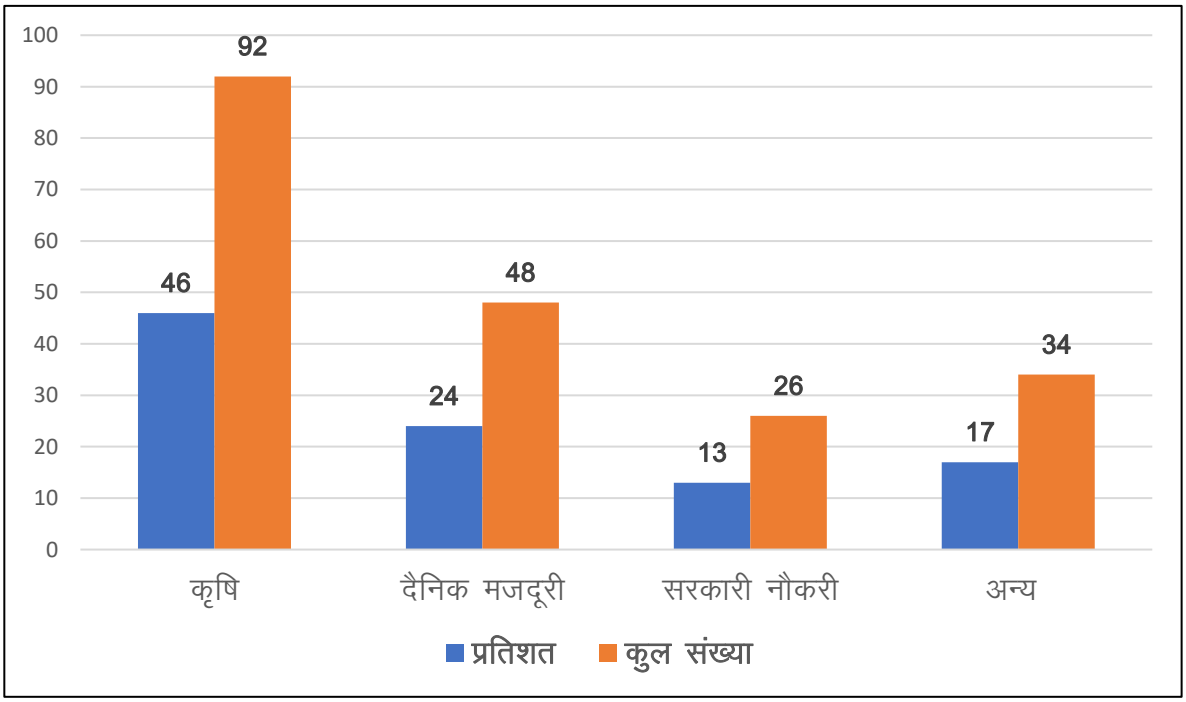
प्रस्तुत तालिका संख्या 5.4 जो सूचनादाता के लिंग से जुड़ा हुआ है इसमें सर्वाधिक 55 प्रतिशत पुरूष हैं और 45 प्रतिशत महिला हैं। सूचनादाताओं में थर्ड जेंडर की संख्या 0 है।

**तालिका संख्या : 05.05 पेशा के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण**

| परिवार का पेशा | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| **कृषि** | 46 | 92 |
| **दैनिक मजदूरी** | 24 | 48 |
| **सरकारी नौकरी** | 13 | 26 |
| **अन्य** | 17 | 34 |
| **कुल** | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.05 पेशा के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण**




प्रस्तुत तालिका संख्या 5.5 में सूचनादाता परिवार के पेशे को दिखाया गया है। इसमें 46 प्रतिशत सूचनादाता ऐसे हैं जो कृषि कार्य में लगे हैं, 24 प्रतिशत सूचनादाता ऐसे

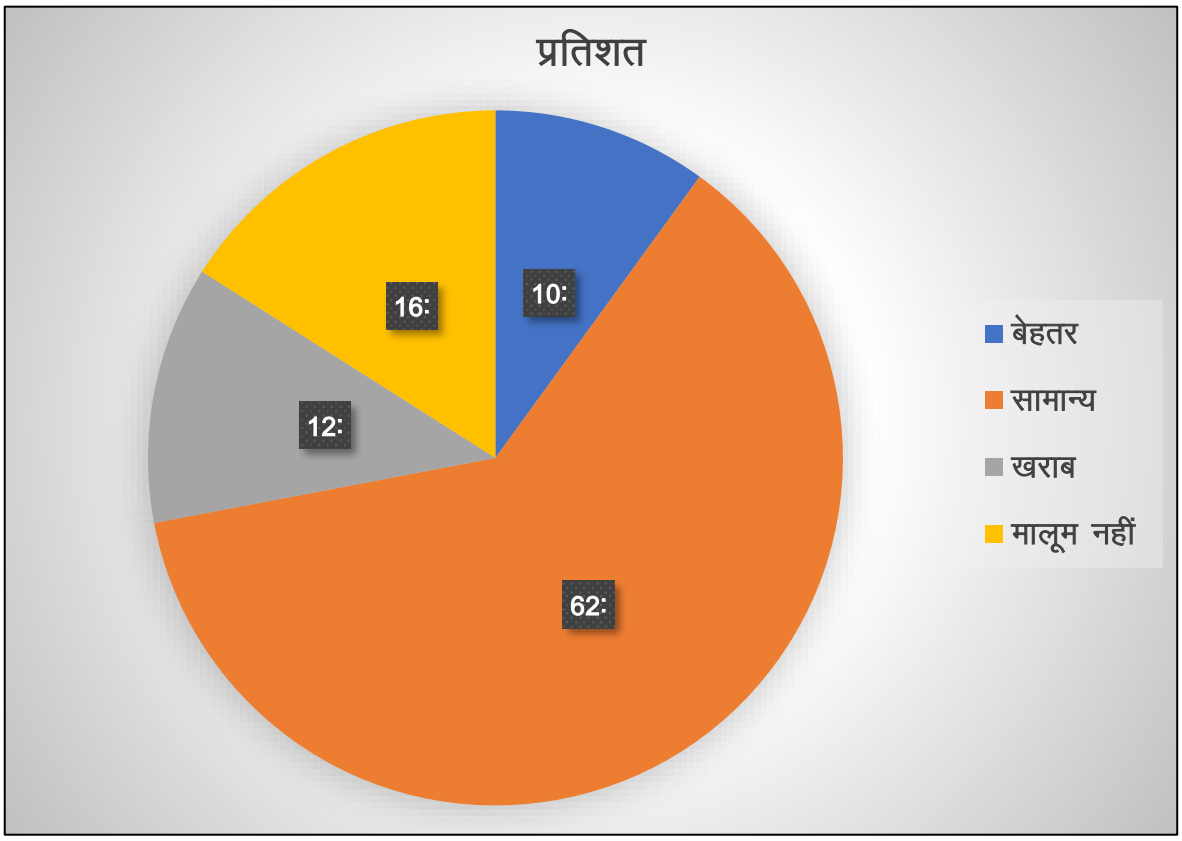
हैं जो दैनिक मजदूरी करते हैं, 13 प्रतिशत लोग ऐसे हैं जो सरकारी नौकरी करते हैं और 17 प्रतिशत लोग ऐसे हैं जो अन्य पेशा में लगे हुए हैं।

**तालिका संख्या :05.06 देवघर जिला में आधारभूत सुविधाओं (सड़क, बिजली, रेलवे, अस्पताल, शिक्षण संस्थान इत्यादि) की स्थिति**

| आधारभूत सुविधाओं की स्थिति | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| बेहतर | 10 | 20 |
| सामान्य | 62 | 124 |
| खराब | 12 | 24 |
| मालूम नहीं | 16 | 32 |
| कुल | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2021**

**चित्र संख्या–05.06 देवघर जिला में आधारभूत सुविधाओं (सड़क, बिजली, रेलवे, अस्पताल, शिक्षण संस्थान इत्यादि) की स्थिति**



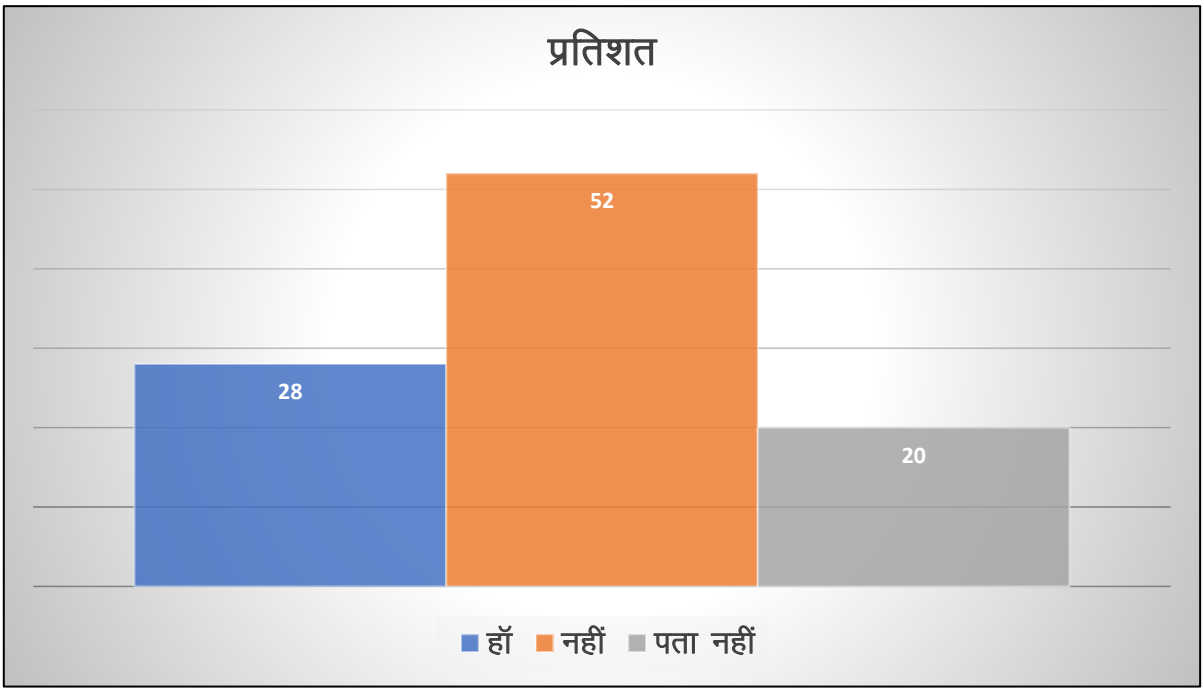
प्रस्तुत तालिका संख्या 5.6 एवं चित्र अध्ययन क्षेत्र अर्थात् देवघर जिला में आधारभूत सुविधाओं कि स्थिति को दर्शाता है। अधिकांश उत्तरदाता जो कुल का 62 प्रतिशत है, आधारभूत संरचना को सामान्य माना है 12 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता हैं जिन्होंने जिले के आधारभूत संरचना को खराब माना है। 10 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता हैं जिन्होंने जिले के आधारभूत संरचना को बेहतर माना है, वहीं 16 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता हैं जिन्हें आधारभूत संरचना मालूम ही नहीं है।

**तालिका संख्या :05.07 चिकित्सा की आपातकालीन व्यवस्था संबंधी जानकारी**

| चिकित्सा की आपातकालीन व्यवस्था | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| हॉ | 28 | 56 |
| नहीं | 52 | 104 |
| पता नहीं | 20 | 40 |
| कुल | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2021**

**चित्र संख्या–05.07 चिकित्सा की आपातकालीन व्यवस्था संबंधी जानकारी**



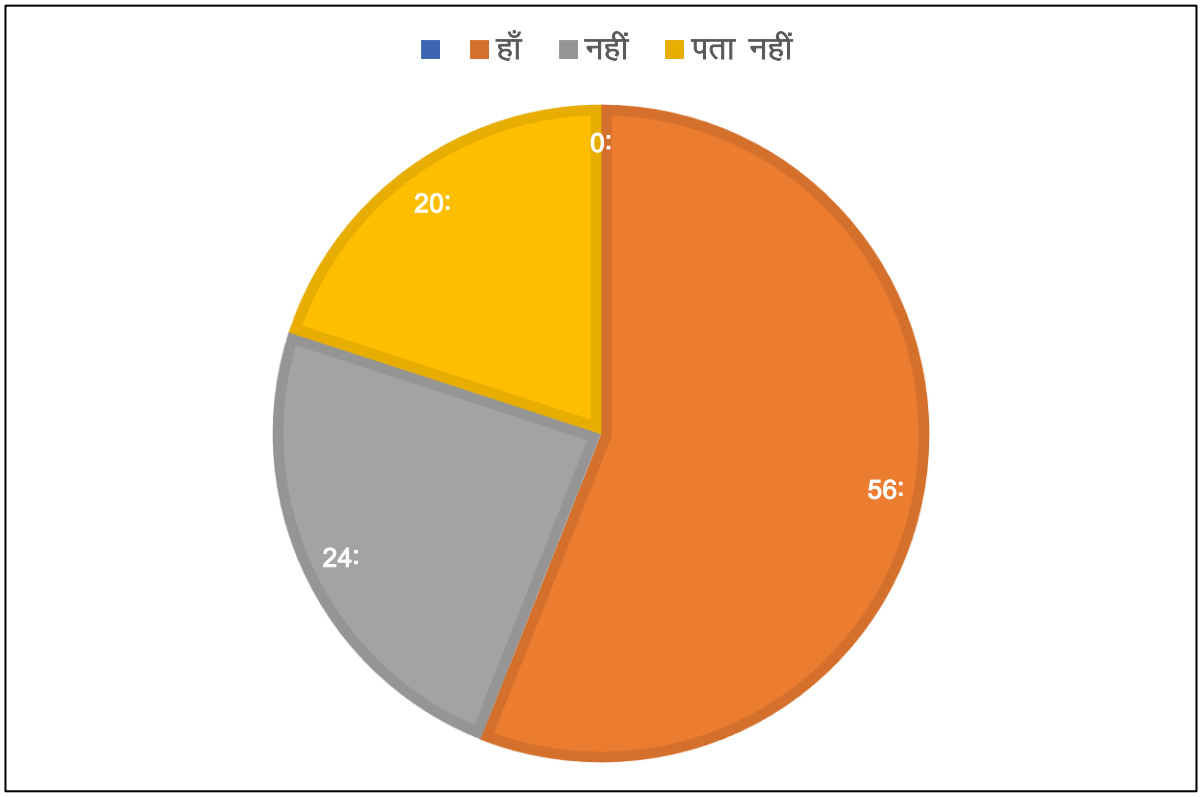
प्रस्तुत तालिका संख्या 05.07 एवं चित्र 'क्या चिकित्सा की आपातकालीन व्यवस्था पर्याप्त है' से संबंधित है। 52 प्रतिशत सूचनादाता ऐसे हैं जो आपातकालीन व्यवस्था को पर्याप्त नहीं मानते वहीं 28 प्रतिशत सूचनादाता चिकित्सा की आपातकालीन व्यवस्था को पर्याप्त मानते हैं। जबकि 20 प्रतिशत सूचनादाता ऐसे हैं जिन्हे इसके बारे में कुछ भी पता नहीं है।

**तालिका संख्या :05.08 स्वास्थ्य केंद्र पर मुफ्त में दवाईयां मिलने संबंधी जानकारी**

| मुफ्त दवाईयों की उपलब्धता | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| हाँ | 56 | 112 |
| नहीं | 24 | 48 |
| पता नहीं | 20 | 40 |
| कुल | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.08 स्वास्थ्य केंद्र पर मुफ्त में दवाईयां मिलने संबंधी जानकारी**



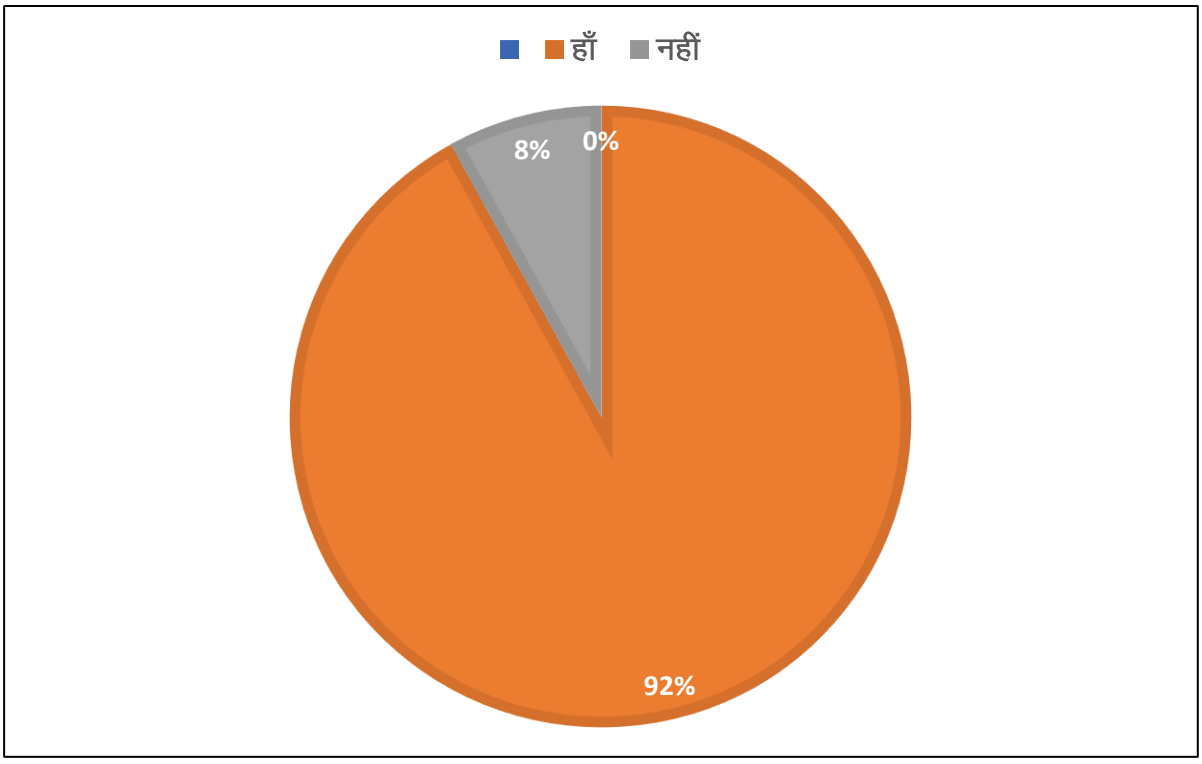
प्रस्तुत तालिका संख्या 05.08 एवं चित्र स्वास्थ्य केन्द्र पर मुफ्त दबाईयों की उपलब्धता से संबंधित है। 56 प्रतिशत सूचनादाता का जवाब सकारात्मक है वहीं 24 प्रतिशत सूचनादाताओं का जवाब नकारात्मक है जबकि 20 प्रतिशत सूचनादाता ऐसे हैं जिसको इसके बारे में कुछ भी पता नहीं है।

**तालिका संख्या :05.09 क्या आपलोग बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर के महत्व को जानते हैं ?**

| विवरण | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| हाँ | 92 | 184 |
| नहीं | 8 | 16 |
| कुल | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.09 प्रतिशत विवरण**



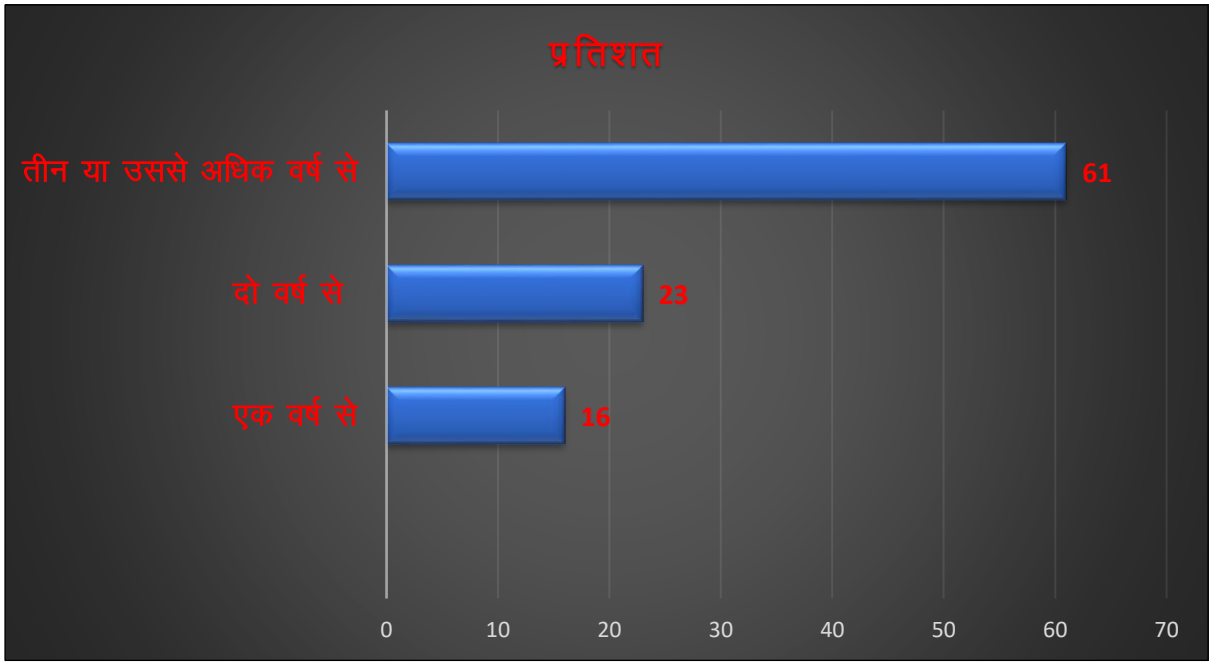
प्रस्तुत तालिका संख्या 5.9 एवं चित्र बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर के महत्व को जानने से संबंधित है इसमें 92 प्रतिशत उत्तरदाता का जवाब सकारात्मक है अर्थात वे बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर के महत्व को जानते हैं,जबकि 8 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता है जो बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर के महत्व को नहीं जानते हैं।

**तालिका संख्या :05.10 आपलोग बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर कब से आते हैं?**

| विवरण | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| एक वर्ष से | 16 | 32 |
| दो वर्ष से | 23 | 46 |
| तीन या उससे अधिक वर्ष से | 61 | 122 |
| कुल | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.10 प्रतिशत विवरण**



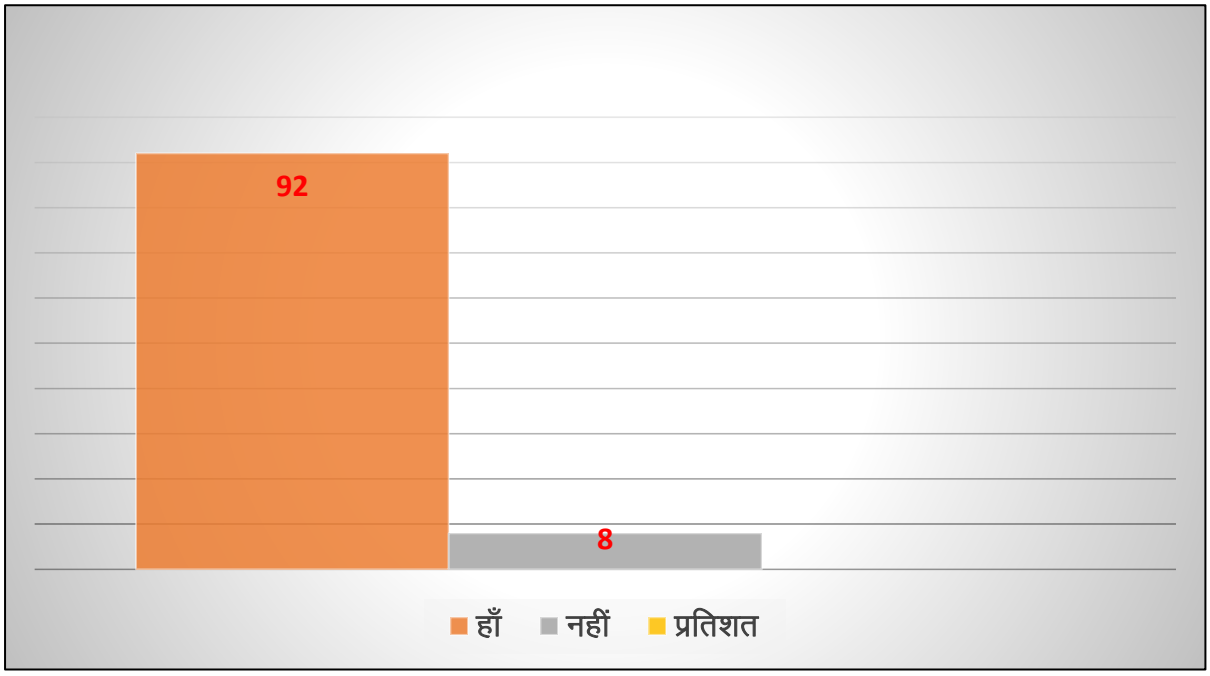
प्रस्तुत तालिका संख्या 5.10 एवं चित्र का संबंध उत्तरदाता के बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर में कब से आने से संबंधित है इसमें सर्वाधिक उत्तरदाता 61 प्रतिशत है जो बताते हैं कि वह तीन या उससे अधिक वर्षों से बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर आते हैं, 23 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता हैं जो बताते हैं कि वह 2 वर्षों से बाबा मंदिर आते हैं,वहीं मात्र 16 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता है जो बताते हैं कि वह विगत 1 वर्ष से बाबा मंदिर आ रहे हैं।

**तालिका संख्या :05.11 क्या आपलोगों का बैद्यनाथ धाम मंदिर पर विश्वास है?**

| विवरण | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| **हाँ** | 92 | 184 |
| **नहीं** | 8 | 16 |
| **कुल** | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.11 प्रतिशत विवरण**



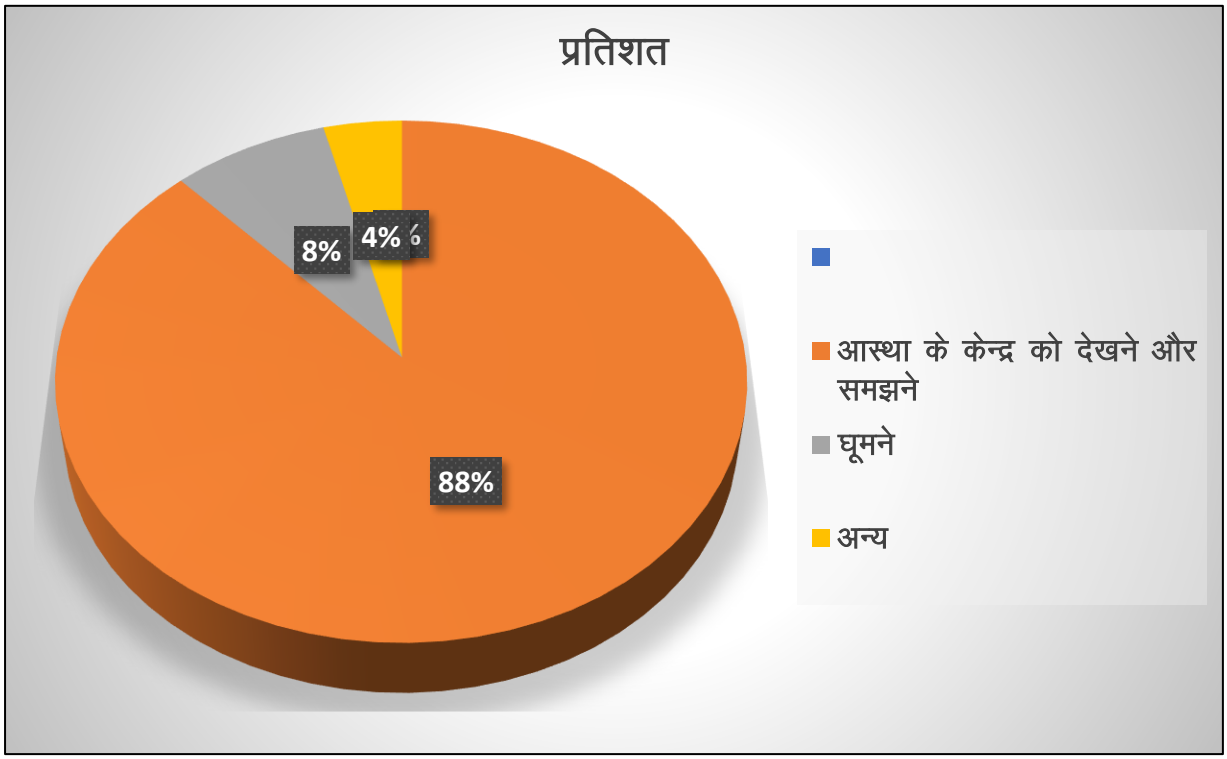
प्रस्तुत तालिका संख्या 5.11 एवं चित्र बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर पर उत्तरदाता के विश्वास से संबंधित है। इसमें सर्वाधिक उत्तरदाता का जवाब सकारात्मक है अर्थात 93 प्रतिशत उत्तरदाता का विश्वास बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर पर है और मात्र 8 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता है जिसका जवाब नकारात्मक रहा अर्थात वे मंदिर तो आते हैं, लेकिन उनका विश्वास बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर पर नहीं है बल्कि वह घूमने और मनोरंजन के ख्याल से आते हैं।

**तालिका संख्या :05.12 आपलोग मंदिर क्यों आते हैं?**

| विवरण | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| **आस्था के केन्द्र को देखने और समझने** | 88 | 176 |
| **घूमने** | 8 | 16 |
| **अन्य** | 4 | 8 |
| **कुल** | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.12 प्रतिशत विवरण**



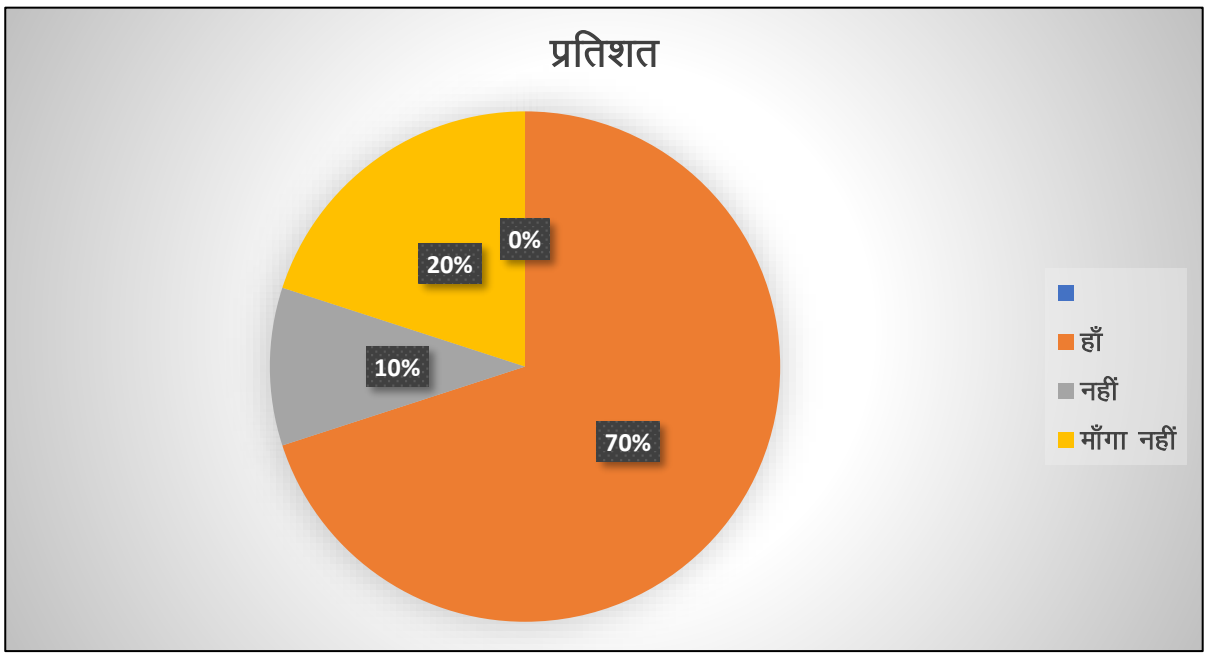
प्रस्तुत तालिका संख्या 5.12 का संबंध उत्तरदाता के मंदिर क्यों आते हैं इससे संबंधित है इस संबंध में सर्वाधिक उत्तरदाता अर्थात 88 प्रतिशत का मानना है कि वह आस्था के केंद्र को देखने और समझने आते हैं वहीं 8 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे हैं जिनका मानना है कि वह घूमने के ख्याल से बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर आते हैं जबकि चार प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता है जो बाबा बैद्यनाथ धाम आने का कारण व्यवसाय या अन्य उद्देश्य बताते हैं।

**तालिका संख्या: 05.13 क्या भगवान शिव की पूजा करने से आपलोगों की पूर्व में की गई कामना की पूर्ति हुई है?**

| विवरण | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| हाँ | 70 | 140 |
| नहीं | 10 | 20 |
| माँगा नहीं | 20 | 40 |
| कुल | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.13 प्रतिशत विवरण**



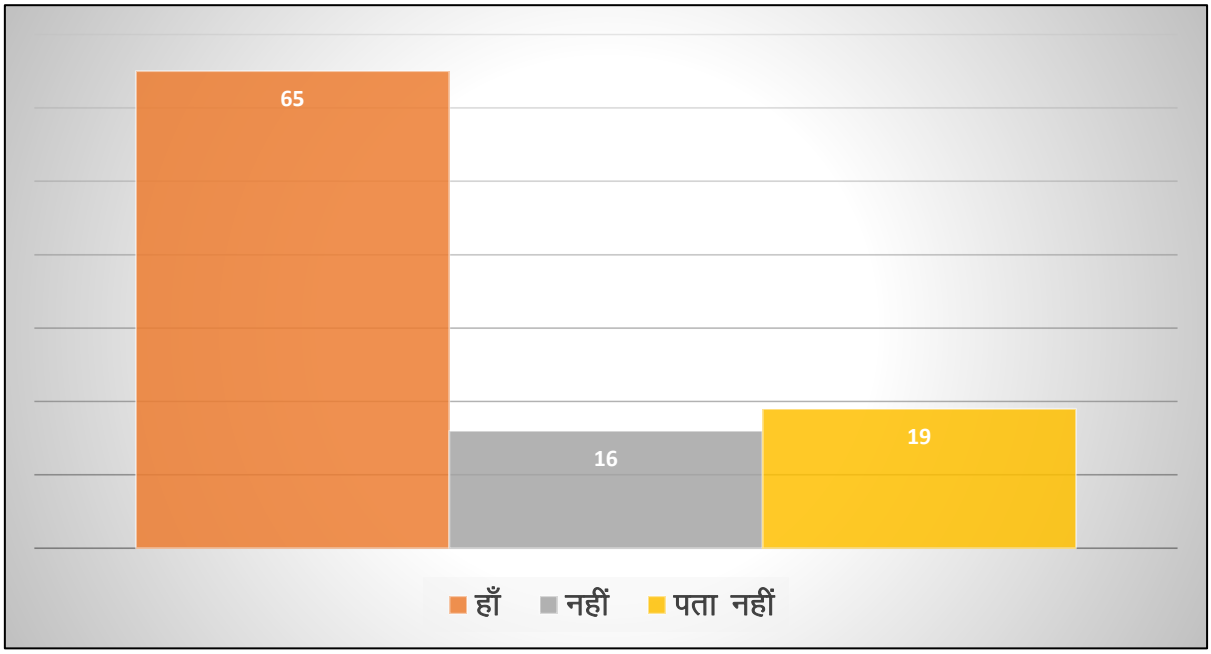
प्रस्तुत तालिका संख्या 5.13 एवं चित्र का संबंध उत्तरदाता के भगवान शिव की पूजा करने से उनकी मनोकामना से संबंधित है सर्वाधिक उत्तरदाता जो कुल का 70 प्रतिशत है, का मानना है कि भगवान शिव की पूजा करने से उनकी पूर्व में की गई कामना की पूर्ति हुई है। जबकि 10 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता है जिनका मानना है कि उनकी पूर्व में की गई कामना की पूर्ति नहीं हुई है और 20 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता है जिनका कहना है कि उन्होंने कोई कामना की ही नहीं है।

**तालिका संख्या: 05.14 क्या आपलोग सावन में कॉवर यात्रा के दौरान दी गई सुविधाओं से संतुष्ट हैं ?**

| विवरण | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| **हाँ** | 65 | 130 |
| **नहीं** | 16 | 32 |
| **पता नहीं** | 19 | 38 |
| **कुल** | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.14 प्रतिशत विवरण**



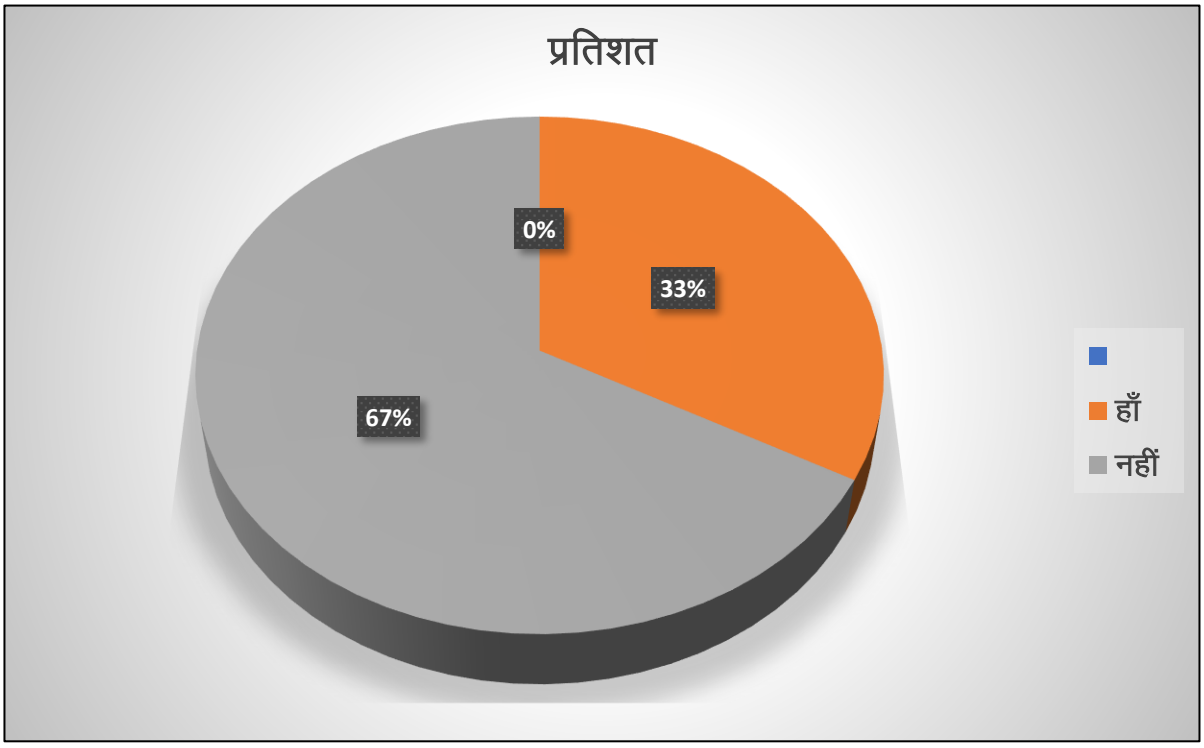
प्रस्तुत तालिका संख्या 5.14 एवं चित्र का संबंध श्रावण महीने में कांवड़ यात्रा के दौरान दी गई सुविधाओं के संतुष्टि से है। इसमें सर्वाधिक उत्तरदाता जो कुल का 65 प्रतिशत है, का जवाब सकारात्मक है अर्थात वे कांवड़ यात्रा के दौरान दी गई सुविधाओं से संतुष्ट हैं। वहीं 16 प्रतिशत उत्तरदाता मानते हैं कि यात्रा के दौरान दी गई सुविधा संतोषपूर्ण नहीं है। जबकि 19 प्रतिशत उत्तरदाता इन बातों से अनभीज्ञ है।

**तालिका संख्या: 05.15 क्या आपलोग मंदिर परिसर में प्रदत्त सुविधाओं से संतुष्ट हैं?**

| विवरण | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| **हाँ** | 33 | 66 |
| **नहीं** | 67 | 134 |
| **कुल** | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.15 प्रतिशत विवरण**



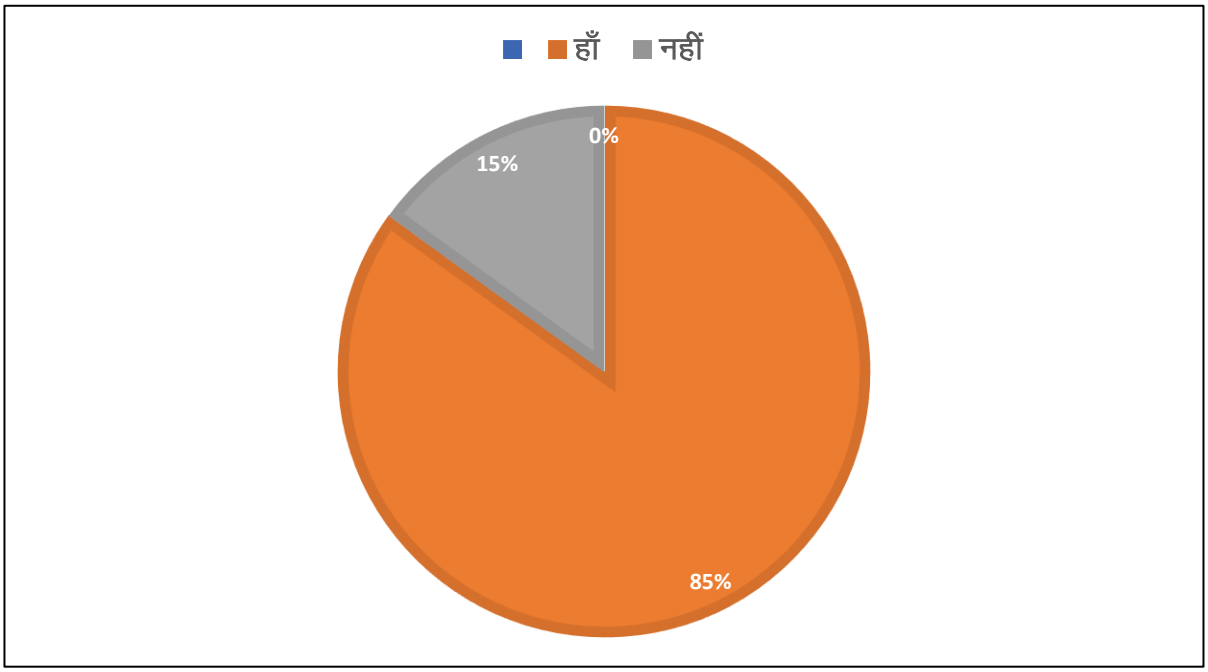
प्रस्तुत तालिका संख्या 5.15 एवं चित्र का संबंध मंदिर परिसर में प्रदत्त सुविधाओं से है। इसमें सर्वाधिक उत्तरदाता जो कुल का 67 प्रतिशत है का मानना है कि मंदिर परिसर में प्रदत्त सुविधाएं संतोषपूर्ण नहीं है। जबकि 33 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे हैं जिनका जवाब सकारात्मक है अर्थात वे मंदिर परिसर में प्रदत्त सुविधाओं से संतुष्ट हैं।

**तालिका संख्या: 05.16 क्या आपलोग मंदिर परिसर में पुलिस एवं प्रशासन के व्यवहार से संतुष्ट हैं?**

| विवरण | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| **हाँ** | 85 | 170 |
| **नहीं** | 15 | 30 |
| **कुल** | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.16 प्रतिशत विवरण**



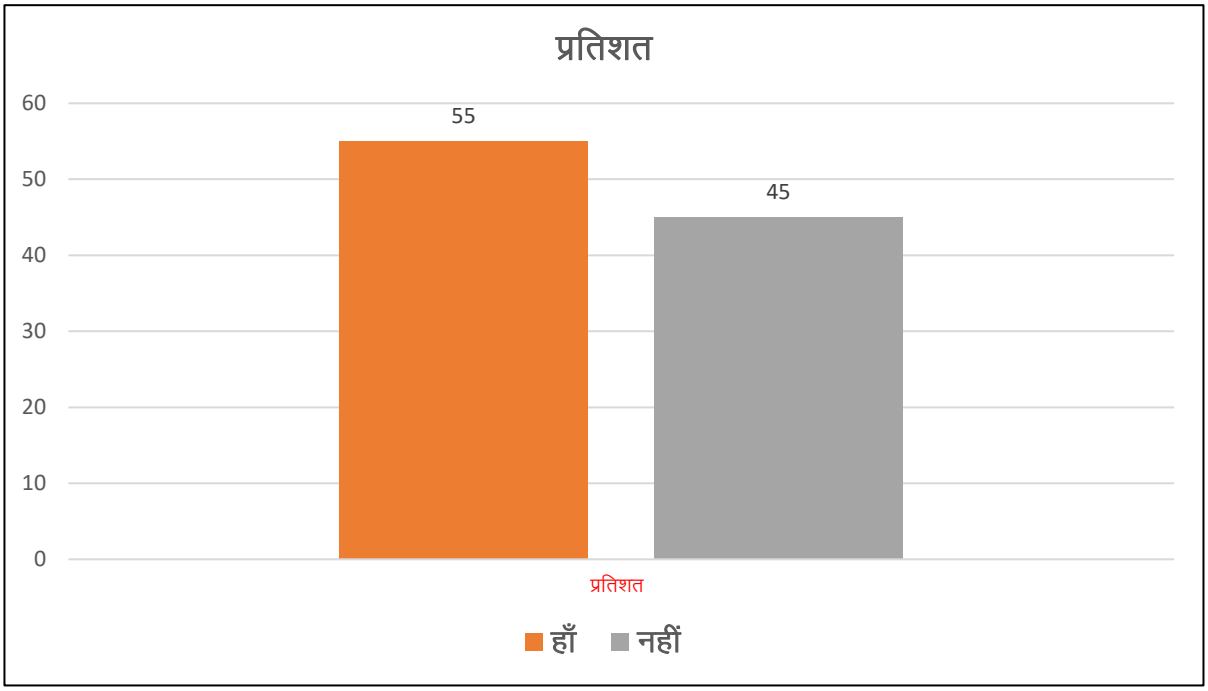
प्रस्तुत तालिका संख्या 5.16 एवं चित्र का संबंध मंदिर परिसर में पुलिस–प्रशासन के व्यवहार की संतुष्टि से है। जिसमें 85 प्रतिशत उत्तरदाता का जवाब सकारात्मक है अर्थात वे मंदिर परिसर में पुलिस एवं प्रशासन के व्यवहार से संतुष्ट है, वहीं 15 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता है जिनका जवाब इस संबंध में नकारात्मक रहा है अर्थात वे इससे संतुष्ट नहीं है।

**तालिका संख्या: 05.17 क्या आपलोग मंदिर परिसर में पंडा/पुजारी के व्यवहार से संतुष्ट हैं ?**

| विवरण | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| **हाँ** | 55 | 110 |
| **नहीं** | 45 | 90 |
| **कुल** | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.17 प्रतिशत विवरण**



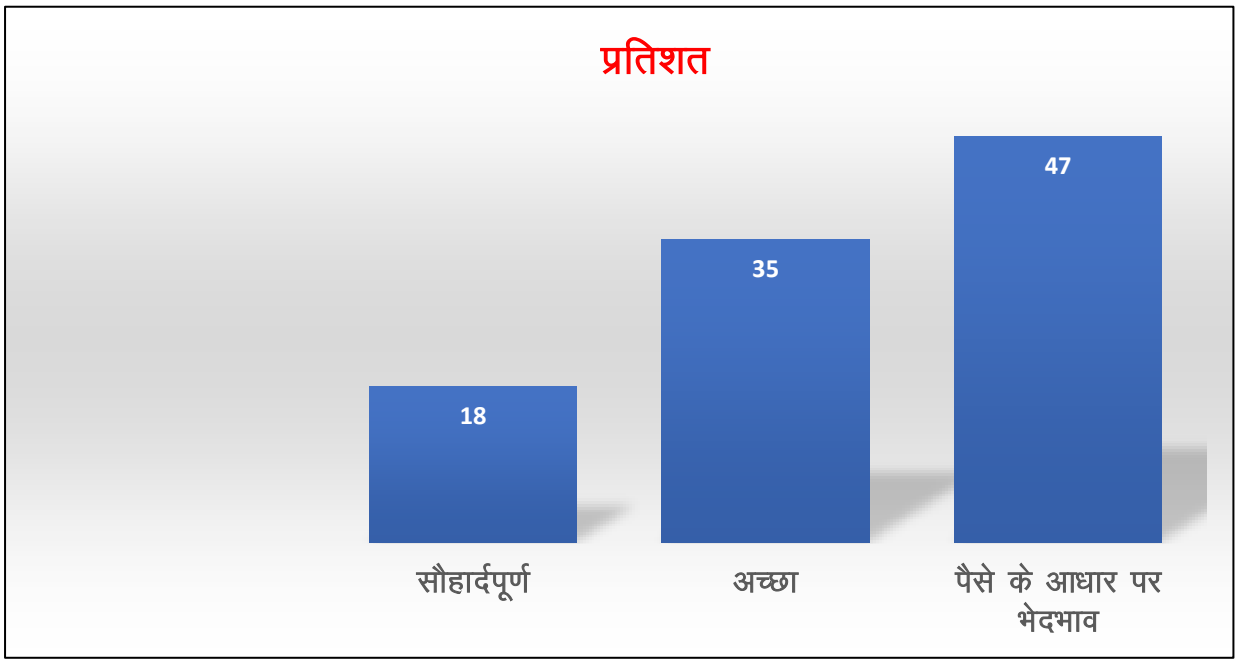
प्रस्तुत तालिका संख्या 5.17 एवं चित्र का संबंध मंदिर परिसर में पांडा एवं पुजारी के व्यवहार से है इसमें सर्वाधिक 55 प्रतिशत उतर जाता है ऐसे हैं जो नकारात्मक जवाब देते हैं अर्थात वह मंदिर परिसर में पांडा और पुजारी के व्यवहार से संतुष्ट नहीं है जबकि 45 प्रतिशत ऐसे भक्त अर्थात उत्तरदाता हैं जो पांडा और पुजारी के व्यवहार से संतुष्ट हैं।

**तालिका संख्या:05.18 मंदिर परिसर में सामाजिक वातावरण से संबंधित विवरण**

| विवरण | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| **सौहार्दपूर्ण** | 18 | 36 |
| **अच्छा** | 35 | 70 |
| **पैसे के आधार पर भेदभाव** | 47 | 94 |
| **कुल** | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.18 प्रतिशत विवरण**



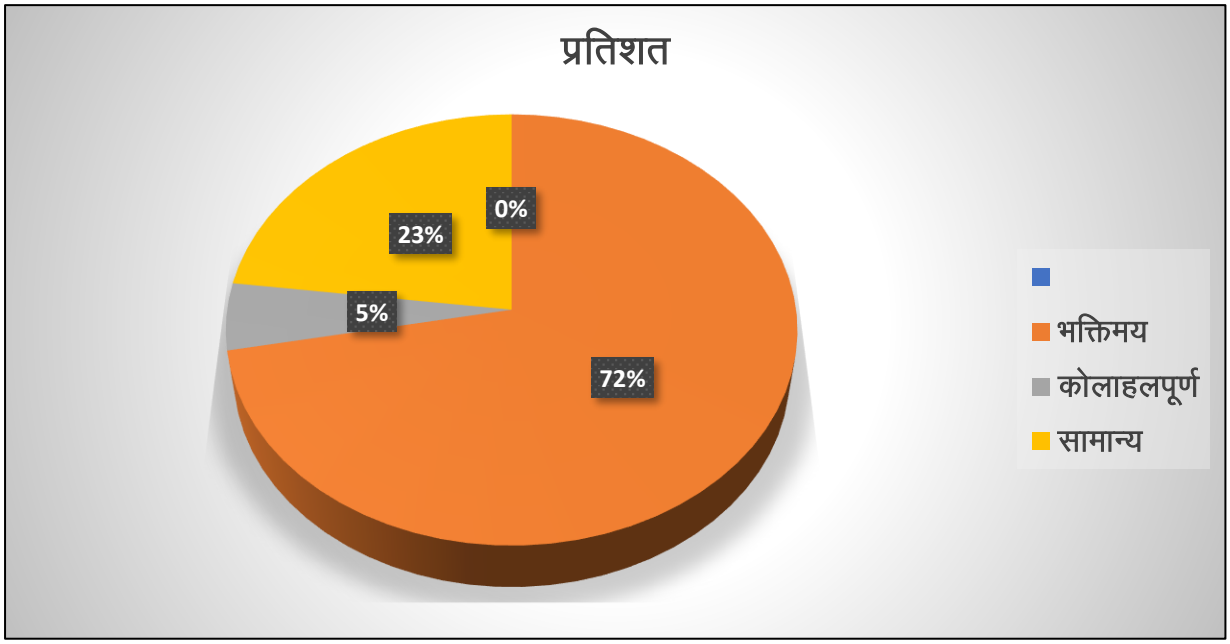
प्रस्तुत तालिका संख्या 5.18 एवं चित्र का संबंध मंदिर परिसर में सामाजिक वातावरण से है। इसमें सर्वाधिक उत्तरदाता अर्थात 47 प्रतिशत उत्तरदाता का मानना है कि मंदिर परिसर में पैसे के आधार पर भेदभाव होता है। जबकि 35 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता है जिनका मानना है कि मंदिर परिसर में सामाजिक वातावरण अच्छा है और वहीं 18 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता है जो मानते हैं कि मंदिर परिसर में सामाजिक वातावरण सौहार्दपूर्ण है।

**तालिका संख्या:05.19 मंदिर परिसर का सांस्कृतिक वातावरण से संबंधित विवरण**

| विवरण | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| **भक्तिमय** | 72 | 144 |
| **कोलाहलपूर्ण** | 5 | 10 |
| **सामान्य** | 23 | 46 |
| **कुल** | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.19 प्रतिशत विवरण**



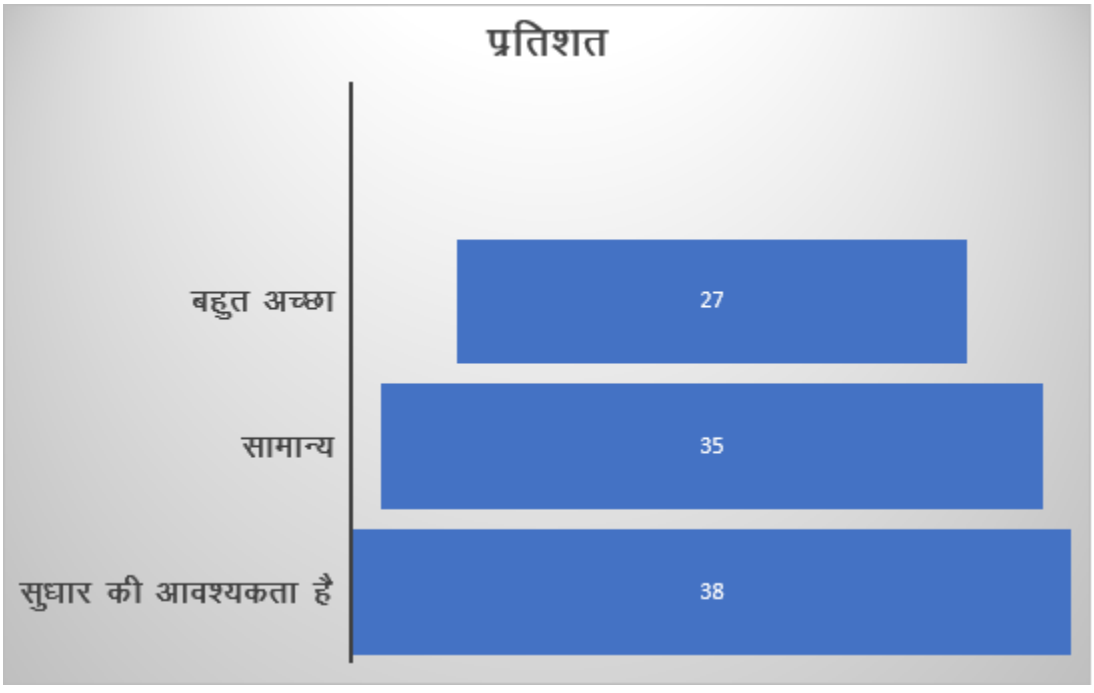
प्रस्तुत तालिका संख्या 5.19 एवं चित्र का संबंध मंदिर परिसर के सांस्कृतिक वातावरण से है, जिसमें सर्वाधिक उत्तरदाता जो कुल का 72 प्रतिशत है, का मानना है कि परिसर का सांस्कृतिक वातावरण भक्तिमय है। जबकि 23 प्रतिशत उत्तरदाता का मानना है कि मंदिर परिसर का सांस्कृतिक वातावरण सामान्य है। वही 5 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता है जिनका मानना है कि मंदिर परिसर में सांस्कृतिक वातावरण कोलाहल पूर्ण है।

**तालिका संख्या:05.20 मंदिर के अलंकरण एवं साज सजा से संबंधित विवरण**

| विवरण | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| **बहुत अच्छा** | 27 | 54 |
| **सामान्य** | 35 | 70 |
| **सुधार की आवश्यकता है** | 38 | 76 |
| **कुल** | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.20 प्रतिशत विवरण**



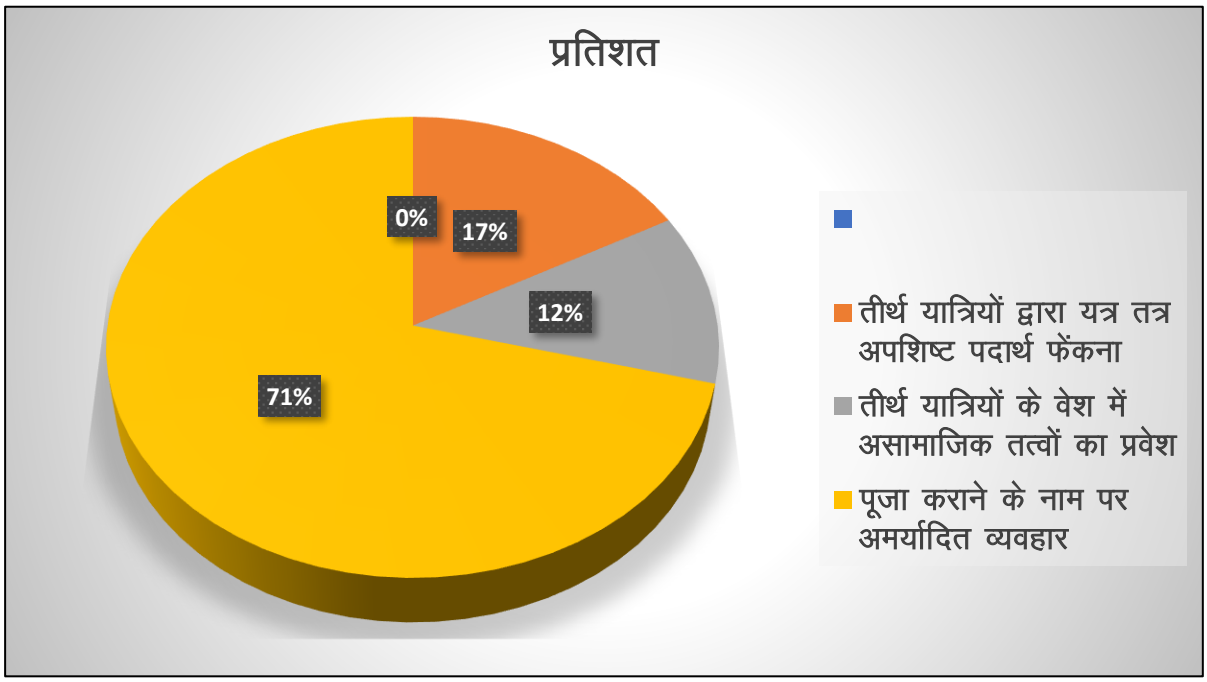
प्रस्तुत तालिका संख्या 5.20 एवं चित्र का संबंध मंदिर के अलंकरण एवं साज सज्जा से है। इसमें 38 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता है जिनका मानना है कि मंदिर के अलंकरण एवं साज सज्जा में सुधार की आवश्यकता है। जबकि 35 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता है जिनका मानना है की अलंकरण एवं साज सज्जा सामान्य है और 27 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता है जो बताते हैं कि मंदिर के अलंकरण एवं साज सज्जा बहुत अच्छा है।

**तालिका संख्या:05.21 मंदिर परिसर को प्रभावित करने वाले सामाजिक कारक**

| विवरण | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| तीर्थ यात्रियों द्वारा यत्र तत्रअपशिष्ट पदार्थ फेंकना | 17 | 34 |
| तीर्थ यात्रियों के वेश में असामाजिक तत्वों का प्रवेश | 12 | 24 |
| पूजा कराने के नाम पर अमर्यादित व्यवहार | 71 | 142 |
| कुल | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.21 प्रतिशत विवरण**



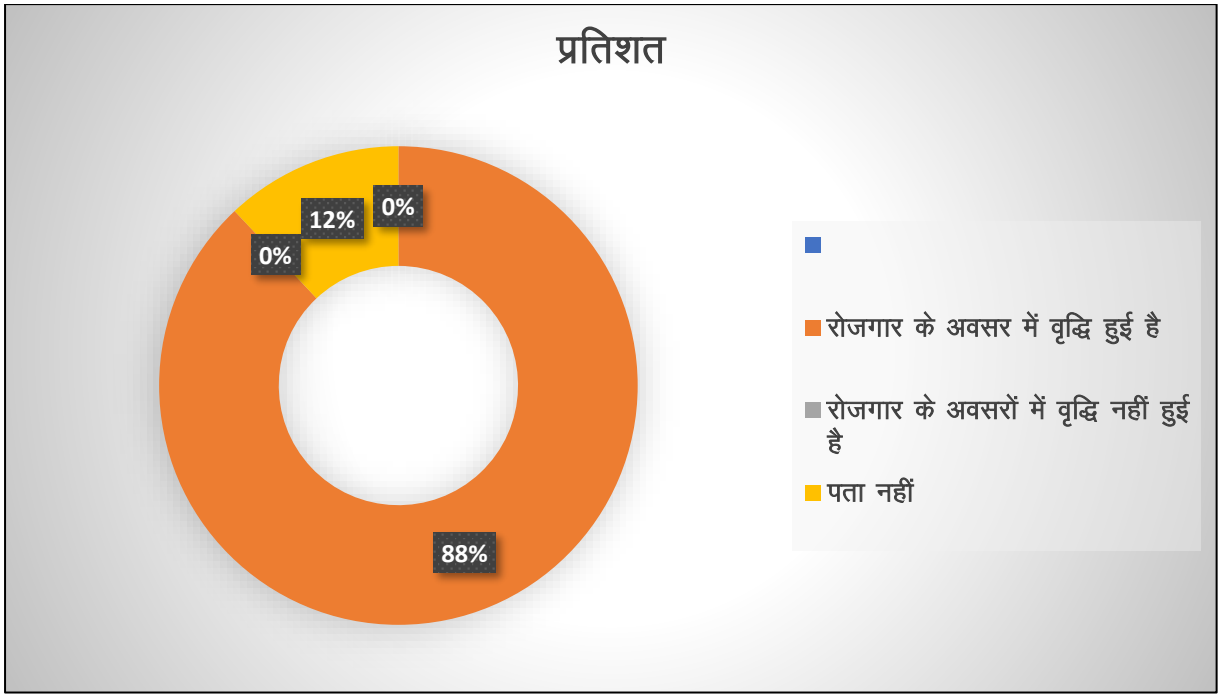
प्रस्तुत तालिका संख्या 5.21 एवं चित्र का संबंध मंदिर परिसर को प्रभावित करने वाले सामाजिक कारकों से है। इसमें सर्वाधिक उत्तरदाता अर्थात 71 प्रतिशत उत्तरदाता मानते हैं कि मंदिर परिसर में पूजा कराने के नाम पर और मर्यादित व्यवहार होता है। 17 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता है जो मानते हैं कि तीर्थ यात्रियों द्वारा यात्रा अपशिष्ट पदार्थ फेंकने से मंदिर परिसर पर बुरा प्रभाव पड़ता है जबकि 12 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता है जो बताते हैं की तीर्थ यात्रियों के वेश में असामाजिक तत्वों का प्रवेश मंदिर परिसर के वातावरण को खराब करता है।

**तालिका संख्या:05.22 मंदिर से रोजगार के अवसरों पर पड़ने वाले प्रभावों से संबंधित विवरण**

| विवरण | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| रोजगार के अवसर में वृद्धि हुई है | 88 | 176 |
| रोजगार के अवसरों में वृद्धि नहीं हुई है | 0 | 0 |
| पता नहीं | 12 | 24 |
| कुल | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.22 प्रतिशत विवरण**



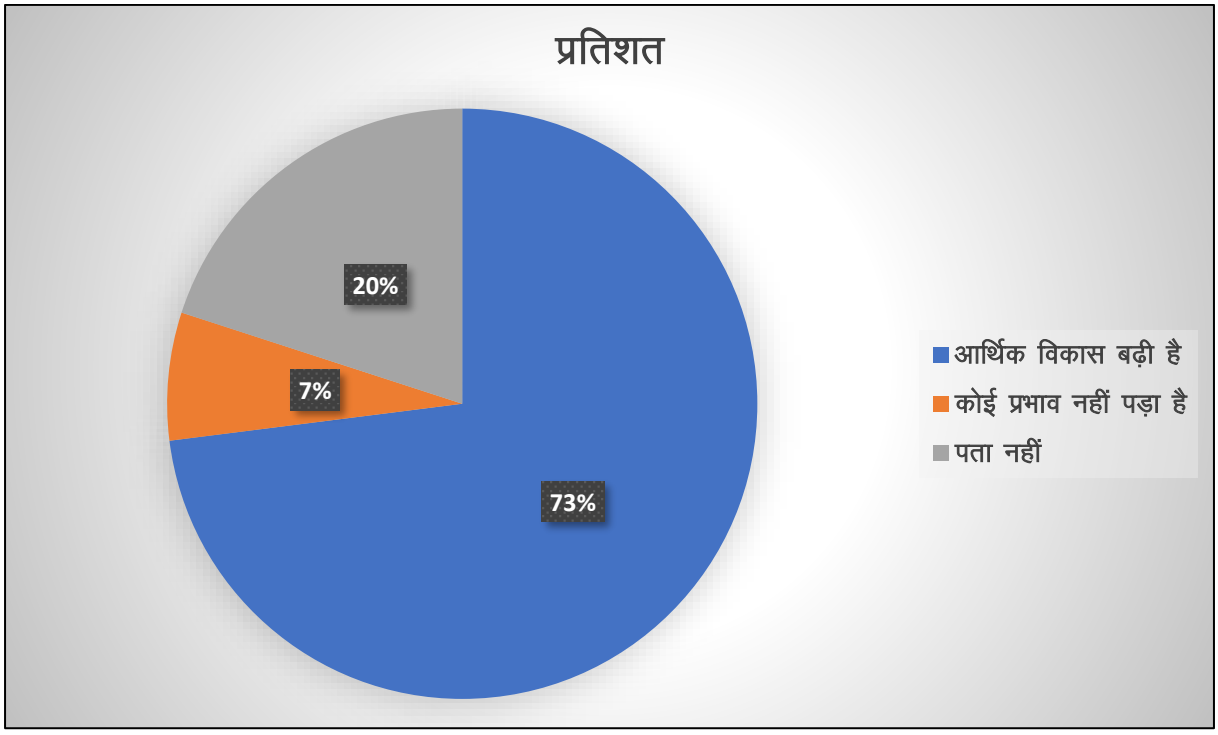
प्रस्तुत तालिका संख्या 5. 22 एवं चित्र का संबंध मंदिर से रोजगार के अवसरों पर पड़ने वाले प्रभावों से है। इसमें 88 प्रतिशत उत्तरदाता जो सबसे अधिक है, का मानना है कि मंदिर से रोजगार के अवसरों में काफी वृद्धि हुई है। जबकि 12 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता है जिन्हें इसके बारे में कुछ भी पता नहीं है।

**तालिका संख्या:05.23 मंदिर का आर्थिक विकास पर पड़ने वाले प्रभाव**

| मंदिर का आर्थिक विकास पर प्रभाव | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| आर्थिक विकास बढ़ी है | 73 | 146 |
| कोई प्रभाव नहीं पड़ा है | 7 | 14 |
| पता नहीं | 20 | 40 |
| कुल | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.23 मंदिर का आर्थिक विकास पर पड़ने वाले प्रभाव**



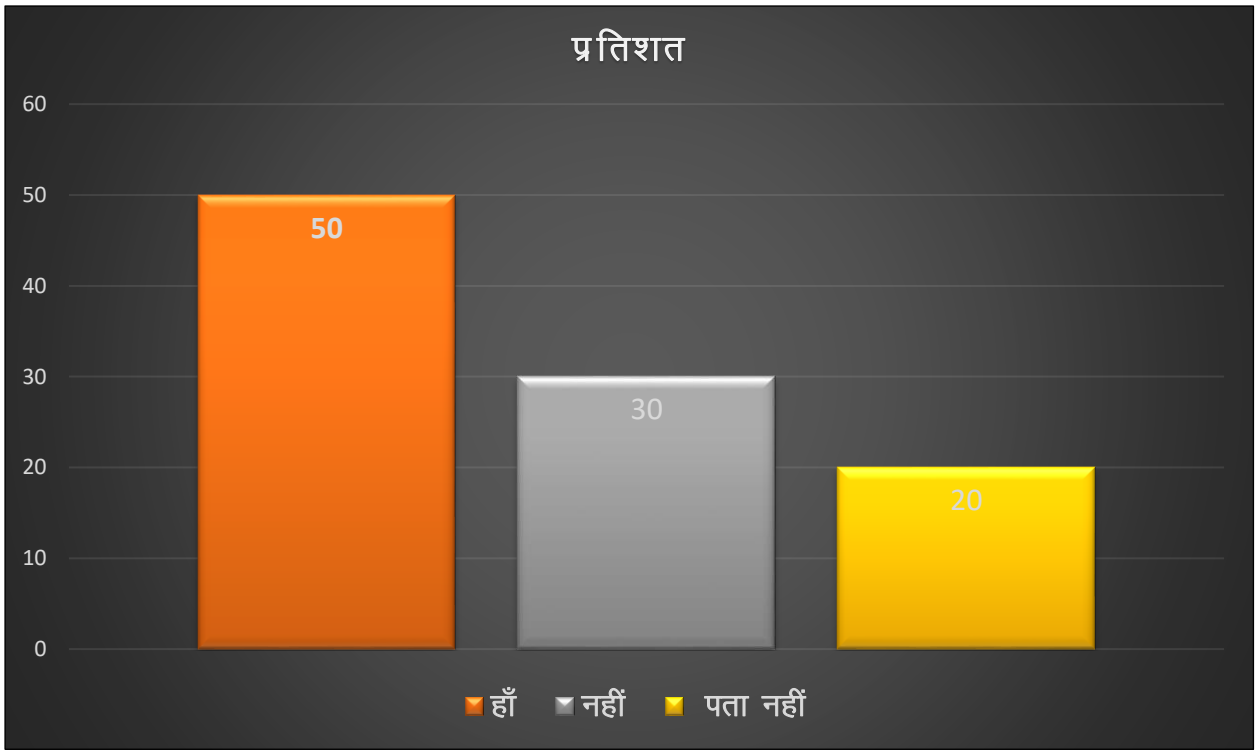
प्रस्तुत तालिका संख्या 5.23 एवं चित्र का संबंध मंदिर का आर्थिक विकास पर पड़ने वाले प्रभाव से है। इसमें सर्वाधिक उत्तरदाता जो कुल का 73 प्रतिशत है का मानना है कि मंदिर का आर्थिक विकास पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है अर्थात आर्थिक विकास में वृद्धि हुई है । वही 7 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता है जो नकारात्मक जवाब देते हैं और 20 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता है जिनको इसके बारे में कुछ भी पता नहीं है।

**तालिका संख्या: 05.24 क्या आपलोग महिला सुरक्षा से संतुष्ट हैं?**

| विवरण | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| **हाँ** | 50 | 100 |
| **नहीं** | 30 | 60 |
| **पता नहीं** | 20 | 40 |
| **कुल** | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.24 प्रतिशत विवरण**



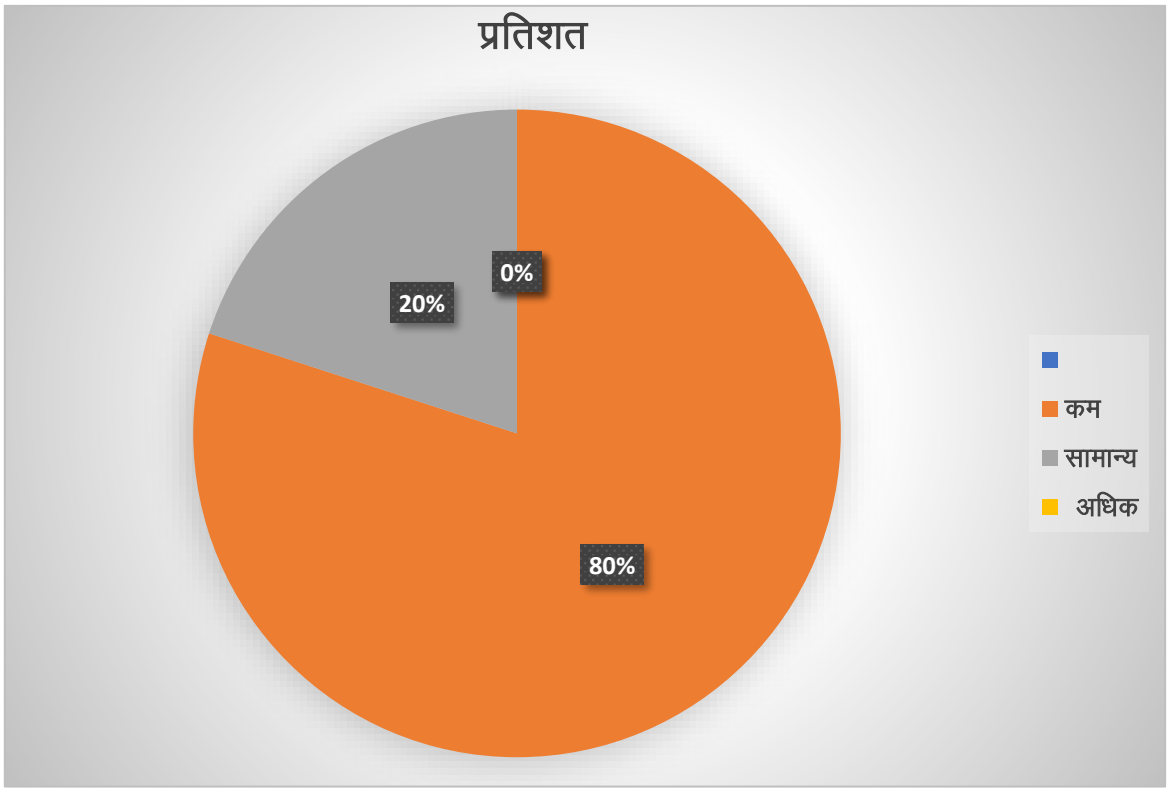
प्रस्तुत तालिका संख्या 5.24 एवं चित्र का संबंध महिला सुरक्षा से है। इस संबंध में 50 प्रतिशत उत्तरदाता का सकारात्मक जवाब है जबकि 30 प्रतिशत उत्तरदाता का नकारात्मक। वही 20 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता हैं जिनको इसके बारे में कुछ भी मालूम नहीं।

**तालिका संख्या: 05.25 शादी, मुंडन जैसे शुभ कार्यों पर बाबा मंदिर में कम खर्च होता है, इसपर आपलोगों का क्या विचार है?**

| विवरण | प्रतिशत | कुल संख्या |
|---|---|---|
| कम | 80 | 160 |
| सामान्य | 20 | 40 |
| अधिक | 0 | 0 |
| कुल | 100 | 200 |

**स्रोत : प्राथमिक समंक, 2024**

**चित्र संख्या–05.25 प्रतिशत विवरण**



प्रस्तुत तालिका संख्या 5.25 एवं चित्र का संबंध शादी, मुंडन जैसे शुभ कार्यों पर बाबा मंदिर में पढ़ने वाले खर्चे से है। इस संबंध में सर्वाधिक उत्तरदाता जो कुल का 80 प्रतिशत है, का मानना है कि बाबा मंदिर में शादी, मुंडन जैसे शुभ कार्यों पर कम खर्च होता है। वहीं 20 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता है जिनका मारना है कि यहां भी शादी, मुंडन आदि संस्कार करने पर सामान्य खर्च होता है। लेकिन यहां इन सब कर्मों पर अधिक खर्च होता है ऐसा कहने वाले एक भी उत्तरदाता नहीं थे।

## स्थानीय लोगों से बातचीत का विश्लेषण

शोधार्थी होने के नाते मैं स्थानीय निवासी दुर्लभ मिश्रा जी से मिली, ये मंदिर के सदस्य एवं ज्ञानी पंडित हैं ,उनके पास मंदिर निर्माण से जुड़ी ऐतिहासिक जानकारी बड़ी अच्छी है । उन्होंने कहा कि मैं मंदिर निर्माण के इतिहास के विभिन्न काल खंडों को जोड़कर बताता हूं।

पौराणिक कथाएं कुछ भी हो परंतु ऐतिहासिक साक्ष्य को भी झूठलाया नहीं जा सकता है। यह क्षेत्र प्राचीन समय में बौद्ध धर्म के अधीन हुआ करता था ,बौद्ध और सनातन धर्म के बीच युद्ध शुरू हुआ । गुरु शंकराचार्य सनातन धर्मावलंबियों के गुरु हुआ करते थे और यह काफी शक्तिशाली भी थे उनके द्वारा यहां के बौद्ध भिक्षुओं को मार काट कर भगा दिया गया तभी से यहां शिव संप्रदाय की स्थापना हुई। बुद्धिस्ट तो चले गए परंतु 'मठ' शब्द रह गया । 'मठ'शब्द बौद्ध कालीन साहित्य से प्राप्त हुआ है।

प्रमाणिकता के तौर पर वर्तमान में मंदिर प्रांगण में स्थित सबसे विशालतम एवं सबसे प्राचीन मूर्ति आनंद भैरव की है जो महात्मा बुद्ध की मूर्ति है । यह मूर्ति तालाब के किनारे पलटा पड़ा था ,धोबी इस पर कपड़ा पटकते और साफ करते थे बहुत दिनों बाद इस पत्थर को उल्टा कर दिया गया। और तभी से यहां के स्थानीय लोगों ने इसकी पूजा अर्चना शुरू कर दी। मंदिर में आनंद भैरव की यह मूर्ति सबसे प्राचीन मूर्ति मानी जाती है । आगे दुर्लभ मिश्रा जी बताते हैं कि एक और मंदिर में अति प्राचीन मूर्ति है जो सिद्धार्थ का है ,महात्मा बुद्ध का बचपन का नाम सिद्धार्थ था सिद्धार्थ को संगीत का बड़ा शौक था

। यह मूर्ति बांसुरी लिए हुए है वर्तमान में लोग इसे कृष्ण की मूर्ति कहते हैं परंतु वास्तव में यह भगवान बुद्ध की बचपन की मूर्ति है।[51]

## चंद्रकांता मणि/अष्ट चक्र कमल

मंदिर का यह अद्भुत धरोहर है यह मणि अष्टदल कमल की आकृति में मंदिर के भीतरी भाग में गुंबद से लगा हुआ है।इस चंद्रकांत मणि से बूंद बूंद द्रवित जल बराबर टपकता रहता है जो शिवलिंग के ऊपर गिरता है।[52] इस अष्टदल कमल की जानकारी 1565 –66 ईस्वी में हुई है। इस मणि का भी प्रमाण बौद्ध मठों से ही प्राप्त है क्योंकि भगवान बुद्ध की मूर्तियों में इस मणि का प्रयोग होता था । देश के किसी भी स्थान में इस प्रकार अष्ट कमल चक्र मूर्ति में नहीं पाई जाती है। प्रसिद्ध चीनी यात्री हवेनसांग का यात्रा वर्णन में भी चंद्रकांत मणि की चर्चा है।[53]

बाबा बैजनाथ मंदिर के निर्माण से पहले इस क्षेत्र में बौद्ध धर्म का इतिहास रहा है।[54]भारत में कई धार्मिक स्थल देखे गए हैं जिसमें पहले अन्य धर्म का सह अस्तित्व था। ऐतिहासिक रूप से भारत के कई स्थानों पर बौद्ध मठों या विहारों को बाद में हिंदू मंदिरों में बदल दिया गया है, उदाहरण के लिए बिहार के कई बौद्ध स्थल को समय के साथ हिंदू मंदिरों में बदला गया है। देवघर क्षेत्र में भी ऐसा संभव है कि पहले यहां बोद्ध धर्म के स्थल रहे हों और बाद में यह सब शिव उपासना का स्थल बाबा बैजनाथ मंदिर का विकास हुआ है। इसकी जानकारी हमें यहां के पुरातात्विक स्रोत से भी मिलती है।

**अध्याय–7**

# निष्कर्ष और सुझाव

बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर भगवान शंकर के 12 ज्योतिर्लिंगों में से एक माना जाता है । यह झारखंड के देवघर जिले में स्थित है। यहां सालों भर भक्तों की भीड़ लगी रहती है, विशेषकर श्रावण मास में लाखों श्रद्धालुओं की भीड़ रहती है। श्रद्धालु अपनी अपनी मनोकामना लेकर शिव मंदिर में जलार्पण करने हेतु कई स्थानों से आते हैं। बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर की ऐतिहासिक दृष्टिकोण की बात करें तो यह मंदिर का निर्माण कब कैसे हुआ, इसका क्या इतिहास रही अन्य लोगों के तरह मेरे जेहन में भी यह सवाल आता था कि भगवान विश्वकर्मा द्वारा निर्मित यह मंदिर एक ही रात में बना हुआ है कैसे? बचपन से सुनी यह पौराणिक दंत कथाएं मेरे मन में बार–बार सवाल कर रहे थे, यही कारण है कि मेरे द्वारा इस शोध विषय का चयन किया गया। प्रस्तुत शोध में मेरे द्वारा बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर निर्माण के प्राचीन इतिहास से वर्तमान तक की पृष्ठभूमि को समेटने का प्रयास किया गया है।

किसी भी इतिहास को जानने के लिए हमें दो तथ्यों का सहारा लेना पड़ता है। पहला–पौराणिक दृष्टिकोण, दूसरा– ऐतिहासिक स्रोत । 'देवघर 'अत्यंत ही प्यारा नाम है यह देवताओं का निवास स्थान माना जाता है अर्थात, देवताओं का घर है देवघर। देवघर का नाकरण बहुत प्रचीन नहीं है। संभवतः एक मुस्लिम फकीर जिसका नाम दातासाहब था, ने इस बैद्यनाथ धाम को देवघर नाम से पुकारा था।[55] यहां न सिर्फ यह मंदिर बल्कि यहां की हरियाली पेड़ पौधे, मानसरोवर, हरला जोर, शिवगंगा तालाब, पहाड़ों में नंदन पहाड़, त्रिकुटी पर्वत, तपोवन पहाड़, बूढ़े पर्वत इत्यादि दर्शनीय स्थल के साथ ही साथ यहां के संस्कृति अनेक पर्यटकों को अपनी ओर ध्यान खींचने के लिए पर्याप्त है।

वास्तव में यह मेरे लिए एक कठिन अध्ययन रहा, क्योंकि मंदिर निर्माण से जुड़ी अधिकतर दस्तावेज उपलब्ध नहीं हैं। शोधार्थी होने के नाते मैं स्थानीय निवासी दुर्लभ मिश्रा

जी से मिली, ये मंदिर के सदस्य एवं ज्ञानी पंडित भी हैं ,उनके पास मंदिर निर्माण से जुड़ी ऐतिहासिक जानकारी बड़ी अच्छी है। उन्होंने कहा कि मैं मंदिर निर्माण के इतिहास के विभिन्न काल खंडों को जोड़कर बताता हूं। पौराणिक कथाएं कुछ भी हो परंतु ऐतिहासिक साक्ष्य को भी झूठलाया नहीं जा सकता है। यह क्षेत्र प्राचीन समय में बौद्ध धर्म के अधीन हुआ करता था ,बौद्ध और सनातन धर्म के बीच युद्ध शुरू हुआ । गुरु शंकराचार्य सनातन धर्मावलंबियों के गुरु हुआ करते थे और यह काफी शक्तिशाली भी थे उनके द्वारा यहां के बौद्ध भिक्षुओं को मार काट कर भगा दिया गया, तभी से यहां शिव संप्रदाय की स्थापना हुई। बुद्धिस्ट तो चले गए परंतु 'मठ' शब्द रह गया । आज भी यहाँ के बहुत से लोग मंदिर के बदले मठ शब्द ही प्रयोग करते हैं। 'मठ'शब्द बौद्ध कालीन साहित्य से प्राप्त हुआ है जो इसको और भी अधिक स्पष्ट करता है।

प्रमाणिकता के तौर पर वर्तमान में मंदिर प्रांगण में स्थित सबसे विशालतम एवं सबसे प्राचीन मूर्ति आनंद भैरव की है जो महात्मा बुद्ध की मूर्ति प्रतीत होती है । स्थानीय निवासी दुर्लभ मिश्रा जी के अनुसार यह मूर्ति तालाब के किनारे पलटा पड़ा था ,धोबी इस पर कपड़ा पटकते और साफ करते थे। बहुत दिनों बाद इस पत्थर को उल्टा कर दिया गया तो यह प्रतिमा दिखाई दिया। तभी से यहां के स्थानीय लोगों ने इसकी पूजा अर्चना शुरू कर दी। मंदिर में आनंद भैरव की यह मूर्ति सबसे प्राचीन मूर्ति मानी जाती है।[56] आगे वे बताते हैं कि एक और मंदिर में अति प्राचीन मूर्ति है जो सिद्धार्थ का प्रतीत होता है ,महात्मा बुद्ध का बचपन का नाम सिद्धार्थ था उनको संगीत का बड़ा शौक था । यह मूर्ति बांसुरी लिए हुए है, वर्तमान में लोग इसे कृष्ण की मूर्ति कहते हैं। परंतु वास्तव में यह भगवान बुद्ध की बचपन की मूर्ति प्रतीत होती है।

बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर में चंद्रकांत मणि अथवा अष्ट चक्र कमल मंदिर का अद्भुत धरोहर है। यह मणि अष्ट कमल की आकृति में मंदिर के भीतरी भाग में गुंबद से लगा हुआ है।इस चंद्रकांत मणि से बूंद बूंद श्रवित जल बराबर टपकता रहता है, जो शिवलिंग

के ऊपर गिरता है। इस अष्टदल कमल की जानकारी 1565 –66 ईस्वी में हुई है। इस मणि का भी प्रमाण बौद्ध मठों से ही प्राप्त लगता है क्योंकि भगवान बुद्ध की मूर्तियों में इस प्रकार के मणि का प्रयोग होता था । देश के किसी भी स्थान में इस प्रकार अष्टदल कमल चक्र मूर्ति में नहीं पाई जाती है। प्रसिद्ध चीनी यात्री हवेनसांग का यात्रा वर्णन में भी चंद्रकांत मणि की चर्चा है।[57]

बाबा बैजनाथ मंदिर के निर्माण से पहले इस क्षेत्र में बौद्ध धर्म का इतिहास रहा है। भारत में कई धार्मिक स्थल देखे गए हैं जिसमें पहले अन्य धर्म का सह अस्तित्व था। ऐतिहासिक रूप से भारत के कई स्थानों पर बौद्ध मठों या विहारों को बाद में हिंदू मंदिरों में बदल दिया गया है, उदाहरण के लिए बिहार के कई बौद्ध स्थल को समय के साथ हिंदू मंदिरों में बदला गया है। देवघर क्षेत्र में भी ऐसा संभव है कि पहले यहां बहुत धर्म के स्थल रहे हों और बाद में यह सब शिव उपासना का स्थल बाबा बैद्यनाथ मंदिर का विकास हुआ है। इसकी जानकारी हमें यहां के पुरातात्विक स्रोत से भी मिलती है।

मंदिर निर्माण से जुड़ी नाथों का भी इतिहास रहा है। इससे जुड़ी बात की जाए तो नाथ संप्रदाय का उल्लेख बहुत ही आवश्यक है। बौद्धों के पराभव काल एवं हिंदुओं के पुनर्निर्माण काल में शिव भक्तों की कई शाखाएं विकसित हुई, जिसमें उदासी ,गोसाई एवं नाथ संप्रदाय प्रमुख थे। मंदिर में नाथों का वर्चस्व का प्रमाण यहां के नाथबाड़ी जो मंदिर के पश्चिम दरवाजे के निकट अवस्थित है, से है। वर्तमान में अब यह जीर्ण अवस्था में है। आज पूरा शहर बस चुका है परंतु नाथों के समाधियों एवं चिन्ह भग्नावेशों के स्पष्ट झलक दिखाई देते हैं,नाथ योगियों के कई मठ और आश्रम बाबा बैद्यनाथ धाम के ईद–गिर्द अवस्थित है। यहां अबतक स्थानीय लोगों द्वारा मठ शब्द का उच्चारण होता रहा है।

बाबा बैद्यनाथ मंदिर से संबद्धशिलालेखों से भी मंदिर का प्रमाण मिलते हैं। बाबा बैद्यनाथ मंदिर के पूर्व दरवाजे पर चार शिलालेख जड़ित हैं। इसकी भाषा ब्राम्ही लिपि है, इन शिलालेखों में मंदार पर्वत का जिक्र आया है और राजा आदित्य सेन का भी उल्लेख मिलता है। इतिहास के प्रोफेसर राखल दास बनर्जी ने मंदार पर्वत का जिक्र इन शिलालेख

में उल्लेख किया है। जफ लाइट की प्रसिद्ध पुस्तक कॉरपस स्कॉर्पियो इंडिकेटम के तीसरे भाग में इसका जिक्र मिलता है । आदित्य सेन का भी कालखंड सातवीं शताब्दी ही मानी जाती है।

सन 1871–72 में आर्कियोलॉजिस्ट सर्वे आफ इंडिया के सर्वेयर जे डी वेगलार ने इस मंदिर को विनिज्या की उतनिया मठ (मॉनेस्ट्री )माना है। उनके मानने के पीछे का कारण है कि यहां के देवताओं अंतर्मठों में पूजित कुछ देवताओं की प्रतिमा है, जो उनके अनुसार बौद्ध है।सन 1880 में काशी नरेश के साथ प्रख्यात लेखक भारतेंदु हरिश्चंद्र यात्रा हेतु यहां आए थे, इस पर उन्होंने एक प्रसंग भी लिखा था। इन्होंने लिखा है कि यहां बहुत सांप होते थे । तब काशी नरेश के स्वागत के लिए गिद्धौर के महाराजा सर जयमल सिंह भी यहां आए थे ,उन्होंने स्वयं कहा था कि यह मंदिर का निर्माण राजा पूरणमल के द्वारा बनवाया गया था।

मुगल काल में गिद्धौर एक प्रमुख राज्य था। इस काल में गिद्धौर वंशावली के क्षेत्र में यह प्रक्षेत्र आया करता था। गिद्धौर राजा की वंशावली संबंधित पुस्तक श्री मुकुट धापाती वंशावली है, जिसमें बैद्यनाथ मंदिर से संबंधित कुछ जानकारी मिलती है। महाराज गिद्धौर की वंशावली से यह ज्ञात होता है कि 11वीं से 15वीं सदी तक के राजवंशों की ऐतिहासिक घटनाओं का उल्लेख नहीं है। 16वीं शताब्दी से इस राजवंश का बैद्यनाथ मंदिर से घनिष्ठ पारिवारिक संबंध रहा है। प्रधान पुरोहित की वंशावली का संबंध भी गिद्धौर से है।

राजा पूरणमल सिंह के द्वारा इस मंदिर में, मंदिर के आगे का भाग जिसे मंझला खंड कहते हैं, बनवाया गया है। आश्रय स्थल एवं धरना स्थल भी इन्हीं के द्वारा बनवाया गया है। प्रारंभ में यहां दो ही मंदिर थे। संपूर्ण मंदिर का निर्माण राजा पूरणमल के द्वारा नहीं करवाया गया था और न ही यह किसी पंडा ओझा के द्वारा करवाया गया है।

लगभग 1564 ईस्वी में इस मंदिर को पंडा समाज के हाथ दे दिया गया। इससे पहले मंदिर में पूजा पाठ की जिम्मेदारी नाथ संप्रदाय की थी। गिद्धौर राजवंश इससे जुड़े हुए थे, परंतु पूजा पाठ की जिम्मेदारी इनकी नहीं थी। कभी–कभार ही यह पूजा पाठ हेतु मन्दिर आया करते थे। मुकुंद नाथ जो नाथ संप्रदाय के सबसे अंतिम प्रवर्तक थे, उन्हीं से

पांडा समाज को मन्दिर का कार्य–भार मिला है, जिनकी मूर्ति आज भी मंदिर प्रांगण में कब्र के रूप में स्थित है। पंडा समाज के हाथ में आने के पश्चात यहां गद्दी व्यवस्था लागू हुई। इस प्रकार बैद्यनाथ मठ से बैजनाथ मंदिर बना गया। सनातन धर्म में पूजा स्थल को मंदिर कहा जाता है। परंतु आज भी स्थानीय महिलाओं के द्वारा इसे मठ ही बोला जाता है।

वर्तमान में बाबा मंदिर के 27 वें सरदार पंडा गुलाबानंद ओझा है। इन्होंने यह पद अपने पिता, 26 वें सरदार पांडा अजीत आनंद ओझा के निधन के बाद ग्रहण किया है। प्रारंभ में बाबा मंदिर प्रांगण में दो ही मंदिर थे बाद में कई राजाओं एवं भक्तों के संरक्षण में अन्य मंदिर का निर्माण हुआ। वर्तमान में यहां कुल 22 मंदिर है। जिसमें माँ तारा का मंदिर अर्वाचीन है।[58]

मंदिर में भक्तों की संख्या ज्यादा रहती है और दरवाजे एक ही होने के कारण कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था। इसके समाधान के लिए इंजीनियर की एक टीम बुलाई गई,अत्याधुनिक उपकरणों का प्रयोग भी किया गया। सर्वेक्षण में कई समस्याएं एवं चुनौतियां भी आई,यह मंदिर संरचनात्मक रूप से एक पत्थर पर दूसरे पत्थर को रखकर बनाया गया है अर्थात नीचे के पत्थरों पर किलनुमा छेद कर ऊपर के पत्थर को नुकीला बना दिया गया ताकि वह एकदूसरे में फिट बैठ सके । पूरी मंदिर के संरचना के आधार पर 16 फीट की चौड़ाई है और ऊपर मात्र 6 फीट हो गया है जिससे कि इसका भार को समायोजित रखा जा सके। मंदिर निर्माण में किसी भी प्रकार का पदार्थ का उपयोग नहीं किया गया है। यह मंदिर का निर्माण तभी हुआ जब किसी पदार्थ का उपयोग नहीं होता था यथा– छड,सीमेंट, गिट्टी ,बालू आदि।

सर्वेक्षण के दौरान स्थानीय लोगों ने बताया कि मंदिर निर्माण के संबंध में इंजीनियर का कहना था कि यदि एक भी पत्थरों को काटा गया तो मंदिर गिर सकता है इससे छेड़छाड़ किया जाना उचित नहीं है। कई लोग इसे धार्मिक दृष्टिकोण से भी जोड़ते हैं

और इसे संवेदनशील मानते हैं। इस मामले को फिलहाल रोक दिया गया है। इसे आगे बढ़ने से पहले धार्मिक संस्थाओं और पुरातत्व विभाग से परामर्श किया जा रहा है।

इसप्रकार प्रस्तुत शोध में हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर का स्थापत्य कला मुख्य रूप से बौद्धकालीन स्थापत्य कला से मिलती–जुलती है। विशेषकर गिद्धौर के शासक और राजा पूरणमल सिंह का इस मंदिर के विकास में अत्यधिक सहयोग रहा। लेकिन यहाँ हमें इस बात को भी स्वीकारना होगा कि इस मंदिर के विकास में शासक वर्ग के साथ– साथ आम जनता का भी भरपूर सहयोग मिलता रहा है। इस मंदिर का देवघर के आर्थिक विकास के साथ–साथ सांस्कृतिक विकास में भी अहम भूमिका रही है।

## सुझाव (Recommendations )

शोधार्थी द्वारा **बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर की स्थापत्य कलाः सर्वेक्षण और समीक्षा**नामक प्रस्तुत शोध के संदर्भ में निम्नलिखित सुझाव दिये गए हैंः–

### 1. त्रि–आयामी (3D) दस्तावेजीकरण और डिजिटल पुनर्निर्माण

बाबा बैद्यनाथ धाम के मुख्य मंदिर, सह–गृह मंदिरों, गलियारों, शिखर, गर्भगृह व आसपास के समस्त स्थापत्य तत्वों का 3D लेजर स्कैनिंग और फोटोग्रामेट्री के माध्यम से सटीक दस्तावेजीकरण किया जा सकता है।

इससेः

1. मंदिर की वास्तविक संरचना का वैज्ञानिक रिकॉर्ड तैयार होगा।
2. भविष्य में होने वाले संरक्षण, मरम्मत या पुनर्निर्माण में प्रमाणिकता बनाए रखना आसान होगा।
3. तीर्थयात्रियों और शोधार्थियों के लिए वर्चुअल टूर विकसित किया जा सकेगा।

## 2. भीड़–प्रवाह (Crowd Flow) व गतिशीलता का डिजिटल सिमुलेशन

बैद्यनाथ धाम में श्रावणी मेला सहित वर्ष भर विशाल भीड़ रहती है। अत–

1 भीड़ के दबाव, यात्रा–पथ, कतार–प्रबंधन और सुरक्षा मार्गों का डिजिटल सिमुलेशन तैयार किया जाना चाहिए।

2 यह मॉडल आपात–स्थिति में मार्ग–निर्धारण, सुरक्षा व्यवस्था, और अतिक्रमण नियंत्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

3 पर्यटकों की भीड़ के आधार पर स्मार्ट मैनेजमेंट सिस्टम विकसित किया जा सकता है।

## 3. तुलनात्मक स्थापत्य विश्लेषण (Comparative Architectural Study)

बैद्यनाथ धाम की स्थापत्य शैली का अन्य ज्योतिर्लिंगों–

जैसे काशी विश्वनाथ, त्र्यंबकेश्वर, सोमनाथ, महाकालेश्वर, ओंकारेश्वर आदि से तुलनात्मक विश्लेषण किया जा सकता है।

इससे–

1. विभिन्न ज्योतिर्लिंगों की वास्तुकला में समानताएँ व भिन्नताएँ सामने आएँगी।

2. पुरातात्त्विक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक प्रभावों की स्पष्ट समझ बनेगी।

3. बैद्यनाथ धाम की विशिष्टता को वैश्विक स्तर पर प्रस्तुत करने में मदद मिलेगी।

## 4. लोक–परंपराओं और सांस्कृतिक तत्वों का दस्तावेजीकरण

मंदिर परंपरा से जुड़े–कांवड़ यात्रा, श्रावणी मेला, नित्य पूजा–पद्धति, पारंपरिक संगीत, नृत्य, भित्ति–कला, पवित्र जल–मार्ग (सुल्तानगंज–देवघर परंपरा) आदि का

नृवंश–शास्त्रीय (Ethnographic) दस्तावेजीकरण आवश्यक है।यह बैद्यनाथ धाम की सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करने में अत्यंत उपयोगी होगा।

## 5. धरोहर संरक्षण हेतु डिजिटल आर्काइव (Digital Heritage Archive)

एक डिजिटल आर्काइव विकसित किया जा सकता है जिसमें–

1. पुराने नक्शे, पट्टिकाएँ, ताम्रपत्र, शिलालेख
2. मंदिर से जुड़े ऐतिहासिक ग्रंथ
3. संरचनात्मक बदलाव का इतिहास
4. दुर्लभ फोटो, वीडियो, मौखिक इतिहास (Oral History)समाहित हो।

यह भविष्य के शोधकर्ताओं के लिए एक मूलभूत डाटाबेस का निर्माण करेगा।

## 6. भूकंपीय और संरचनात्मक सुरक्षा विश्लेषण

देवघर एक भूकंपीय संवेदनशील क्षेत्र में आता है, इसलिए–

1. मंदिर संरचना का Structural Integrity Testकिया जाना चाहिए।
2. नींव, दीवारों, शिखर और गर्भगृह की मजबूती का वैज्ञानिक मूल्यांकन हो।
3. आवश्यकतानुसार त्मजतवपिज तकनीक अपनाई जा सकती है ताकि संरचना भविष्य की चुनौतियों के अनुरूप सुरक्षित रहे।

## 7. धार्मिक पर्यटन में प्रबंधन सुधार (Pilgrimage Tourism Management)

मंदिर क्षेत्र के लिए–यात्री–मार्गों का पुनर्विन्यास, हरित क्षेत्र का विस्तार, पर्यावरण–अनुकूल सुविधाएँ, डिजिटल टिकटिंग एवं भीड़ नियंत्रण, दिव्यांगरंद हेतु सहज सुविधाजैसे उपाय सुझाए जा सकते हैं।

इससे धार्मिक पर्यटन अधिक व्यवस्थित, सुरक्षित और पर्यावरण–अनुकूल बनेगा।

## 8. पर्यावरणीय प्रभाव अध्ययन (Environmental Impact Study)

1. प्रतिवर्ष लाखों श्रद्धालुओं के आगमन से स्थानीय पर्यावरण, जल–प्रबंधन, कचरा निपटान, स्वच्छता और ध्वनि–प्रदूषण पर प्रभाव पड़ता है।

2. मंदिर क्षेत्र का पर्यावरणीय प्रभाव आकलन (EIA) कर पर्यावरण–संरक्षण की दीर्घकालीन रणनीति तैयार की जानी चाहिए।

## 9. स्थानीय कारीगरों और पारंपरिक तकनीक का संरक्षण

मंदिर निर्माण में प्रयुक्त पारंपरिक तकनीकें–जैसे पाषाण काटने की कला, शिखर निर्माण, धातु–कला, नक्काशी आदि, धीरे–धीरे लुप्त हो रही हैं।

1. इनके प्रशिक्षण केंद्र बनाए जाएँ।

2. स्थानीय कारीगरों का डाटा–बैंक तैयार हो।

3. युवाओं को पारंपरिक कला से जोड़ने की योजना बने।

## 10. भविष्य में बहुविषयक शोध (Interdisciplinary Research)

बैद्यनाथ धाम पर शोधः पुरातत्व, स्थापत्य, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, पर्यावरण विज्ञान

सांस्कृतिक अध्ययन इत्यादि विषयों को मिलाकर आगे बढ़ाया जा सकता है।इससे व्यापक और समग्र शोध–परिणाम प्राप्त होंगे।

### निष्कर्ष

उपरोक्त सभी सुझाव बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर की स्थापत्य कला के संरक्षण, डिजिटल दस्तावेजीकरण, सांस्कृतिक महत्ता के पुनर्स्थापन और धार्मिक पर्यटन के सतत विकास की दिशा में अत्यंत उपयोगी होंगे।

**परिशिष्ट–1**

# संदर्भ ग्रंथ सूची

1. उपाध्याय, डॉ0 उदयनारायण एवं तिवारी, प्रो0 गौतम (2007), भारतीय स्थापत्य एवं कला, मोतिलाल बनारसीदास प्रकाशन, जवाहर नगर दिल्ली, पृ0सं0 –01

2. प्राचीन भारत का आर्थिक इतिहास, लेखक : राधाकृष्ण चौधरी, प्रकाशक : जानकी प्रकाशन, नई दिल्ली, वर्ष – 1986, पृ.सं.–264

3. जोशी, एम, स्थानीय समुदाय पर बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर का सामाजिक–आर्थिक प्रभाव, साउथ एशियन जर्नल ऑफ टूरिज्म एंड हेरिटेज,वर्ष–2014, 7(2), 56–69

4.झा, योगेन्द्र (2018), देवघर : तब और अब, पराग, प्रकाशन, गंभीरा निवास देवघर, पृ0 सं0 06

5. उपाध्याय, डॉ0 उदयनारायण एवं तिवारी, प्रो0 गौतम (2007), भारतीय स्थापत्य एवं कला, मोतिलाल बनारसीदास प्रकाशन, जवाहर नगर दिल्ली, पृ0सं0 –01

6. कंछल, बनवारी लाल, (2020), बाबा बैद्यनाथधाम महिमा, इतिहास, विशेषता, तिर्थ और मंदिर, मनोज पब्लिकेशन्स, दिल्ली, पृ0 सं0 39

7. वृहद रावणेश्वर वैद्यनाथ महातम्य, आदित्य पब्लिकेशन, कैलाश नगर दिल्ली, पृ0सं0 06

8. .कहानी बाबा धाम की, आदित्य पब्लिकेशन, कैलाश नगर दिल्ली, पृ0सं0 21

9. कुमार, निरंजन एवं बालाजी, उमेश, क्यों होती है पूरी भक्तों की कामना बाबाधाम में, ज्ञान गंगा एण्ड को0 पब्लिशर्स, कैलाश नगर, दिल्ली, पृ0सं0 46

10. पारिजात, शिवशंकर सिंह, (2019), लोक आस्था का महाकुंभ श्रावणी मेला, युनिवर्सिटि प्रकाशन आगरा, पृ0 सं0 88

11. संताल परगना गजेटियर, 1910

12. प्रभात खबर, दैनिक समाचार पत्र, 22–12–2023, पृ0 सं0 – 13

13. प्राचीन भारत का आर्थिक इतिहास, लेखक : राधाकृष्ण चौधरी, प्रकाशक : जानकी प्रकाशन, नई दिल्ली, वर्ष – 1986, पृ.सं.–264

14. झा नलिन, श्री नकुल प्रसाद, (2003), श्री वैद्यनाथ भक्ति मंजरी, प्रकाशक अभय त्रिविक्रम झा, राधिका कुंज रक्ती साखां देवघर, पृ0 सं0 214

15. झा, योगेन्द्र (2018), देवघर : तब और अब, पराग, प्रकाशन, गंभीरा निवास देवघर, पृ0 सं0 06

16. मित्रा, आरएल(1879) देवघर के मंदिर, जर्नल ऑफ द एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल, 48(1), 1–20

17. सिंह देव, पीके(2002) बैद्यनाथ महिमा, बिहार एसोसिएशन फॉर एडवांसमेंट ऑफ साइंस एंड टेक्नोलॉजी।

18. कंछल, बीएल (2013) बाबा बैद्यनाथ धामः 3डी स्कैनिंग और वास्तु छायांकन का उपयोग कर वास्तु संरक्षण पर एक अध्ययन, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ हेरिटेज आर्किटेक्चर, 4(3), 278–287

19. जोशी, एम (2014), स्थानीय समुदाय पर बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर का सामाजिक–आर्थिक प्रभाव, साउथ एशियन जर्नल ऑफ टूरिज्म एंड हेरिटेज, 7(2), 56–69

20. गिरी, एस. (2015), बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर में अनुष्ठान और धार्मिक प्रथाएं, जर्नल ऑफ इंडियन कल्चर एंड ट्रेडिशन, 12(2), 235–247

21. वर्मा, ए. (2017), सामाजिक सद्भाव और आपसी संवाद को बढ़ावा देने में बैद्यनाथ धाम मंदिर परिसर की भूमिका, जर्नल ऑफ पीस स्टडीज, 24(2), 123–137

22. शर्मा, आर. (2019), बारह ज्योतिर्लिंगों का आध्यात्मिक महत्वः बैद्यनाथ धाम के विशेष संदर्भ में एक अध्ययन, धर्म और आध्यात्मिकता का अंतर्राष्ट्रीय जर्नल, 5(1), 23–33

23.दैनिक समाचार पत्र, प्रभात खबर, बिल्वपत्र, 18 –08–2023, पृ0सं0 07

24 .दैनिक समाचार पत्र, प्रभात खबर, बिल्वपत्र, 17 –07–2023, पृ0सं0 07

25. दैनिक समाचार पत्र, प्रभात खबर, बिल्वपत्र, 20 – 07 – 2023, पृ0सं0 07

26. दैनिक समाचार पत्र, प्रभात खबर, बिल्वपत्र, 19 –07–2023, पृ0सं0 07

27. दैनिक समाचार पत्र, प्रभात खबर, बिल्वपत्र, 16 –07–2023, पृ0सं0 07

28. दैनिक समाचार पत्र, प्रभात खबर, बिल्वपत्र, 18 –07–2023, पृ0सं0 07

29. दैनिक समाचार पत्र, प्रभात खबर, बिल्वपत्र, 13 –07–2023, पृ0सं0 07

30. दैनिक समाचार पत्र, प्रभात खबर, बिल्वपत्र, 14 –07–2023, पृ0सं0 07

31.दैनिक समाचार पत्र, प्रभात खबर, बिल्वपत्र, 20 –08–2023, पृ0सं0 07

32. दैनिक समाचार पत्र, प्रभात खबर, बिल्वपत्र, 08 –07–2023, पृ0सं0 07

33. दैनिक समाचार पत्र, प्रभात खबर, बिल्वपत्र, 09 – 07–2023, पृ0सं0 07

34. दैनिक समाचार पत्र, प्रभात खबर, बिल्वपत्र, 07 –07–2023, पृ0सं0 07

35. दैनिक समाचार पत्र, प्रभात खबर, बिल्वपत्र, 12 –07–2023, पृ0सं0 07

36. दैनिक समाचार पत्र, प्रभात खबर, बिल्वपत्र, 12 –07–2023, पृ0सं0 07

37. दैनिक समाचार पत्र, प्रभात खबर, बिल्वपत्र, 11 – 07 – 2023, पृ0सं0 07

38. दैनिक समाचार पत्र, प्रभात खबर, बिल्वपत्र, 17 –08–2023, पृ0सं0 07

39. दैनिक समाचार पत्र, प्रभात खबर, बिल्वपत्र, 10 –07–2023, पृ0सं0 07

40. दैनिक समाचार पत्र, प्रभात खबर, बिल्वपत्र, 23 –08–2023, पृ0सं0 07

41. दैनिक समाचार पत्र, प्रभात खबर, बिल्वपत्र, 22 –08–2023, पृ0सं0 07

42. अनुचिन्तन विमर्श, वर्ष–14, अंक–1–2, जनवरी–जून 2024, पृ0सं0 –99

43. श्री श्री बैद्यनाथज्योतिर्लिंग वाड्.मय, सं. डॉ. मोहनानन्द मिश्र, हिन्दी विद्यापीठ प्रकाशन, देवघर, झारखण्ड, पृ.सं.–132

44. फाइनल रिपोर्ट ऑन दि सर्वे एण्ड सेट्लमेन्ट ऑपरेशन्स इन दि डिस्ट्रिक्ट ऑफ वीरभूम 1925–32 (डी.एल.आर. पृ0 – 109–110)

45. बिहार का आर्थिक परिदृश्य,वर्ष–16,अंक–02, जुलाई–दिसंबर 2024, पृ.सं.–35

46.मित्रा, आरएल(1879) देवघर के मंदिर, जर्नल ऑफ द एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल, 48(1), 1–20

47. झा, योगेन्द्र (2018), देवघर : तब और अब, पराग, प्रकाशन, गंभीरा निवास देवघर, पृ0 सं0 08

48.झा नलिन, श्री नकुल प्रसाद, (2003), श्री वैद्यनाथ भक्ति मंजरी, प्रकाशक अभय त्रिविक्रम झा, राधिका कुंज रक्ती साखां देवघर, पृ0 सं0 280

49. अनुचिन्तन विमर्श, वर्ष–13, अंक–3–4, जुलाई–दिसंबर 2023, पृ0सं0 –59

50. श्री श्री बैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग वाड्.मय, सं. डॉ. मोहनानन्द मिश्र, हिन्दी विद्यापीठ प्रकाशन, देवघर, झारखण्ड, पृ.सं.–137

51. प्राथमिक स्रोत,श्री दुर्लभ मिश्रा देवघर, स्थानीय पुरोहित मंदिर

52. झा, योगेन्द्र (2018), देवघर : तब और अब, पराग, प्रकाशन, गंभीरा निवास देवघर, पृ0 सं0 10

53. हौसलों का सफरः पत्रिका, देवघर ,पृष्ठ संख्य 07

54. बिहार का आर्थिक परिदृश्य,वर्ष–16,अंक–02, जुलाई–दिसंबर 2024, पृ.सं.–33

55. झा,योगेंद्र, देवघरः तब और अब, पनाग प्रकाशन गंभीरा निवास देवघर, वर्ष 2018, द्वितीय संस्करण, पृष्ठ संख्या–14

56. प्राथमिक स्रोत ,श्री दुर्लभ मिश्रा देवघर, स्थानीय पुरोहित मंदिर

57. हौसलों का सफरः पत्रिका, देवघर ,पृष्ठ संख्य 07

58. राजनाम दुनियाः देवघरनामा, नवंबर 2023 ,पृष्ठ संख्या –35

**परिशिष्ट–2**

# अनुसूची / प्रष्नावली

सेवा में,

श्री / श्रीमती –

पता–

महाशय / महाशया,

प्रस्तुत शोध '' **बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर की स्थापत्य कलाः सर्वेक्षण और समीक्षा**'' है। जिसके अन्तर्गत देवघर जिले में बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर की स्थापत्य कलाको परखने एवं समझने का प्रयास किया गया है।

स्थापत्य कला अथवा वास्तुकला, भवनों के डिजाइन तथा निर्माण से जुड़ी हुई कला है। इसमें वास्तु विद्या, कारीगरी तथा भवन बनाने की कला भी शामिल है। स्थापत्य कला में, विस्तृत एवं सटीक मापन के कारण गणित तथा अभियंत्रिकी का अध्ययन भी शामिल होता है। इस कला में, विशेष तौर पर कई तरह की सामग्री या उनके मिश्रण का प्रयोग किया जाता है यथा– पत्थर, लकड़ी, कांच, धातु, रेत आदि।भारत के स्थापत्य कला की जड़ें यहाँ के इतिहास, दर्शन तथा संस्कृति में निहित है। भारत की वास्तुकला यहाँ की परम्परागत तथा बाहरी प्रभावों का मिश्रण है।

इसी शोध के तहत शोध से संबंधित बनाये गए अनुसूची / प्रश्नावली के साथ संबंधित जानकारी प्राप्त के लिए उपस्थित हुई हूँ। आपके द्वारा उपलध करायी गई जानकारी पूर्णरूप से गोपनीय रखूँगी। इसका प्रयोग सामूहिक रूप से अँकड़ों के रूप में किया जाएगा। आपकी निःसंकोच और सही–सही जानकारी मेंरे शोध को विश्वसनीय बनाने में सहयोग करेगा।

आपके निःस्वार्थ और निष्ठायुक्त सहयोग से ही इस अनुसंधान को पूरा किया जा सकेगा। आप सभी उत्तरदाताओं का हम सदा आभारी रहेंगे।

सधन्यवाद।

स्थान– भवदीय

दिनांक– **परिणीता कुमारी**

## (i) उत्तरदाताओं की वैयक्तिक सूचनाएँः–

1. नाम एवं उम्र–
2. लिंग–
3. धर्म– हिन्दू / मुसलिम / सिख / ईसाई
4. वर्ग–सामान्य / पिछड़ा / दलित / जनजाति / अनु0 जनजाति
5. वैवाहिक स्थिति– विवाहित / अविवाहित / विधवा
6. शैक्षणिकस्थिति–निरक्षर / साक्षर / प्राथमिक / माध्यमिक / इंटर / स्नातक / स्नातकोत्तर
7. परिवारिक आय–
8. परिवार का स्वरुप– (1) संयुक्त (2) एकाकी
9. परिवारकाआर्थिकस्वरूप– ए0 पी0 एल0 / बी0पी0एल0
10. परिवार में सदस्य संख्या–
11. परिवार का पेशा–

## (ii) बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर से संबंधित प्रष्न का नमूनाः–

1. देवघर जिला में आधारभूत सुविधाओं (सड़क, बिजली, रेलवे, अस्पताल, शिक्षण संस्थान इत्यादि) की स्थिति कैसी है ?–
   **बेहतर / सामान्य / खराब / मालूम नहीं**
2. क्या चिकित्सा की आपातकालीन व्यवस्था उपलब्ध है?–**हां / नहीं / पता नहीं**
3. स्वास्थ्य केंद्र पर मुफ्त दवाईयों की उपलब्धता–**हां / नहीं / पतानहीं**
4. क्या आपलोग बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर के महत्व को जानत`हैं?– **हां / नहीं**

**5.** आपलोग बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर कब से आते हैं?– **एकवर्षसे / दोवर्षसे / तीन या उस से अधिक वर्ष से**

6. क्या आप लोगों का बैद्यनाथ धाम मंदिर पर विश्वास है?– **हां / नहीं**

7. टापलोग मंदिर क्यों आते हैं?–**आस्था के केन्द्र को देखने और समझने / घूमने / अन्य**

8. क्या भगवान शिव की पूजा करने से आप लोगों की पूर्व में की गई कामना की पूर्ति हुई हैं?–**हां / नहीं**

9. क्या आपलोग सावन में कॉवर यात्रा के दौरान दी गई सुविधाओं से संतुष्ट हैं? –**हां / नहीं / पतानहीं**

10. क्या आपलोग मंदिर परिसर में प्रदत्त सुविधाओं से संतुष्ट हैं?–**हां / नहीं**

11. क्या आपलोग मंदिर परिसर में पुलिस एवं प्रशासन के व्यवहार से संतुष्ट हैं?– **हां / नहीं**

12. क्या आपलोग मंदिर परिसर में पंडा / पुजारी केव्य वहार से संतुष्ट हैं?–**हां / नहीं**

**13.** मंदिर परिसर में सामाजिक वातावरण से संबंधित विवरण– **सौहार्दपूर्ण / अच्छा / पैसे के आधार पर भेदभाव**

14. मंदिर परिसर का सांस्कृतिक वातावरण से संबंधित विवरण– **भक्तिमय / कोलाहलपूर्ण / सामान्य**

15. मंदिर के अलंकरण एवं साज सजा से संबंधित विवरण–**बहुत अच्छा / सामान्य / सुधार की आवश्यकता है**

**16.** मंदिर परिसर को प्रभावित करने वाले सामाजिक कारक– **तीर्थ यात्रियों द्वारा यत्र तत्र अपशिष्ट पदार्थ फेंकना / तीर्थ यात्रियों के वेश में असामाजिक तत्वों का प्रवेश / पूजा कराने के नाम पर अमर्यादित व्यवहार**

**17.** मंदिर से रोजगार के अवसरों पर पड़ने वाले प्रभावों से संबंधित विवरण– **रोजगार के अवसर में वृद्धि हुई है / रोजगार के अवसरों में वृद्धि नहीं हुई है / पता नहीं**

18. मंदिर का आर्थिक विकास पर पड़ने वाले प्रभाव– **आर्थिक विकास बढ़ी है / कोई प्रभाव नहीं पड़ा है / पतानहीं**

19. क्या आपलोग महिला सुरक्षा से संतुष्ट हैं?– **हां / नहीं / पतानहीं**

20. शादी, मुंडन जैसे शुभ कार्यों पर बाबा मंदिर में कम खर्च होता है, इसपर आपलोगों का क्या विचार है?– **कम / सामान्य / अधिक**

**परिशिष्ट–3**

# सेमिनार प्रमाण पत्र



SONA DEVI UNIVERSITY

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

## INTERNATIONAL INTERDISCIPLINARY SEMINAR

ON

Dimensions of Indian Knowledge System : Doctrines & Trends

*29th & 30th December, 2024*

*Jointly Organized by*

**Sona Devi University Ghatsila Jharkhand, Dr. Jagannath Mishra College, Jasidih, Shubha Devi Memorial Trust, Deoghar & Anuchintan Foundation, Khagaria, Bihar In Academic Collaboration with IGNOU Regional Centre, Deoghar, Jharkhand**

CERTIFICATE

This is to certify that परिणीता कुमारी, शोधार्थी

of पी॰ एच॰ डी॰ विश्वविद्यालय, बिहपुरी, भदेचभदेश्वर

attended/ chaired session/ delivered Plenary lecture/ presented paper on

'भारतीय ज्ञान परंपरा : वाचा वेदसमान धर्म संहिता'

in the above mentioned seminar.

| Prof. (Dr.) J.P. Mishra | Dr. Saroj Kr. Mishra | Dr. R.K. Choudhary | Dr. Anil Thakur |
|---|---|---|---|
| *Vice Chancellor* | *IGNOU, RC- Deoghar Jharkhand* | *Coordinator, IGNOU* | *Secretary* |
| *Sona Devi University Ghatsila* | | *Dr. J.M. College, Jasidih* | *Anuchintan Foundation* |
| | | | *HOD. Eco. K.D.S. College. Gogri* |

30/12/2024

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

# INTERNATIONAL INTERDISCIPLINARY SEMINAR

on

**ENVIRONMENT, CULTURE AND SUSTAINABLE DEVELOPMENT**

**17th & 18th FEBRUARY, 2024**

**Organized By : Hindi Vidyapith B.Ed. College, Deoghar, Jharkhand**

*In Academic collaboration with IGNOU Regional Centre, Deoghar, Jharkhand*

&

**Anuchintan Foundation**

## Certificate

*This is to certify that* Parinita Kumari

*of* P.K. University, Shivpuri (M.P.)

*attended / chaired session / delivered Plenary lecture/ presented paper on* Baba Baidyanath Dham Mandir : Ek Sanskritik Vishleshan

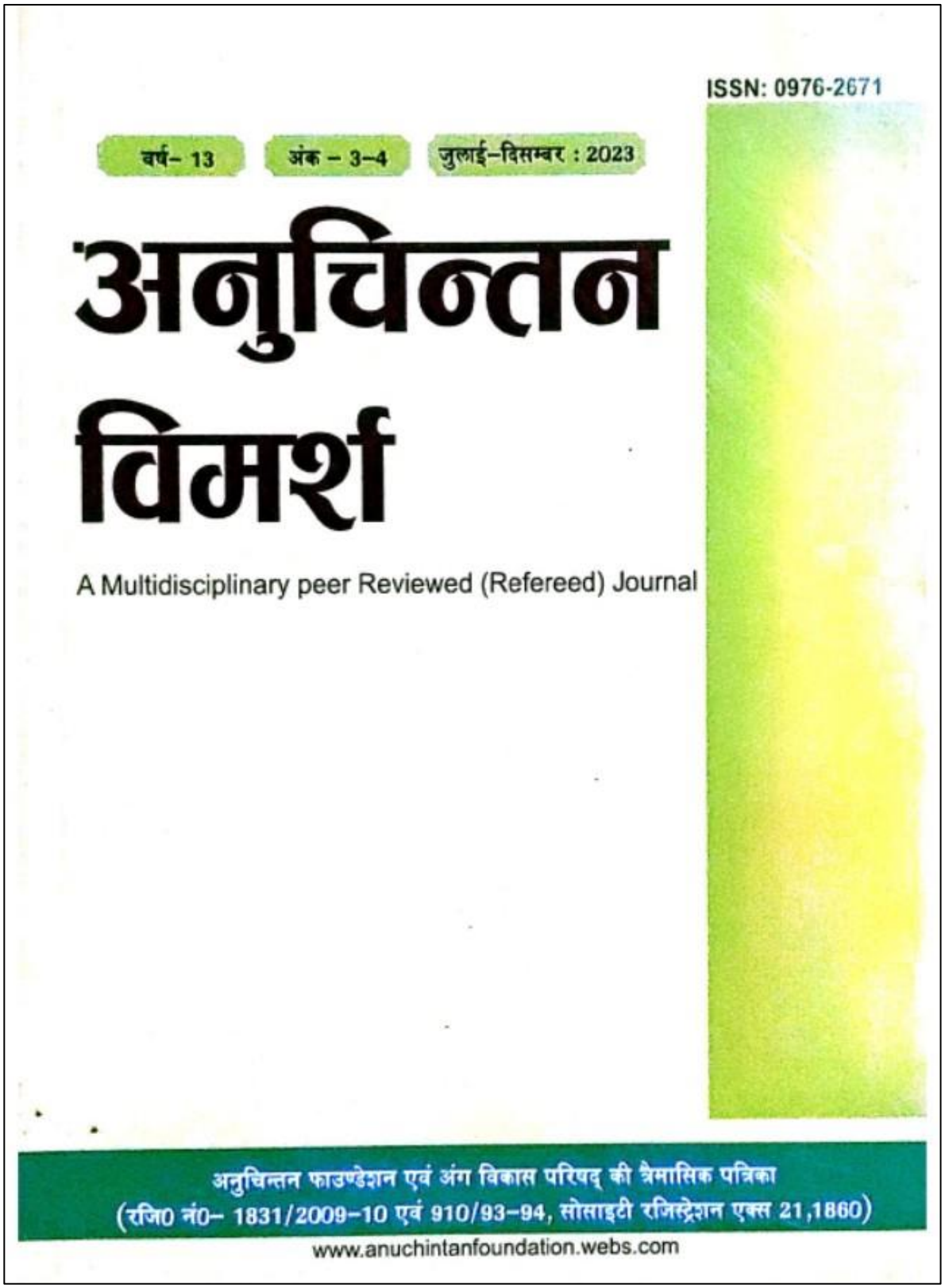
*in the above mentioned Seminar.*

17.02.24

| Sri Krishnanand Jha | Dr. Saroj Kumar Mishra | Dr. Asha Mishra | Dr. Anil Thakur |
|---|---|---|---|
| Chairman, HVP B.Ed. College, Deoghar, Jharkhand | IGNOU, RC- Deoghar, Jharkhand | Principal HVP B.Ed. College, Deoghar, Jharkhand | Secretary Anuchintan Foundation |

**परिशिष्ट–4**

# शोध–पत्र प्रकाशन



# विषय सूची

अनुचिन्तन विमर्श,
वर्ष–13, अंक–3–4, जुलाई–दिसंबर 2023 ISSN: 0976-2671

1. सामाजिक, सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक विकास में सार्वजनिक ग्रंथालय की भूमिका : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन
**6/ *सुमन कुमारी **शेष मिश्रा**

2. पर्यावरण और जीवन दर्शन : एक अनुशीलन
**17 / ईश्वर चन्द**

3. पर्यावरण एवं जल–जीवन–हरियाली अभियान : बिहार के संदर्भ में एक अध्ययन
**25 / गीतांजली भारती**

4. भारतीय संस्कृति : देवघर की एक सांस्कृतिक झलक
**34 / अपर्णा झा**

5. मानव – स्वधर्म : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन
**40 / मिथिलेश कुमार**

6. पर्यावरण संरक्षण एवं सतत् विकास : एक अर्थशास्त्रीय विवेचन
**44 / राजीव रंजन**

7. खगड़िया की लोक संस्कृति और भाषा (ठेठ हिन्दी)
**48 / रोशन रवि**

8. बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिरः एक सांस्कृतिक विश्लेषण
**56 / परिणीता कुमारी**

9. संताल परगना में वाणिज्य एवं व्यापार के संभावनाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन
**62 / आशीष कुमार केशरी**

10. सरकारी स्वास्थ्य संबंधी संरचनाएँ एवं कार्यक्रमों का विश्लेषणात्मक अध्ययन
**69 / चन्दन कुमार चौधरी**

ISSN- 0976-2671
अनुचिंतन विमर्श, वर्ष–13, अंक–03 – 04, जुलाई – दिसंबर 2023

# बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिरः एक सांस्कृतिक विश्लेषण

परिणीता कुमारी
शोधार्थी, इतिहास विभाग, पी. के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी
*Email:parinitasinha4287@gmail.com*

***सारांश***

*संस्कृति के निर्माण और संरक्षण में मंदिरों की महत्ती भूमिका रही है। यदि हम भारत की बात करें तो भारतीय समाज में सांस्कृतिक मूल्यों के निर्माण में मंदिरों की भूमिका मानव शरीर एवं सांस के जैसा रही है। भारतीय मंदिरों में संगीत कला, नृत्य कला, आर्युवेद, युद्ध कला, वास्तु कला, शिल्प कला एवं मुर्ति कला आदि का संरक्षण एवं विकास होते रहा है। प्राचीन काल मे तो मंदिरों में ऋषि – महात्मा गुरूकुल आश्रम चलाते थे जहां पुजा–पाठ, मंत्र साधना एवं उपासना के साथ – साथ भारतीय ज्ञान परंपरा एवं संस्कृति का भी पोषण एवं संरक्षण होता था। उन्हीं मंदिरों में बाबा बैद्यनाथधाम का भी एक मंदिर है जिसका भारतीय संस्कृति के विकास एवं पोषण में अहम भूमिका रही है।*

**शब्द कुंजी** : भारतीय संस्कृति, भारतीय ज्ञान परंपरा, रीति–रिवाज, धर्म दर्शन, मानव मूल्य

**परिचयः** भारतीय संस्कृति केवल परंपरा, रीति–रिवाज, आचार–व्यवहार, रहन–सहन, उत्सव–धर्म मात्र नहीं है बल्कि मानवीय मूल्यों, मानवता और भारतीयता का पर्याय भी है। संस्कृति किसी भी राष्ट्र की जाति अथवा राष्ट्र के शिष्ट समुदाय में विचार, वाणी, आचार–व्यवहार और क्रिया का व्याप्त रूप है। यह सृजनात्मक आचरणगत पहचान है। बुद्धि और सौंदर्य संस्कृति के मुख्य तत्व हैं किंतु मानवता इसकी आत्मा है। संस्कृति का संबंध धर्म–दर्शन से लेकर रीति–रिवाजों, रहन – सहन, आचार – विचार, ज्ञान–विज्ञान, जीवन–पद्धति, कला – मूल्य तथा मानवता से है। संस्कृति मानव – प्रेम, सेवा–समर्पण, त्याग एवं बलिदान का पूँजीभूत रूप भी है। क्रोबर के मत में संस्कृति एक व्यवस्था है जिसमें हम जीवन के अनेक प्रतिमानों, व्यवहार के तरीकों, भौतिक – अभौतिक प्रतीकों, परंपराओं, विचारों, सामाजिक मूल्यों, मानवीय क्रियाओं तथा आविश्कारों को सम्मिलित करते हैं – कल्चरः ए कल्चरल रिव्यू ऑफ कांसेप्टस एंड डिफिनेशनस, (पेज 133)। संस्कृति एक जटिल संपूर्णता है जिसमें उन सभी विशेषताओं का समावेश होता है जिन पर हम विचार करते हैं, कार्य करते हैं और समाज के सदस्य होने के नाते उन्हें अपने

पास रखते हैं एवं आचरण में प्रदर्शित भी करते हैं। कहने का अर्थ यह है कि मनुष्य एक ऐसे सामाजिक प्राणी के रूप में विचार विकसित करते हैं, व्यवहार के लिए नियम बनाते हैं, आविष्कार करते हैं व्यवहार में लाते हैं जो स्वंय के लिए होते हैं, समवेत रूप में संस्कृति कहलाता है।

देवघर बैद्यनाथधाम के नाम से प्रसिद्ध ऐतिहासिक शहर है। यह झारखंड की सांस्कृतिक राजधानी कहलाता है। यहाँ के लोग अनेक संस्कृति, भाषा एवं धर्म के हैं। यह शहर प्राचीन समय से पवित्र तीर्थ स्थल माना जाता है। इस शहर में बिहार, बंगाल एवं अन्य क्षेत्र के लोग निवास करते हैं। यहाँ गुजराती, पंजाबी मारवारी एवं राजस्थानी लोग भी लंबे समय से रहते आए हैं। शहर के स्थानीय लोग अंगिका एवं संथाली भी बोलते हैं। ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले अधिकांश लोग खोरठा बोलते हैं। खोरठा, अंगिका, संथाली इत्यादि को झारखंड सरकार द्वारा प्रतियोगी परीक्षा में भी शामिल कर लिया गया हैं। जनगणना रिपोर्ट 2011 के अनुसार देवघर जिला की भाषा को निम्न तालिका से स्पष्ट किया जा सकता है।

**तालिका संख्या 2.17**
**देवघर जिला में बोली जाने वाली भाषा**

| भाषा | बोलने वाले लोगों की संख्या (प्रतिशत में) |
|---|---|
| खोरठा | 65.39 |
| हिन्दी | 13.92 |
| संथाली | 9.83 |
| उर्दू | 6.71 |
| बंगाली | 2.19 |
| अन्य | 1.96 |

**स्रोतः** जनगणना रिपोर्ट 2011

उपर्युक्त तालिका संख्या 2.17 से स्पष्ट है कि देवघर जिला के मुख्य भाषा खोरठा है जबकि यहाँ बंगाली इत्यादि भी बोली जाती है।

**पर्व एवं त्योहार**

पर्व त्योहार हमारी संस्कृति का एक अहम हिस्सा है। देवघर जिला में लंबे समय से विभिन्न धर्म, संप्रदाय एवं पंथ के लोग रहते आ रहे हैं। ये लोग अपने– अपने तरीके से पर्व त्योहार मनाते हैं। बड़े पैमाने पर यहाँ के हिन्दू लोग दीपावली, होली, छठ, दशहरा, रामनवमी, कर्मा आदि त्योहार मनाते हैं। संथाली जो सरणा मानते हैं, ये लोग परंपरागत तरीके से कर्मा, सरहुल, सोहराय आदि पर्व धूम–धाम से मनाते हैं। जिले में सरस्वती पूजा,

मकर संक्रांति, जितिया, नवान्न आदि पर्व धूम–धाम से मनाए जाते हैं। जो लोग मशीन, इंजीनियरिंग आदि से जुड़े हुए रहते हैं वे विश्वकर्मा पूजा को मनाते है। मुस्लिम लोग ईद, बकरीद, सबे बरात, मुहर्रम आदि पर्व मनाते हैं। रामनवमी और तजिया दोनों यहाँ शांतिपूर्वक मनाए जाते हैं।

**इस शहर का पवित्र आकर्षण स्थल है:–**

**1.बैद्यनाथ धाम:** बाबा बैद्यनाथ मंदिर परिसर में 12 अन्य मंदिरों के साथ साथ एक ज्योतिर्लिंग है। भारत में झारखंड राज्य के संताल परगना डिवीजन में देवघर में स्थित, इस बड़े मंदिर परिसर में बाबा बैद्यनाथ का मुख्य मंदिर है, जहां 12 अन्य मंदिरों के साथ ज्योतिर्लिंग स्थापित उद्धरण वांछित, मंदिर का उल्लेख कई प्राचीन शास्त्रों में किया गया है तथा आधुनिक इतिहास की किताबों में भी इसका उल्लेख मिलता है। इस ज्योतिर्लिंग की उत्पत्ति की कहानी भगवान राम के युग में त्रेता युग की है। लोकप्रिय हिंदू मान्यताओं के अनुसार, लंका के राजा रावण घायल हो गए थे और उन्होंने शिव की पूजा की थी जहां वर्तमान में मंदिर अवस्थित है। रावण ने भगवान शिव को बलि के रूप में एक के बाद एक अपने दस सिर चढ़ाए। इस .त्य से प्रसन्न होकर भगवान शिव रावण को ठीक करने के लिए पृथ्वी पर अवतरित हुए। चूंकि शिव ने एक चिकित्सक के रूप में काम किया था, इसलिए उन्हें वैद्य कहा जाता है, और भगवान शिव के इस कार्य से ही मंदिर का नाम पड़ा है।

**2. तपोवन गुफाएँ और पहाड़ियाँ:** गुफाओं एवं पहाड़ियों की यह श्रृंखला देवघर से 10 किमी दूर स्थित है तथा इसमें तपोनाथ महादेव नामक शिव का एक मंदिर है । गुफाओं में एक शिव लिंग स्थापित है, जिसके बारे में कहा जाता है कि ऋषि वाल्मीकि यहां तपस्या के लिए आए थे।

**3. नौलखा मंदिर:** यह 146 फीट ऊंचे मुख्य मंदिर से 1.5 किमी की दूरी पर स्थित एक खास मंदिर है। यह बेलूर में राम.ष्ण के मंदिर के समान है एवं यह राधा–.ष्ण को समर्पित है। इसके निर्माण लागत 9 लाख रुपये होने के कारण इसे नौलखा मंदिर के नाम से जाना जाता है।

**4. सत्संग नगर** – सत्संग नगर बैद्यनाथ धाम शहर का एक हिस्सा है, जिसमें सत्संग ठाकुरबाड़ी, देवघर शामिल है। यह वह पवित्र स्थल है जहाँ श्री श्री ठाकुर अनुकुलचंद्र जी महाराज ने अपना जीवन व्यतीत किया था। यहाँ के ठाकुर परिवार से मिलने के लिए कई भक्त हर रोज आते हैं । यह सत्संग क्रांति का केंद्र और इस आंदोलन का मुख्य केंद्र भी है। आश्रम में कई भक्त स्थायी रूप से मूल निवासी के रूप में रहते हैं।

**5. सावन मेला:** श्रावण मास में बाबाधाम का महत्व और अधिक बढ़ जाता है। इस दौरान बाबा बैद्यनाथ मंदिर में भक्तों की भीड़ उमड़ती है। ज्यादातर पर्यटक सबसे पहले सुल्तानगंज जाते हैं, जो बाबाधाम से 109 किमी दूर है। सुल्तानगंज में गंगा उत्तर की

तरफ बहती है। भक्त अपने कांवड़ में नदी से जल भरते हैं तथा रास्ते में बोल बम का नारा लगाते हुए बाबाधाम में बाबा बैद्यनाथ मंदिर तक 109 किमी पैदल चलकर जाते हैं। बाबाधाम पहुंचने पर, कांवड़ियां सर्व प्रथम शिवगंगा में डुबकी लगाकर खुद को शुद्ध करते हैं और फिर बाबा बैद्यनाथ मंदिर में प्रवेश करते हैं, जहां ज्योतिर्लिंग को गंगा जल चढ़ाया जाता है। यह तीर्थयात्रा पूरे श्रावण के दौरान जुलाई–अगस्त से 30 दिनों तक चलती रहती है। यह दुनिया का सर्वाधिक लंबा धार्मिक मेला है। सुल्तानगंज से बाबाधाम के बीच पुरे रास्ते भगवाधारी तीर्थयात्रियों की 109 किमी लंबी मानव श्रृंखला सा बना रहता है। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि श्रावण के दौरान लगभग 5.0 से 5.5 मिलियन तीर्थयात्री बाबाधाम आते हैं। श्रावण के महान तीर्थ के अलावा, लगभग पूरे वर्ष मार्च में शिवरात्रि, जनवरी में बसंत पंचमी, सितंबर में भाद्र पूर्णिमा के साथ अच्छी खासी भीड़ रहती है। इसके अलावा, यहां के रिखिया आश्रम अपने ध्यान शिविर के लिए प्रसिद्ध है। संत बालानंद ब्रह्मचारी के रामनिवास आश्रम, मोहनंद स्वामी के मोहन मंदिर, स्वामी हंसदेव अवधूत के कैलाश पहाड़ आश्रम आदि प्रसिद्ध है।

**6. बैजू मंदिरः** बाबा बैद्यनाथ मंदिर परिसर के पश्चिम तथा देवघर शहर के मुख्य बाजार में एक और मंदिर भी हैं, जिन्हें बैजू मंदिर के नाम से जाना जाता है। इसके अतिरिक्त कई मंदिरों का निर्माण बाबा बैद्यनाथ मंदिर के मुख्य पुजारी के वंशजों ने करवाया था और प्रत्येक मंदिर में भगवान शिव का लिंग स्थापित है।

**7. त्रिकुट पर्वतः** देवघर से लगभग 16 किमी. दूर दुमका रोड पर एक खूबसूरत पर्वत त्रिकूट स्थित है। इस पहाड़ पर बहुत सारी गुफाएं एवं झरनें है। बैद्यनाथ धाम से बासुकीनाथ मंदिर की ओर जाने वाले श्रद्धालु मंदिरों से सजे इस पर्वत पर रुकना बहुत पसंद करते हैं।

**8. नंदन पहाड़ः** नंदन पर्वत की महत्ता यहां बने मंदिरों के झुंड के कारण है, जो विभिन्न भगवानों को समर्पित हैं। पहाड़ की चोटी पर एक सुंदर कुंड भी है जहां लोग पिकनिक मनाने आते रहते हैं।

**9. आनंद भैरव मंदिर :** यह मंदिर बाबा बैद्यनाथ मंदिर के प्रांगण में अवस्थित है। इस मंदिर का निर्माण 1782 में रामदत्त ओझा ने शुरू किया जिसे 1810 एवं 1823 के मध्य आनंददत्त ओझा एवं सर्वानंद ओझा ने पुरा किया। यह मंदिर मुख्य मंदिर के पश्चिम एवं उत्तर कोने में स्थिति है। आनंद भैरव मंदिर की बनावट बांकी अन्य मंदिरों से अलग है। इस मंदिर के मुख्य शिखर की लंबाई लगभग 40 फीट और चौराई 30 फीट है। आनंद भैरव के शिखर पर ताम्बे का कलश है और उसपर पंचशूल भी लगा है।

**10. माँ तारा मंदिर :** यह मंदिर बाबा बैद्यनाथ मंदिर के प्रांगण में अवस्थित है। इसका निर्माण लगभग 1930 ई0 से 1935 ई0 में पुर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री भवप्रीतानंद ओझा ने कराया। इस मंदिर का निर्माण मंदिर परिसर में सबसे अंतिम निर्माण है। इस

मंदिर की बनावट अन्य मंदिरों से अलग है। यह मुख्य मंदिर के उत्तर की ओर है और बाबा के निकास द्वार के ठीक सामने है।

**11. माँ काली मंदिर :** माँ काली मंदिर का निर्माण पुर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री जयनारायण ओझा ने 1712 ई0 में कराया था। यहां मां की तांत्रिक विधि से पुजा की जाती है। इस मंदिर में शिव के साथ शक्ति दोनों एक साथ पुजा का महत्व है। मां काली की प्रतिमा तीन ओर ताम्बा की ग्रील से घिरा हुआ है। जिससे मां की पुजा करने के लिए भक्त बाईं ओर से पुजा करते हुए दाईं ओर से बाहर निकलते है।

**12. दुर्गा मंडप :** दुर्गा मंडप में वेदी पर मां शक्ति की पुजा की जाती है। इस मंदिर का निर्माण लगभग 129 वर्ष पुर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री शैलजानंद ओझा ने कराया, इस मंडप की बनावट अन्य मंदिरों से अलग है। यह मुख्य मंदिर के उत्तर की ओर प्रशासनिक भवन के पास स्थित है। इस मंडप की लंबाई लगभग 20 फीट और चौड़ाई 40 फीट है। इस मंडप के शिखर पर बीच में भगवान गणेश की मनोहारी मुर्ति एवं दो शेर की आकृति बनी है। इस मंडप के उपर पंचशूल नहीं लगा है।

इन सबके अतिरिक्त मंदिर प्रांगण में त्रिपुर सुंदरी मंदिर है। जहां तांत्रिक विधि से पुजा की जाती है। इस मंदिर का निर्माण 1877 से 1901 ई0 के बीच पुर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री शैलजानंद ओझा ने कराया था। मंदिर प्रांगण में ही मां गंगा का मंदिर है। इस मंदिर का निर्माण 19वीं सदी में भवप्रिता नंद ओझा ने कराया था। प्रांगण में हीं राम, सीता, लक्ष्मण मंदिर है। इस मंदिर का निर्माण पूर्ण सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री रामदत्त ओझा ने 1782 से 1792 के मध्य कराया था। प्रांगण में ही सूर्यनारायण मंदिर है जिसका निर्माण 1782 से 1793 के बीच पूर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री रामदत्त ओझा ने कराया था। प्रांगण में माता बगलामुखी का मंदिर है जिसका निर्माण 1793 ई0 में पूर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री रामदत्त ओझा ने करवाया था। इस तरह बाबा बैद्यनाथ मंदिर प्रांगण में बाबा बैद्यथान ज्योर्तिलींग, मां पार्वती सहित विभिन्न देवि देवताओं के कुल 22 मंदिर अवस्थित है। सभी मंदिरों का अपना अपना पौराणिक इतिहास व सांस्कृतिक महत्व है।

## निष्कर्ष

इस प्रकार इस शोधप्रत्र में हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर भारत के प्राचीनतम मंदिरों में से एक मंदिर है जो झारखंड के देवघर में अवस्थित है। यह मंदिर भारतीय संस्कृति एवं ज्ञान परंपरा का जीता जागता उदाहरण है। यह आज भी न केवल कड़ोरों लोगों के आस्था का केन्द्र है बल्कि इससे जुड़े हुए अनेकों परंपराएं एवं रीति रिवाज संरक्षित है। वर्तमान समय में हो रहे लोगों में मुल्य ह्रास, तेजी से पनप रहे अपसंस्कृति आदि के अंधे दौड़ में यह मंदिर लोगों में आत्म विश्वास, मुल्य वृद्धि एवं भारतीय संस्कृति के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका में रहेगा।

## संदर्भ सूची

*1. Agarwal, Urmila. North Indian temple sculpture. New Delhi: Munshiram Manoharlal Publishers, 1995.*

*2. Kramrisch, Stella. The Hindu temple. Delhi: Motilal Banarsidass, 1996.*

*3. Nou, Jean-Louis. Hindu temples. London: Tricolour Books. Books from India., 1985.*

*4. Ramachandran, Nirmala. Hindu heritage. Pannipitiya: Stamford Lake Publication, 2000.*

*5. Sharma, J. C. Hindu temples in Vietnam. New Delhi: The Offsetters (Publication Division), 1997.*

6. पारिजात, शिवसंकर सिंह, लोक आस्था का महाकुंभ, श्रावणी मेला, युनिवर्सिटी प्रकाशन, 2019

7. विल्वपत्र, प्रभात खबर, दैनिक समाचार पत्र का विशेषांक, जुलाई 2023

8. श्री श्री बैद्यनाथ ज्योर्तिलिंग वाङ्मय, संपादक डॉ0 मोहनानंद मिश्र, हिन्दी विद्यापीठ प्रकाशन देवघर, झारखंड

ISSN: 0974-9969

# बिहार का आर्थिक परिदृश्य

A Multidisciplinary peer Reviewed (Refereed) Journal

वर्ष : 17, अंक: 02, जुलाई–दिसम्बर 2025

www.anuchintanfoundation.webs.com

ISSN- 0974-9969
बिहार का आर्थिक परिदृश्य, वर्ष–17, अंक–02, जुलाई–दिसंबर–2025

# पर्यटन, संस्कृति और पर्यावरणीय स्थिरता : मंदिरों का प्रभाव

*परिणीता कुमारी
शोधार्थी, इतिहास विभाग, पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म.प्र.) *Email:parinitasinha4287@gmail.com*
**जितेंद्र वर्मा
इतिहास विभाग, पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म.प्र.)

**सारांश**

मंदिर पर्यटन, संस्कृति और पर्यावरणीय स्थिरता पर गहरा प्रभाव डालते हैं। ये केवल धार्मिक आस्था के केंद्र नहीं, बल्कि सांस्कृतिक विरासत, सामाजिक एकता और स्थानीय विकास के सशक्त माध्यम भी हैं। मंदिरों से जुड़ा पर्यटन समाज को आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ बनाता है और स्थानीय कारीगरों, व्यापारियों तथा सेवा क्षेत्र को प्रत्यक्ष लाभ पहुँचाता है। हालाँकि, अत्यधिक और अनियोजित पर्यटन से प्रदूषण, संसाधनों पर दबाव तथा पर्यावरणीय क्षरण जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। इसलिए आवश्यकता है कि मंदिर पर्यटन को सतत विकास के सिद्धांतों पर आधारित किया जाए, जहाँ श्रद्धा और संरक्षण दोनों का संतुलन बना रहे।

**शब्द कुंजी** : संस्कृति, पर्यटन, पर्यावरणीय स्थिरता, सांस्कृतिक विरासत, अर्थव्यवस्था, प्रदूषण, संसाधन, सतत विकास

## परिचय

भारत में मंदिर केवल उपासना के स्थल नहीं, बल्कि सभ्यता और संस्कृति के साक्षी हैं। ये इतिहास, वास्तुकला, संगीत, नृत्य, चित्रकला और साहित्य जैसी कलाओं के केंद्र रहे हैं। मंदिर न केवल आस्था के केंद्र हैं बल्कि सांस्कृतिक और आर्थिक विकास के भी वाहक हैं।

मंदिर पर्यटन स्थानीय अर्थव्यवस्था को गति देता है, क्षेत्रीय पहचान को सशक्त बनाता है और पर्यावरण संरक्षण के प्रति सकारात्मक व्यवहार को प्रेरित कर सकता है। जब किसी स्थान पर बड़ी संख्या में पर्यटक आते हैं, तो वहां के छोटे व्यवसाय, हस्तशिल्प, परिवहन और आवास उद्योग को भी प्रोत्साहन मिलता है।

साथ ही, धार्मिक आस्थाओं के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण, स्वच्छता और सामूहिक जिम्मेदारी की भावना भी प्रबल होती है। इस प्रकार मंदिरों का प्रभाव केवल धार्मिक नहीं, बल्कि सामाजिक, आर्थिक और पारिस्थितिक भी है।

## मंदिरों का महत्व

### (क) सांस्कृतिक संरक्षण

मंदिर भारतीय कला, स्थापत्य और संस्कृति का भौतिक प्रतीक हैं। तीर्थ–यात्रा पर्यटन इनके संरक्षण और संवर्धन में सहायक होता है। भारत की पहचान इसकी सांस्कृतिक विविधता और परंपराओं में निहित है। मंदिर इस सांस्कृतिक धरोहर के जीवंत प्रतीक हैं। उनके स्थापत्य में प्रयुक्त पत्थर, मूर्तिकला, भित्ति चित्र और शिलालेख इतिहास के साक्ष्य हैं।

तीर्थयात्रा और धार्मिक पर्यटन से इन मंदिरों के संरक्षण के लिए धन और जनसहभागिता मिलती है। कई मंदिर समितियाँ अब अपने परिसर में संग्रहालय और सांस्कृतिक केंद्र भी स्थापित कर रही हैं, जो स्थानीय कला और विरासत को आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचाने में मदद करते हैं।

### (ख) आस्था और परंपरा

धार्मिक पर्यटन स्थानीय परंपराओं और सामाजिक मूल्यों को बनाए रखने में मदद करता है। मंदिर मानव जीवन में आध्यात्मिक शांति और सामाजिक अनुशासन का केंद्र माने जाते हैं। धार्मिक पर्यटन लोगों को न केवल आस्था से जोड़ता है, बल्कि एक साझा सांस्कृतिक पहचान भी प्रदान करता है।

त्योहारों, मेलों और धार्मिक आयोजनों के माध्यम से समाज में एकता और सद्भाव की भावना बढ़ती है। इस प्रकार मंदिर परंपरा और आधुनिकता के बीच एक सेतु का कार्य करते हैं।

### (ग) स्थानीय अर्थव्यवस्था

मंदिरों से जुड़े पर्यटन से स्थानीय लोगों को रोजगार मिलता है और क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था को मजबूती मिलती है। तीर्थ स्थलों पर होटल, भोजनालय, परिवहन, स्मृति–चिह्न दुकानों और गाइड सेवाओं जैसे अनेक क्षेत्र विकसित होते हैं।

उदाहरणस्वरूप, वाराणसी, तिरुपति, पुरी और उज्जैन जैसे धार्मिक केंद्रों में मंदिर पर्यटन से हजारों लोगों को रोजगार मिलता है। यह ग्रामीण क्षेत्रों में स्वरोजगार को भी बढ़ावा देता है और महिलाओं को लघु उद्योगों से जोड़ने का अवसर प्रदान करता है।

### (घ) सांस्कृतिक पहचान

मंदिर किसी समुदाय की सांस्कृतिक पहचान को जीवित रखते हैं और सामाजिक एकता को प्रोत्साहित करते हैं। हर क्षेत्र का कोई न कोई प्रमुख मंदिर उसकी पहचान बन जाता है। यह न केवल धार्मिक महत्व रखता है, बल्कि उस समाज की भाषाई, कलात्मक और ऐतिहासिक विशेषताओं को भी प्रदर्शित करता है।

मंदिरों से जुड़ी लोककथाएँ, उत्सव और परंपराएँ समाज की जड़ों को जीवित रखती हैं। इस प्रकार मंदिर केवल ईश्वर के प्रति भक्ति का नहीं, बल्कि संस्कृति के संरक्षण का भी प्रतीक हैं।

**मंदिरों का प्रभाव**

**i) पर्यटन पर प्रभाव**

मंदिर पर्यटन भारत के पर्यटन उद्योग की रीढ़ है। हर वर्ष लाखों देशी–विदेशी पर्यटक धार्मिक स्थलों की यात्रा करते हैं, जिससे पर्यटन क्षेत्र को बड़ा आर्थिक लाभ होता है।

* **पर्यटन स्थल के रूप में महत्वः** मंदिरों की आध्यात्मिक और स्थापत्य विशेषताएँ देश–विदेश के लाखों पर्यटकों को आकर्षित करती हैं। अनेक लोग इसे आत्मिक अनुभव या सांस्कृतिक अध्ययन के रूप में भी देखते हैं।

* **आर्थिक योगदानः** पर्यटक स्थानीय सेवाओं, आवास, भोजन और वस्तुओं पर खर्च करते हैं, जिससे क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था को लाभ होता है। इससे स्थानीय राजस्व बढ़ता है और आसपास का बाजार सशक्त होता है।

* **रोजगार सृजनः** तीर्थ–गाइड, होटल–रेस्टोरेंट, परिवहन और हस्तशिल्प से जुड़े अनेक प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रोजगार उत्पन्न होते हैं। होटल व्यवसाय, ट्रैवल एजेंसी, धार्मिक वस्त्र, मूर्तिकला, और फूलमालाओं जैसी सेवाएँ हजारों लोगों की आजीविका बनती हैं।

**ii) संस्कृति पर प्रभाव**

* **सांस्कृतिक विरासत का संरक्षणः** मंदिर भारतीय संस्कृति, धर्म और परंपराओं के वाहक हैं। मंदिरों की पूजा–पद्धति, संगीत, नृत्य, लोककला और परंपराएँ भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग हैं। पर्यटक जब इनसे जुड़ते हैं, तो सांस्तिक आदान–प्रदान भी होता है।

* **धार्मिक महत्वः** मंदिर स्थानीय समाज में आध्यात्मिक चेतना और सामाजिक एकता को बढ़ावा देते हैं। मंदिर श्रद्धालुओं के लिए केवल आस्था का केंद्र नहीं, बल्कि आत्मचिंतन और नैतिक शिक्षण का स्थान भी हैं।

* **सांस्कृतिक केंद्रः** मंदिर केवल पूजा–स्थल नहीं बल्कि त्योहारों, उत्सवों और सामाजिक संवाद के केंद्र भी होते हैं। मंदिरों के प्रांगण में संगीत समारोह, नृत्य उत्सव और सांस्कृतिक मेलों का आयोजन होता है। इससे युवा पीढ़ी में पारंपरिक कलाओं के प्रति सम्मान की भावना पैदा होती है और संस्कृति जीवंत बनी रहती है।

**iii) पर्यावरणीय स्थिरता पर प्रभाव**

**(क) नकारात्मक प्रभावः**

अनियंत्रित पर्यटन से मंदिरों के आस–पास पर्यावरणीय असंतुलन उत्पन्न हो सकता है।

* **प्रदूषणः** बड़ी संख्या में आने वाले पर्यटकों से जल, ध्वनि और ठोस अपशिष्ट प्रदूषण की समस्या बढ़ती है।

* **संसाधनों पर दबावः** जल और ऊर्जा जैसे संसाधनों की खपत बढ़ती है, जिससे स्थानीय पारिस्थितिकी पर बोझ पड़ता है।

* **पर्यावरणीय क्षरण:** पेड़ों की कटाई, वन्यजीवों का पलायन और प्राकृतिक आवासों का नुकसान देखा जा सकता है।

**(ख) सकारात्मक प्रभाव:**

यदि मंदिरों के आस–पास का क्षेत्र सुव्यवस्थित रूप से प्रबंधित किया जाए तो यह पर्यावरणीय स्थिरता का उदाहरण बन सकता है।

* **पर्यावरण संरक्षण:** कुछ मंदिरों के साथ जुड़े प्राकृतिक परिसर जैव–विविधता और हरियाली को संरक्षित करते हैं। अनेक मंदिर अपने परिसर में वृक्षारोपण, स्वच्छता और अपशिष्ट प्रबंधन को बढ़ावा देते हैं। कुछ मंदिरों ने "प्लास्टिक–मुक्त क्षेत्र" जैसी पहलें शुरू की हैं।

* **जागरूकता:** धार्मिक शिक्षा और आध्यात्मिकता के माध्यम से पर्यावरणीय जागरूकता फैलती है, जिससे लोग स्थायी पर्यटन व्यवहार अपनाते हैं। "स्वच्छ मंदिर.स्वस्थ पर्यावरण" जैसे अभियानों ने कई स्थानों पर सकारात्मक परिणाम दिए हैं।

**प्रबंधन और संरक्षण**

मंदिर प्रबंधन और स्थानीय प्रशासन को पर्यावरण–अनुकूल नीतियाँ अपनानी चाहिए – जैसे अपशिष्ट प्रबंधन, जल–संरक्षण, ऊर्जा–कुशल व्यवस्था और जन–जागरूकता अभियान। इन कदमों से पर्यटन के नकारात्मक प्रभावों को कम किया जा सकता है।

मंदिर प्रशासन और स्थानीय शासन को मिलकर ऐसे कदम उठाने चाहिए जो धार्मिक पर्यटन को सतत और जिम्मेदार बनाएँ। स्थानीय लोगों को प्रशिक्षण देकर उन्हें "हरित पर्यटन" की अवधारणा से जोड़ना भी आवश्यक है, ताकि वे स्वयं इस प्रक्रिया के भागीदार बन सकें।

**सतत विकास के लिए संतुलन**

* **सतत विकास:**

स्थानीय समुदायों के सहयोग से ऐसी योजनाएँ बनाई जानी चाहिए जो पर्यटन के साथ पर्यावरणीय संरक्षण भी सुनिश्चित करें। स्थायी विकास का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि धार्मिक पर्यटन से आर्थिक लाभ के साथ–साथ प्रकृति और संस्कृति दोनों की रक्षा हो। इसके लिए स्थानीय समुदायों को नीति–निर्माण में शामिल करना चाहिए।

* **योजना और प्रबंधन:**

सांस्कृतिक और प्राकृतिक संसाधनों के संतुलित उपयोग के लिए समेकित नीति और प्रबंधन आवश्यक है। पारंपरिक निर्माण तकनीकों और स्थानीय सामग्री के उपयोग से मंदिरों की मरम्मत अधिक पर्यावरण–अनुकूल बन सकती है।

* **वहन क्षमता का महत्व:**

पर्यटन स्थलों पर पर्यटकों की संख्या उनकी वहन–क्षमता के अनुसार सीमित होनी चाहिए ताकि पर्यावरण और अधोसंरचना पर अतिरिक्त दबाव न पड़े। हर तीर्थस्थल

की वहन क्षमता निर्धारित करनी चाहिए – यानी एक समय में कितने पर्यटक उस स्थान की संरचना और पर्यावरण को प्रभावित किए बिना आ सकते हैं।

**निष्कर्ष**

पर्यटन, संस्कृति और पर्यावरणीय स्थिरता के बीच गहरा और जटिल संबंध है। जहाँ यह आस्था और अर्थव्यवस्था दोनों को सुदृढ़ करता है, वहीं इसकी अनियंत्रित वृद्धि पर्यावरण और संस्कृति के लिए खतरा बन सकती है। समाधान जिम्मेदार पर्यटन में है – ऐसा पर्यटन जो श्रद्धा, संवेदना और संरक्षण तीनों को समान महत्व देता है। सतत विकास के लिए आवश्यक है कि सरकार, स्थानीय समुदाय, व्यवसाय और पर्यटक मिलकर कार्य करें, ताकि सांस्कृतिक विरासत, पर्यावरण संरक्षण और आर्थिक लाभ – तीनों के बीच एक स्वस्थ संतुलन बना रहे।

अंततः, मंदिर केवल ईश्वर के प्रति समर्पण का नहीं बल्कि पृथ्वी और प्रकृति के प्रति जिम्मेदारी का भी प्रतीक होने चाहिए।

## संदर्भ सूची

*[1] K. A. Shinde and D. H. Olsen, "Reframing the Intersections of Pilgrimage, Religious Tourism and Sustainability," Sustainability, vol- 15, no- 1, p- 461, Jan- 2023. [Online]. Available: https://doi-org/10-3390/su15010461*

*[2] D. Iliev, "Analyzing an Impact of Temple Economics on GDP and Creating an Enabling Environment for Temple&Tourism in India," Int. J.Finance Manag. Res., vol- 4, no- 4, Apr. 2024. [Online]. Available: https://www-ijfmr-com/papers/2024/4/26190-pdf*

*[3] S. Padmanabhan Bachav, Religious Tourism: A Road Map for Sustainable Development. Mumbai, India: Excel Publication, 2016. [Online]. Available: https://excelpublication-com/wp&content/uploads/2016/03/Prof&Shreekala&Padmanabhan&Bachav.pdf*

*[4] R. Sharma and A. Singh, "A Study on Impacts of Pilgrimage Tourism with Respect to Annavaram Satya Narayana Swamy Temple in Andhra Pradesh," Heritage: J. Multidiscip. Stud. Archaeol., vol- 6, pp- 1126-1133, 2018. [Online]. Available: https://www-heritageuniversityofkerala-com/JournalPDF/Volume6/62.pdf*

*[5] I. Arbulú, et al., "Pro&Environmental Behavior of Religious Tourists: Moderating Role of Perceived Value and Moral Obligation," J. Sustain. Tour., vol- 31, no- 4, pp- 820-838, 2023. [Online]. Available: https://doi-org/10-1177/19389655231182090*



वर्ष–13 अंक–3–4, जुलाई–दिसंबर 2023 ISSN : 0976-2671

# अनुचिन्तन
# विमर्श

A Multidisciplinary
Peer Reviewed
Refereed
Journal

## GUIDELINES FOR THE SUBMISSION OF RESEARCH PAPER/MANUSCRIPT

1. Article must be original and not published anywhere in any form (full/part).
2. Membership: Each and every Author must be the member of the Journal.
3. Script: All the Manuscript (Paper) should be sent by E-mail to the Editor (anilthakurkhagaria@gmail.com) for its publication in **Kruti Dev 010**, **Font-12**, and **Space-14.4** in Sentence case and a hard copy by post/courier along with CD.
4. Number: Only one paper of any Author will be published (in each issue).
5. Length: Minimum-2 and maximum 5-6 pages.
6. Title: It should not exceed more than 2(two) lines. (Bold in CAPITAL Letters).
7. Author(s): Minimum 1 (one) and maximum 5 (Five) Authors (only in exceptional case) will be permissible in a paper along with full address (Designation, Dept., College/University and State) with E-mail and Contact number.
8. Article: Article must contain an Abstract (not more than 100 words, in italic form).
9. Key words: Minimum 4 and maximum 10 key words (italic form) are required.
10. Introduction: Not more than 250 words.
11. Materials and Methods: Not more than 250 words.
12. Results & Discussion: Not more than 300 words.
13. Table/Graph/Chart/Figure: Not more than 2(two).
14. Conclusion: Not more than 150 words.
15. Acknowledgements: Not more than 50 words.
16. References: Not more than 10 in number in alphabetical series or according to number which must be depicted in the text like-1,2,3,4.....containing Author (s) name, Year, Title, Book, Journal, Volume, Page number. Please never write the Websites/Google/ Google scholar/ Face book/ E-mails/Links/ Ibid/Do So etc.

**Note: It is mandatory to follow all the above mentioned instruction, failing which the Manuscript/Article/Research paper will automatically be rejected. No any argument will be entertained.**

All the comments and suggestions are most welcome for the betterment of the Journal.

## प्रधान संपादक की कलम से...

कोरोना नाम की महामारी को विदा हुए लगभग दो साल हो रहे हैं। ये मुसीबत अकस्मात् ऐसे सामने आई कि लोगों को समझने– संभलने का अवसर ही नहीं मिल पाया। डब्ल्यू एच ओ भी अचानक आए इस बला को नहीं समझ पाए क्योंकि यह नया वायरस था और इस संस्था को अपना प्लान तैयार करने में वक्त लगा। न केवल भारत अपितु जहां– जहां इस आपदा ने पांव पसारा; वे सभी मुल्क इससे निपटने की तैयारी में जी– जान से जुट गए थें।

दरअसल हम लोग अपनी संस्कृति को भूलते चले जा रहे हैं। भेड़चाल का शिकार होकर पाश्चात्य सभ्यता को अपनाते चल रहे हैं। इसलिए रह– रहकर प्रकृति और परमात्मा हमें सचेत करती है; ऐसी महामारियों का प्रकोप दिखाकर। प्राकृतिक आपदाएं स्वयं नहीं आती; हमारी ही गल्तियॉं और भूल इन्हें आमंत्रित करती हैं। हमें न तो साफ– सफाई का ख्याल है, न परंपराओं का, न ही खान– पान का। हर महामारी में साफ– सफाई की तरफ ध्यान रखना पहला सबक है। विश्व स्वास्थ संगठन, चिकित्सक, आयुर्वेदाचार्य और वैज्ञानिक भी बार– बार हाथ धोने और नाक मुंह को मास्क से ढ़के रखने की अपील करते रहे। दूसरा महत्वपूर्ण बिंदु है श्रेष्ठ परंपराएँ.....हमारे देश की श्रेष्ठ परंपराएं हमें अनेक रोगों से बचाती हैं। जिन विकसित देशों को अब तक स्वयं के ज्ञान और अपनी परंपराओं पर बहुत अधिक गुमान रहा है; आज वे अपनी परंपराओं को बदल रहे हैं और भारत के नक्शेकदम पर चलकर जिंदगी की हारती बाजी को जीतने का प्रयास कर रहे हैं। जैसे भारत में विशेषकर हिंदू– सिक्ख संस्कृति में शवों को जलाने की सदियों पुरानी परंपरा है किंतु इटली, चीन, इंग्लैंड, जापान, अमेरिका जैसे विकसित देशों में शवों को दफनाने की परंपरा है। विदित हो कि इन राष्ट्रों में विज्ञान के बड़े– बड़े अविष्कार हो चुके हैं। पर जबसे कोरोना महामारी का भय व्याप्त हुआ; ये देश समझ गए कि मृतक के देंह में हुए भयानक कोरोना वायरस के हमले को आग में जलाकर ही आगे फैलने से रोका जा सकता है। और इसलिए तबसे वहां शवों को जलाया जा रहा है और तीसरा महत्वपूर्ण बिंदु है खान– पान। हमारे यहां 'सादा भोजन उच्च विचार' के सिद्धांत का परिपालन किया जाता है। अधिकांश जातियां शाकाहारी आहार लेती हैं। चूल्हें में भोजन पकाकर ताजा ताजा, गर्मागम सब लोग मिल– बैठकर खाते हैं जबकि सभ्य कहे जाने वाले देशों के लोग मांसाहारी हैं यानि 'सी– फूड' के शौकीन हैं। हम स्वयं की दिनचर्या और आसपास के पर्यावरण को बदलें। तभी प्राकृतिक आपदाओं से लड़ पाएंगे। जिंदगी कभी किसी की आसान नहीं होती इसे आसान बनाना पड़ता है। कुछ नजरअंदाज करके, कुछ बर्दाश्त करके, कुछ मेहनत करके तो कुछ सहीं समय पर सहीं फैसला लेकर।

**प्रो. (डॉ.) अनुसुइया अग्रवाल, डी. लिट्.**

## SUBSCRIPTION ORDER FORM

Affix Photograph

**Bihar Research Journal ISSN 0975-4288**
**Bihar Ka Aarthik Paridrishya ISSN- 0974-9969**
**Anuchintan Vimarsh ISSN-0976-2671**

1. **Name : (In Block Letters) :**_____
2. **Address :**_____
   **Tel/Mobile No.**_____ **Email :**_____
3. **Type of Subscription : Individual/Institution**
4. **Period of Subscription : Biennial / Life**
5. **DD No.**_____ **Date :**_____
   **Bank**_____ **Amount :**_____
6. **Number of copies Subscribed :**_____

**Dear Chief Editor/Editor,**

**Kindly acknowledge the receipt of my subscription and start sending the issue (s) of** _____ **at my address :**

**The subscription rates of the journal (each) are :-**

| | | |
|---|---|---|
| **Enrollment fee :** | **Rs.** | **100/-** |
| **Membership (Individual) :** | | |
| **Biennial** | **Rs.** | **2,500/-** |
| **Life** | **Rs.** | **7,000/-** |
| **Institution/Organisation (Life)** | **Rs.** | **15,000/-** |
| **Biennial** | **Rs.** | **5,000/-** |

**Your Sincerely**

**Place :** **Signature**

**Date :** **Name :**

**Note :- Subscribers are requested to send Draft in favour of "BIHAR RESEARCH JOURNAL" P.N.B., Khagaria. A/c NO.- 4931000100011864/ "BIHAR KA AARTHIK PARIDRISHYA" P.N.B., Khagaria. A/c NO.- 4931000100011873/ ANUCHINTAN FOUNDATION A/c P.N.B., Khagaria. NO.- 4931000100011855**

**IFS- Code- PUNB0493100**


**ADDRESS**

**Editor : Dr. Anil Thakur, Champanagar (Near Rose Bud School),**
**Po.- Sanhauli, Distt.- Khagaria (Bihar)- 851205**

**Mob. : 9113396008, Email : anilthakurkhagaria@gmail.com**

# विषय सूची

**अनुचिन्तन विमर्श,**
**वर्ष–13, अंक–3–4, जुलाई–दिसंबर 2023** **ISSN: 0976-2671**

1. सामाजिक, सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक विकास में सार्वजनिक ग्रंथालय की भूमिका : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन
**6/ *सुमन कुमारी **शेष मिश्रा**

2. पर्यावरण और जीवन दर्शन : एक अनुशीलन
**17 / ईश्वर चन्द**

3. पर्यावरण एवं जल–जीवन–हरियाली अभियान : बिहार के संदर्भ में एक अध्ययन
**25 / गीतांजली भारती**

4. भारतीय संस्कृति : देवघर की एक सांस्कृतिक झलक
**34 / अपर्णा झा**

5. मानव – स्वधर्म : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन
**40 / मिथिलेश कुमार**

6. पर्यावरण संरक्षण एवं सतत् विकास : एक अर्थशास्त्रीय विवेचन
**44 / राजीव रंजन**

7. खगड़िया की लोक संस्कृति और भाषा (ठेठ हिन्दी)
**48 / रोशन रवि**

8. बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिरः एक सांस्कृतिक विश्लेषण
**56 / परिणीता कुमारी**

9. संताल परगना में वाणिज्य एवं व्यापार के संभावनाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन
**62 / आशीष कुमार केशरी**

10. सरकारी स्वास्थ्य संबंधी संरचनाएँ एवं कार्यक्रमों का विश्लेषणात्मक अध्ययन
**69 / चन्दन कुमार चौधरी**

**ISSN- 0976-2671**
अनुचिंतन विमर्श, वर्ष–13, अंक–03 – 04, जुलाई – दिसंबर 2023

# बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिरः एक सांस्कृतिक विश्लेषण

**परिणीता कुमारी**
शोधार्थी, इतिहास विभाग, पी. के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी
*Email:parinitasinha4287@gmail.com*

***सारांश***

*संस्कृति के निर्माण और संरक्षण में मंदिरों की महत्ती भूमिका रही है। यदि हम भारत की बात करें तो भारतीय समाज में सांस्कृतिक मूल्यों के निर्माण में मंदिरों की भूमिका मानव शरीर एवं सांस के जैसा रही है। भारतीय मंदिरों में संगीत कला, नृत्य कला, आर्युवेद, युद्ध कला, वास्तु कला, शिल्प कला एवं मुर्ति कला आदि का संरक्षण एवं विकास होते रहा है। प्राचीन काल मे तो मंदिरों में ऋषि – महात्मा गुरूकुल आश्रम चलाते थे जहां पुजा–पाठ, मंत्र साधना एवं उपासना के साथ – साथ भारतीय ज्ञान परंपरा एवं संस्कृति का भी पोषण एवं संरक्षण होता था। उन्हीं मंदिरों में बाबा बैद्यनाथधाम का भी एक मंदिर है जिसका भारतीय संस्कृति के विकास एवं पोषण में अहम भूमिका रही है।*

**शब्द कुंजी** : भारतीय संस्कृति, भारतीय ज्ञान परंपरा, रीति–रिवाज, धर्म दर्शन, मानव मूल्य

**परिचयः** भारतीय संस्कृति केवल परंपरा, रीति–रिवाज, आचार–व्यवहार, रहन–सहन, उत्सव–धर्म मात्र नहीं है बल्कि मानवीय मूल्यों, मानवता और भारतीयता का पर्याय भी है। संस्कृति किसी भी राष्ट्र की जाति अथवा राष्ट्र के शिष्ट समुदाय में विचार, वाणी, आचार–व्यवहार और क्रिया का व्याप्त रूप है। यह सृजनात्मक आचरणगत पहचान है। बुद्धि और सौंदर्य संस्कृति के मुख्य तत्व हैं किंतु मानवता इसकी आत्मा है। संस्कृति का संबंध धर्म–दर्शन से लेकर रीति–रिवाजों, रहन – सहन, आचार – विचार, ज्ञान–विज्ञान, जीवन–पद्धति, कला – मूल्य तथा मानवता से है। संस्कृति मानव – प्रेम, सेवा–समर्पण, त्याग एवं बलिदान का पूँजीभूत रूप भी है। क्रोबर के मत में संस्कृति एक व्यवस्था है जिसमें हम जीवन के अनेक प्रतिमानों, व्यवहार के तरीकों, भौतिक – अभौतिक प्रतीकों, परंपराओं, विचारों, सामाजिक मूल्यों, मानवीय क्रियाओं तथा आविश्कारों को सम्मिलित करते हैं – कल्चरः ए कल्चरल रिव्यू ऑफ कांसेप्टस एंड डिफिनेशनस, (पेज 133)। संस्कृति एक जटिल संपूर्णता है जिसमें उन सभी विशेषताओं का समावेश होता है जिन पर हम विचार करते हैं, कार्य करते हैं और समाज के सदस्य होने के नाते उन्हें अपने

पास रखते हैं एवं आचरण में प्रदर्शित भी करते हैं। कहने का अर्थ यह है कि मनुष्य एक ऐसे सामाजिक प्राणी के रूप में विचार विकसित करते हैं, व्यवहार के लिए नियम बनाते हैं, आविष्कार करते हैं व्यवहार में लाते हैं जो स्वंय के लिए होते हैं, समवेत रूप में संस्कृति कहलाता है।

देवघर बैद्यनाथधाम के नाम से प्रसिद्ध ऐतिहासिक शहर है। यह झारखंड की सांस्कृतिक राजधानी कहलाता है। यहाँ के लोग अनेक संस्कृति, भाषा एवं धर्म के हैं। यह शहर प्राचीन समय से पवित्र तीर्थ स्थल माना जाता है। इस शहर में बिहार, बंगाल एवं अन्य क्षेत्र के लोग निवास करते हैं। यहाँ गुजराती, पंजाबी मारबारी एवं राजस्थानी लोग भी लंबे समय से रहते आए हैं। शहर के स्थानीय लोग अंगिका एवं संथाली भी बोलते हैं। ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले अधिकांश लोग खोरठा बोलते हैं। खोरठा, अंगिका, संथाली इत्यादि को झारखंड सरकार द्वारा प्रतियोगी परीक्षा में भी शामिल कर लिया गया हैं। जनगणना रिपोर्ट 2011 के अनुसार देवघर जिला की भाषा को निम्न तालिका से स्पष्ट किया जा सकता है।

**तालिका संख्या 2.17**

**देवघर जिला में बोली जाने वाली भाषा**

| भाषा | बोलने वाले लोगों की संख्या (प्रतिशत में) |
|---|---|
| खोरठा | 65.39 |
| हिन्दी | 13.92 |
| संथाली | 9.83 |
| उर्दू | 6.71 |
| बंगाली | 2.19 |
| अन्य | 1.96 |

**स्रोतः** जनगणना रिपोर्ट 2011

उपर्युक्त तालिका संख्या 2.17 से स्पष्ट है कि देवघर जिला के मुख्य भाषा खोरठा है जबकि यहाँ बंगाली इत्यादि भी बोली जाती है।

**पर्व एवं त्योहार**

पर्व त्योहार हमारी संस्कृति का एक अहम हिस्सा है। देवघर जिला में लंबे समय से विभिन्न धर्म, संप्रदाय एवं पंथ के लोग रहते आ रहे हैं। ये लोग अपने– अपने तरीके से पर्व त्योहार मनाते हैं। बड़े पैमाने पर यहाँ के हिन्दू लोग दीपावली, होली, छठ, दशहरा, रामनवमी, कर्मा आदि त्योहार मनाते हैं। संथाली जो सरणा मानते हैं, ये लोग परंपरागत तरीके से कर्मा, सरहुल, सोहराय आदि पर्व धूम–धाम से मनाते हैं। जिले में सरस्वती पूजा,

मकर संक्रांति, जितिया, नवान्न आदि पर्व धूम–धाम से मनाए जाते हैं। जो लोग मशीन, इंजीनियरिंग आदि से जुड़े हुए रहते हैं वे विश्वकर्मा पूजा को मनाते है। मुस्लिम लोग ईद, बकरीद, सबे बरात, मुहर्रम आदि पर्व मनाते हैं। रामनवमी और तजिया दोनों यहाँ शांतिपूर्वक मनाए जाते हैं।

**इस शहर का पवित्र आकर्षण स्थल हैः–**

**1.बैद्यनाथ धामः** बाबा बैद्यनाथ मंदिर परिसर में 12 अन्य मंदिरों के साथ साथ एक ज्योतिर्लिंग है। भारत में झारखंड राज्य के संताल परगना डिवीजन में देवघर में स्थित, इस बड़े मंदिर परिसर में बाबा बैद्यनाथ का मुख्य मंदिर है, जहां 12 अन्य मंदिरों के साथ ज्योतिर्लिंग स्थापित उद्धरण वांछित, मंदिर का उल्लेख कई प्राचीन शास्त्रों में किया गया है तथा आधुनिक इतिहास की किताबों में भी इसका उल्लेख मिलता है। इस ज्योतिर्लिंग की उत्पत्ति की कहानी भगवान राम के युग में त्रेता युग की है। लोकप्रिय हिंदू मान्यताओं के अनुसार, लंका के राजा रावण घायल हो गए थे और उन्होंने शिव की पूजा की थी जहां वर्तमान में मंदिर अवस्थित है। रावण ने भगवान शिव को बलि के रूप में एक के बाद एक अपने दस सिर चढ़ाए। इस .त्य से प्रसन्न होकर भगवान शिव रावण को ठीक करने के लिए पृथ्वी पर अवतरित हुए। चूंकि शिव ने एक चिकित्सक के रूप में काम किया था, इसलिए उन्हें वैद्य कहा जाता है, और भगवान शिव के इस कार्य से ही मंदिर का नाम पड़ा है।

**2. तपोवन गुफाएँ और पहाड़ियाँः** गुफाओं एवं पहाड़ियों की यह श्रृंखला देवघर से 10 किमी दूर स्थित है तथा इसमें तपोनाथ महादेव नामक शिव का एक मंदिर है । गुफाओं में एक शिव लिंग स्थापित है, जिसके बारे में कहा जाता है कि ऋषि वाल्मीकि यहां तपस्या के लिए आए थे।

**3. नौलखा मंदिरः** यह 146 फीट ऊंचे मुख्य मंदिर से 1.5 किमी की दूरी पर स्थित एक खास मंदिर है। यह बेलूर में राम.ष्ण के मंदिर के समान है एवं यह राधा–.ष्ण को समर्पित है। इसके निर्माण लागत 9 लाख रुपये होने के कारण इसे नौलखा मंदिर के नाम से जाना जाता है।

**4. सत्संग नगर** – सत्संग नगर बैद्यनाथ धाम शहर का एक हिस्सा है, जिसमें सत्संग ठाकुरबाड़ी, देवघर शामिल है। यह वह पवित्र स्थल है जहाँ श्री श्री ठाकुर अनुकुलचंद्र जी महाराज ने अपना जीवन व्यतीत किया था। यहाँ के ठाकुर परिवार से मिलने के लिए कई भक्त हर रोज आते हैं । यह सत्संग क्रांति का केंद्र और इस आंदोलन का मुख्य केंद्र भी है। आश्रम में कई भक्त स्थायी रूप से मूल निवासी के रूप में रहते हैं।

**5. सावन मेलाः** श्रावण मास में बाबाधाम का महत्व और अधिक बढ़ जाता है। इस दौरान बाबा बैद्यनाथ मंदिर में भक्तों की भीड़ उमड़ती है। ज्यादातर पर्यटक सबसे पहले सुल्तानगंज जाते हैं, जो बाबाधाम से 109 किमी दूर है। सुल्तानगंज में गंगा उत्तर की

तरफ बहती है। भक्त अपने कांवड़ में नदी से जल भरते हैं तथा रास्ते में बोल बम का नारा लगााते हुए बाबाधाम में बाबा बैद्यनाथ मंदिर तक 109 किमी पैदल चलकर जाते हैं। बाबाधाम पहुंचने पर, कांवड़ियां सर्व प्रथम शिवगंगा में डुबकी लगाकर खुद को शुद्ध करते हैं और फिर बाबा बैद्यनाथ मंदिर में प्रवेश करते हैं, जहां ज्योतिर्लिंग को गंगा जल चढ़ाया जाता है। यह तीर्थयात्रा पूरे श्रावण के दौरान जुलाई–अगस्त से 30 दिनों तक चलती रहती है। यह दुनिया का सर्वाधिक लंबा धार्मिक मेला है। सुल्तानगंज से बाबाधाम के बीच पुरे रास्ते भगवाधारी तीर्थयात्रियों की 109 किमी लंबी मानव श्रृंखला सा बना रहता है। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि श्रावण के दौरान लगभग 5.0 से 5.5 मिलियन तीर्थयात्री बाबाधाम आते हैं। श्रावण के महान तीर्थ के अलावा, लगभग पूरे वर्ष मार्च में शिवरात्रि, जनवरी में बसंत पंचमी, सितंबर में भाद्र पूर्णिमा के साथ अच्छी खासी भीड़ रहती है। इसके अलावा, यहां के रिखिया आश्रम अपने ध्यान शिविर के लिए प्रसिद्ध है। संत बालानंद ब्रह्मचारी के रामनिवास आश्रम, मोहनंद स्वामी के मोहन मंदिर, स्वामी हंसदेव अवधूत के कैलाश पहाड़ आश्रम आदि प्रसिद्ध है।

**6. बैजू मंदिरः** बाबा बैद्यनाथ मंदिर परिसर के पश्चिम तथा देवघर शहर के मुख्य बाजार में एक और मंदिर भी हैं, जिन्हें बैजू मंदिर के नाम से जाना जाता है। इसके अतिरिक्त कई मंदिरों का निर्माण बाबा बैद्यनाथ मंदिर के मुख्य पुजारी के वंशजों ने करवाया था और प्रत्येक मंदिर में भगवान शिव का लिंग स्थापित है।

**7. त्रिकुट पर्वतः** देवघर से लगभग 16 किमी. दूर दुमका रोड पर एक खूबसूरत पर्वत त्रिकूट स्थित है। इस पहाड़ पर बहुत सारी गुफाएं एवं झरनें है। बैद्यनाथ धाम से बासुकीनाथ मंदिर की ओर जाने वाले श्रद्धालु मंदिरों से सजे इस पर्वत पर रुकना बहुत पसंद करते हैं।

**8. नंदन पहाड़:** नंदन पर्वत की महत्ता यहां बने मंदिरों के झुंड के कारण है, जो विभिन्न भगवानों को समर्पित हैं। पहाड़ की चोटी पर एक सुंदर कुंड भी है जहां लोग पिकनिक मनाने आते रहते हैं।

**9. आनंद भैरव मंदिर** : यह मंदिर बाबा बैद्यनाथ मंदिर के प्रांगण में अवस्थित है। इस मंदिर का निर्माण 1782 में रामदत्त ओझा ने शुरू किया जिसे 1810 एवं 1823 के मध्य आनंददत्त ओझा एवं सर्वानंद ओझा ने पुरा किया। यह मंदिर मुख्य मंदिर के पश्चिम एवं उत्तर कोने में स्थिति है। आनंद भैरव मंदिर की बनावट बांकी अन्य मंदिरों से अलग है। इस मंदिर के मुख्य शिखर की लंबाई लगभग 40 फीट और चौराई 30 फीट है। आनंद भैरव के शिखर पर ताम्बे का कलश है और उसपर पंचशूल भी लगा है।

**10. माँ तारा मंदिर** : यह मंदिर बाबा बैद्यनाथ मंदिर के प्रांगण में अवस्थित है। इसका निर्माण लगभग 1930 ई0 से 1935 ई0 में पुर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री भवप्रीतानंद ओझा ने कराया। इस मंदिर का निर्माण मंदिर परिसर में सबसे अंतिम निर्माण है। इस

मंदिर की बनावट अन्य मंदिरों से अलग है। यह मुख्य मंदिर के उत्तर की ओर है और बाबा के निकास द्वार के ठीक सामने है।

**11. माँ काली मंदिर** : माँ काली मंदिर का निर्माण पुर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री जयनारायण ओझा ने 1712 ई0 में कराया था। यहां मां की तांत्रिक विधि से पुजा की जाती है। इस मंदिर में शिव के साथ शक्ति दोनों एक साथ पुजा का महत्व है। मां काली की प्रतिमा तीन ओर ताम्बा की ग्रील से घिरा हुआ है। जिससे मां की पुजा करने के लिए भक्त बाईं ओर से पुजा करते हुए दाईं ओर से बाहर निकलते है।

**12. दुर्गा मंडप** : दुर्गा मंडप में वेदी पर मां शक्ति की पुजा की जाती है। इस मंदिर का निर्माण लगभग 129 वर्ष पुर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री शैलजानंद ओझा ने कराया, इस मंडप की बनावट अन्य मंदिरों से अलग है। यह मुख्य मंदिर के उत्तर की ओर प्रशासनिक भवन के पास स्थित है। इस मंडप की लंबाई लगभग 20 फीट और चौड़ाई 40 फीट है। इस मंडप के शिखर पर बीच में भगवान गणेश की मनोहारी मुर्ति एवं दो शेर की आकृति बनी है। इस मंडप के उपर पंचशूल नहीं लगा है।

इन सबके अतिरिक्त मंदिर प्रांगण में त्रिपुर सुंदरी मंदिर है। जहां तांत्रिक विधि से पुजा की जाती है। इस मंदिर का निर्माण 1877 से 1901 ई0 के बीच पुर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री शैलजानंद ओझा ने कराया था। मंदिर प्रांगण में ही मां गंगा का मंदिर है। इस मंदिर का निर्माण 19वीं सदी में भवप्रिता नंद ओझा ने कराया था। प्रांगण में हीं राम, सीता, लक्ष्मण मंदिर है। इस मंदिर का निर्माण पूर्ण सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री रामदत्त ओझा ने 1782 से 1792 के मध्य कराया था। प्रांगण में ही सूर्यनारायण मंदिर है जिसका निर्माण 1782 से 1793 के बीच पूर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री रामदत्त ओझा ने कराया था। प्रांगण में माता बगलामुखी का मंदिर है जिसका निर्माण 1793 ई0 में पूर्व सरदार पंडा स्वर्गीय श्री श्री रामदत्त ओझा ने करवाया था। इस तरह बाबा बैद्यनाथ मंदिर प्रांगण में बाबा बैद्यथान ज्योर्तिलींग, मां पार्वती सहित विभिन्न देवि देवताओं के कुल 22 मंदिर अवस्थित है। सभी मंदिरों का अपना अपना पौराणिक इतिहास व सांस्कृतिक महत्व है।

## निष्कर्ष

इस प्रकार इस शोधप्रत्र में हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि बाबा बैद्यनाथ धाम मंदिर भारत के प्राचीनतम मंदिरों में से एक मंदिर है जो झारखंड के देवघर में अवस्थित है। यह मंदिर भारतीय संस्कृति एवं ज्ञान परंपरा का जीता जागता उदाहरण है। यह आज भी न केवल कड़ोरों लोगों के आस्था का केन्द्र है बल्कि इससे जुड़े हुए अनेकों परंपराएं एवं रीति रिवाज संरक्षित है। वर्तमान समय में हो रहे लोगों में मुल्य ह्रास, तेजी से पनप रहे अपसंस्कृति आदि के अंधे दौड़ में यह मंदिर लोगों में आत्म विश्वास, मुल्य वृद्धि एवं भारतीय संस्कृति के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका में रहेगा।

## संदर्भ सूची

*1. Agarwal, Urmila. North Indian temple sculpture. New Delhi: Munshiram Manoharlal Publishers, 1995.*

*2. Kramrisch, Stella. The Hindu temple. Delhi: Motilal Banarsidass, 1996.*

*3. Nou, Jean-Louis. Hindu temples. London: Tricolour Books. Books from India., 1985.*

*4. Ramachandran, Nirmala. Hindu heritage. Pannipitiya: Stamford Lake Publication, 2000.*

*5. Sharma, J. C. Hindu temples in Vietnam. New Delhi: The Offsetters (Publication Division), 1997.*

6. पारिजात, शिवसंकर सिंह, लोक आस्था का महाकुंभ, श्रावणी मेला, युनिवर्सिटी प्रकाशन, 2019

7. विल्बपत्र, प्रभात खबर, दैनिक समाचार पत्र का विशेषांक, जुलाई 2023

8. श्री श्री बैद्यनाथ ज्योर्तिलिंग वाङ्मय, संपादक डॉ0 मोहनानंद मिश्र, हिन्दी विद्यापीठ प्रकाशन देवघर, झारखंड

वर्ष– 17, अंक– 02 जुलाई–दिसंबर 2025 ISSN: 0974–9969

# बिहार का आर्थिक परिदृश्य

A Multidisciplinary
Peer Reviewed
Refereed
Journal

# टूटते विश्वास और बिखरते रिश्तेः आधुनिकता के मध्य मूल्यों का पुनर्स्मरण

भारतीय समाज की संरचना का मूलाधार परिवार रहा है। परिवार केवल सहवास की इकाई नहीं, बल्कि विश्वास, संस्कार, अनुशासन और भावनात्मक सुरक्षा का केंद्र है। किंतु वर्तमान समय में "टूटते विश्वास और बिखरते रिश्ते" की समस्या गंभीर सामाजिक चिंतन और अकादमिक अनुसंधान का विषय बन चुकी है। माता–पिता और संतानों के बीच बढ़ती अविश्वास की खाई केवल पीढ़ियों के अंतर का परिणाम नहीं, बल्कि सामाजिक–आर्थिक परिवर्तनों और मूल्य–परिवर्तन की जटिल प्रक्रिया का दुष्परिणाम है।

भारतीय सांस्कृतिक परंपरा में पितृभक्ति और गुरुभक्ति सर्वोच्च आदर्श माने गए हैं। अयोध्या में श्री राम द्वारा पिता के वचन की मर्यादा की रक्षा हेतु चौदह वर्ष का वनवास स्वीकार करना त्याग, कर्तव्य और विश्वास का अनुपम उदाहरण है। इसी प्रकार आरुणि की गुरु के प्रति समर्पित श्रद्धा भारतीय शिक्षा–दर्शन में आज भी आदर्श मानी जाती है। ये प्रसंग संकेत देते हैं कि परिवार और गुरु–शिष्य संबंध विश्वास और कर्तव्य पर आधारित थे, जहाँ व्यक्तिगत आकांक्षाएँ सामूहिक मूल्यों के साथ संतुलित रहती थीं।

आज के संदर्भ में स्थिति भिन्न है। तीव्र शहरीकरण, वैश्वीकरण, तकनीकी विस्तार और प्रतिस्पर्धी जीवनशैली ने पारिवारिक संरचना को परिवर्तित कर दिया है। संयुक्त परिवारों का स्थान एकल परिवारों ने ले लिया है। आर्थिक स्वतंत्रता और उच्च शिक्षा ने युवाओं को आत्मनिर्णय की शक्ति प्रदान की है, जो सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन है। किंतु जब यह आत्मनिर्णय संवादहीनता और स्वकेंद्रित दृष्टिकोण में परिवर्तित हो जाता है, तब विश्वास का संकट उत्पन्न होता है। दूसरी ओर, कई माता–पिता पारंपरिक मान्यताओं और अपेक्षाओं को यथावत बनाए रखना चाहते हैं, जिससे पीढ़ीगत टकराव तीव्र हो जाता है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से देखें तो संवाद का अभाव, समय की कमी, डिजिटल माध्यमों पर अत्यधिक निर्भरता तथा तुलना की प्रवृत्ति पारिवारिक निकटता को कमजोर कर रही है। माता–पिता की अपेक्षाएँ और संतानों की महत्वाकांक्षाएँ जब परस्पर संवाद के बिना टकराती हैं, तब संबंधों में अविश्वास पनपता है। यह स्थिति केवल निजी संबंधों का विघटन नहीं, बल्कि सामाजिक पूँजी के क्षरण का भी संकेत है, जो किसी भी राष्ट्र के दीर्घकालिक विकास के लिए हानिकारक है।

समाधान किसी एक पक्ष के आग्रह में नहीं, बल्कि संतुलित संवाद और मूल्य–समन्वय में निहित है। आधुनिकता और परंपरा परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि पूरक हो सकती हैं। माता–पिता को चाहिए कि वे संतानों के विचारों और जीवन–दृष्टि को समझने का प्रयास करें, जबकि संतानों को भी यह स्वीकार करना होगा कि अनुभव, धैर्य और परंपरा जीवन के स्थायी मार्गदर्शक हैं। विश्वास आरोपित नहीं किया जा सकता बल्कि उसे संवाद, सहानुभूति और पारदर्शिता के माध्यम से अर्जित करना पड़ता है।

अतः समय की मांग है कि परिवारों में पुनः विश्वास की संस्कृति विकसित की जाए। यदि हम भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की आत्मा–सम्मान, कर्तव्य और संवेदना–को समकालीन संदर्भ में पुनर्स्थापित कर सकें, तो बिखरते परिवार पुनः सुदृढ़ हो सकते हैं। परिवार का पुनर्गठन केवल सामाजिक आवश्यकता नहीं, बल्कि सभ्यता की निरंतरता का आधार है।

**– अनिल ठाकुर**

# विषय सूची

**बिहार का आर्थिक परिदृश्य,**
**वर्ष– 17, अंक–02 जुलाई–दिसंबर 2025** **ISSN: 0974-9969**

1. औद्योगीकरण एवं मानवीय मूल्य : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन
1. **4/ अनिल ठाकुर**
2. पर्यटन, संस्कृति और पर्यावरणीय स्थिरता : मंदिरों का प्रभाव
**11/ परिणीता कुमारी एवं जितेंद्र वर्मा**
3. परंपरा से आधुनिकता की ओर : दुमका के आदिवासी समाज में सांस्कृतिक परिवर्तन का समाजशास्त्रीय विश्लेषण
**16/ अर्पणा कुमारी**
4. झारखंड में खाद्य सुरक्षा योजना की उपलब्धियाँ एवं गरीबों के उत्थान में योगदान
**31/ अनुप कुमार एवं राजेश कुमार मिश्र**
5. कृषि में महिला श्रमिकों पर शिक्षा, संस्कृति और अर्थ के प्रभाव का अध्ययन
**41/ राधिका रानी**
6. खगड़िया प्रखंड की स्कूली कल्याणकारी योजनाओं की प्रभावशीलता का अध्ययन
**47/राम कुमार झा एवं विनय नाथ झा**
7. प्रधानमंत्री आवास योजना के अंतर्गत महिला सशक्तीकरण पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन
**54/ चन्दन कुमार वर्मा**
8. शेरशाह का मुद्रा प्रणाली तथा अकबर के मुद्रा प्रणाली का तुलनात्मक अध्ययन
**60/ पिंटु कुमार**
9. अनुसूचित जाति के लोगों की आर्थिक स्थिति पर प्रधानमंत्री मुद्रा योजना के प्रभावों का विश्लेषणात्मक अध्ययन
**68/ बिनोद मरीक एवं राहुल कुमार संतोष**
10. स्वरोजगार सृजन में डेयरी फार्मिंग की भूमिकाः एक अर्थशास्त्रीय विश्लेषण
**74/ राजेश रंजन एवं राहुल कुमार संतोष**
11. नकद रहित लेनदेन व्यवस्था एवं उपभोक्ता व्यवहारः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन
**79/ सोनम कुमारी एवं मनोज कुमार मंडल**
12. ग्रामीण महिलाओं की निर्णय–निर्धारण क्षमता पर वित्तीय प्रबंधन कौशल का प्रभावः बिहार के खगड़िया जिले के संदर्भ में विश्लेषणात्मक अध्ययन
**85/ अनुराधा कुमारी एवं नवलता**
13. प्रोफेसर आल अहमद सुरूर की तनकीद निगारी
**90/ अब्दुल वदूद अंसारी**
14. पुस्तक समीक्षा
**94/ रविशंकर कुमार चौधरी**

**ISSN- 0974-9969**
बिहार का आर्थिक परिदृश्य, वर्ष–17, अंक–02, जुलाई–दिसंबर–2025

# पर्यटन, संस्कृति और पर्यावरणीय स्थिरता : मंदिरों का प्रभाव

***परिणीता कुमारी**
शोधार्थी, इतिहास विभाग, पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म.प्र.) *Email:parinitasinha4287@gmail.com*
****जितेंद्र वर्मा**
इतिहास विभाग, पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म.प्र.)

**सारांश**

मंदिर पर्यटन, संस्कृति और पर्यावरणीय स्थिरता पर गहरा प्रभाव डालते हैं। ये केवल धार्मिक आस्था के केंद्र नहीं, बल्कि सांस्कृतिक विरासत, सामाजिक एकता और स्थानीय विकास के सशक्त माध्यम भी हैं। मंदिरों से जुड़ा पर्यटन समाज को आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ बनाता है और स्थानीय कारीगरों, व्यापारियों तथा सेवा क्षेत्र को प्रत्यक्ष लाभ पहुँचाता है। हालाँकि, अत्यधिक और अनियोजित पर्यटन से प्रदूषण, संसाधनों पर दबाव तथा पर्यावरणीय क्षरण जैसी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। इसलिए आवश्यकता है कि मंदिर पर्यटन को सतत विकास के सिद्धांतों पर आधारित किया जाए, जहाँ श्रद्धा और संरक्षण दोनों का संतुलन बना रहे।

**शब्द कुंजी** : संस्कृति, पर्यटन, पर्यावरणीय स्थिरता, सांस्कृतिक विरासत, अर्थव्यवस्था, प्रदूषण, संसाधन, सतत विकास

## परिचय

भारत में मंदिर केवल उपासना के स्थल नहीं, बल्कि सभ्यता और संस्कृति के साक्षी हैं। वे इतिहास, वास्तुकला, संगीत, नृत्य, चित्रकला और साहित्य जैसी कलाओं के केंद्र रहे हैं। मंदिर न केवल आस्था के केंद्र हैं बल्कि सांस्कृतिक और आर्थिक विकास के भी वाहक हैं।

मंदिर पर्यटन स्थानीय अर्थव्यवस्था को गति देता है, क्षेत्रीय पहचान को सशक्त बनाता है और पर्यावरण संरक्षण के प्रति सकारात्मक व्यवहार को प्रेरित कर सकता है। जब किसी स्थान पर बड़ी संख्या में पर्यटक आते हैं, तो वहां के छोटे व्यवसाय, हस्तशिल्प, परिवहन और आवास उद्योग को भी प्रोत्साहन मिलता है।

साथ ही, धार्मिक आस्थाओं के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण, स्वच्छता और सामूहिक जिम्मेदारी की भावना भी प्रबल होती है। इस प्रकार मंदिरों का प्रभाव केवल धार्मिक नहीं, बल्कि सामाजिक, आर्थिक और पारिस्थितिक भी है।

## मंदिरों का महत्व

### (क) सांस्कृतिक संरक्षण

मंदिर भारतीय कला, स्थापत्य और संस्कृति का भौतिक प्रतीक हैं। तीर्थ–यात्रा पर्यटन इनके संरक्षण और संवर्धन में सहायक होता है। भारत की पहचान इसकी सांस्कृतिक विविधता और परंपराओं में निहित है। मंदिर इस सांस्कृतिक धरोहर के जीवंत प्रतीक हैं। उनके स्थापत्य में प्रयुक्त पत्थर, मूर्तिकला, भित्ति चित्र और शिलालेख इतिहास के साक्ष्य हैं।

तीर्थयात्रा और धार्मिक पर्यटन से इन मंदिरों के संरक्षण के लिए धन और जनसहभागिता मिलती है। कई मंदिर समितियाँ अब अपने परिसर में संग्रहालय और सांस्कृतिक केंद्र भी स्थापित कर रही हैं, जो स्थानीय कला और विरासत को आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचाने में मदद करते हैं।

### (ख) आस्था और परंपरा

धार्मिक पर्यटन स्थानीय परंपराओं और सामाजिक मूल्यों को बनाए रखने में मदद करता है। मंदिर मानव जीवन में आध्यात्मिक शांति और सामाजिक अनुशासन का केंद्र माने जाते हैं। धार्मिक पर्यटन लोगों को न केवल आस्था से जोड़ता है, बल्कि एक साझा सांस्कृतिक पहचान भी प्रदान करता है।

त्योहारों, मेलों और धार्मिक आयोजनों के माध्यम से समाज में एकता और सद्भाव की भावना बढ़ती है। इस प्रकार मंदिर परंपरा और आधुनिकता के बीच एक सेतु का कार्य करते हैं।

### (ग) स्थानीय अर्थव्यवस्था

मंदिरों से जुड़े पर्यटन से स्थानीय लोगों को रोजगार मिलता है और क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था को मजबूती मिलती है। तीर्थ स्थलों पर होटल, भोजनालय, परिवहन, स्मृति–चिह्न दुकानों और गाइड सेवाओं जैसे अनेक क्षेत्र विकसित होते हैं।

उदाहरणस्वरूप, वाराणसी, तिरुपति, पुरी और उज्जैन जैसे धार्मिक केंद्रों में मंदिर पर्यटन से हजारों लोगों को रोजगार मिलता है। यह ग्रामीण क्षेत्रों में स्वरोजगार को भी बढ़ावा देता है और महिलाओं को लघु उद्योगों से जोड़ने का अवसर प्रदान करता है।

### (घ) सांस्कृतिक पहचान

मंदिर किसी समुदाय की सांस्कृतिक पहचान को जीवित रखते हैं और सामाजिक एकता को प्रोत्साहित करते हैं। हर क्षेत्र का कोई न कोई प्रमुख मंदिर उसकी पहचान बन जाता है। वह न केवल धार्मिक महत्व रखता है, बल्कि उस समाज की भाषाई, कलात्मक और ऐतिहासिक विशेषताओं को भी प्रदर्शित करता है।

मंदिरों से जुड़ी लोककथाएँ, उत्सव और परंपराएँ समाज की जड़ों को जीवित रखती हैं। इस प्रकार मंदिर केवल ईश्वर के प्रति भक्ति का नहीं, बल्कि संस्कृति के संरक्षण का भी प्रतीक हैं।

**मंदिरों का प्रभाव**

**i) पर्यटन पर प्रभाव**

मंदिर पर्यटन भारत के पर्यटन उद्योग की रीढ़ है। हर वर्ष लाखों देशी–विदेशी पर्यटक धार्मिक स्थलों की यात्रा करते हैं, जिससे पर्यटन क्षेत्र को बड़ा आर्थिक लाभ होता है।

*** पर्यटन स्थल के रूप में महत्वः** मंदिरों की आध्यात्मिक और स्थापत्य विशेषताएँ देश–विदेश के लाखों पर्यटकों को आकर्षित करती हैं। अनेक लोग इसे आत्मिक अनुभव या सांस्कृतिक अध्ययन के रूप में भी देखते हैं।

*** आर्थिक योगदानः** पर्यटक स्थानीय सेवाओं, आवास, भोजन और वस्तुओं पर खर्च करते हैं, जिससे क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था को लाभ होता है। इससे स्थानीय राजस्व बढ़ता है और आसपास का बाजार सशक्त होता है।

*** रोजगार सृजनः** तीर्थ–गाइड, होटल–रेस्टोरेंट, परिवहन और हस्तशिल्प से जुड़े अनेक प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रोजगार उत्पन्न होते हैं। होटल व्यवसाय, ट्रैवल एजेंसी, धार्मिक वस्त्र, मूर्तिकला, और फूलमालाओं जैसी सेवाएँ हजारों लोगों की आजीविका बनती हैं।

**ii) संस्कृति पर प्रभाव**

*** सांस्कृतिक विरासत का संरक्षणः** मंदिर भारतीय संस्कृति, धर्म और परंपराओं के वाहक हैं। मंदिरों की पूजा–पद्धति, संगीत, नृत्य, लोककला और परंपराएँ भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग हैं। पर्यटक जब इनसे जुड़ते हैं, तो सांस्तिक आदान–प्रदान भी होता है।

*** धार्मिक महत्वः** मंदिर स्थानीय समाज में आध्यात्मिक चेतना और सामाजिक एकता को बढ़ावा देते हैं। मंदिर श्रद्धालुओं के लिए केवल आस्था का केंद्र नहीं, बल्कि आत्मचिंतन और नैतिक शिक्षण का स्थान भी हैं।

*** सांस्कृतिक केंद्रः** मंदिर केवल पूजा–स्थल नहीं बल्कि त्योहारों, उत्सवों और सामाजिक संवाद के केंद्र भी होते हैं। मंदिरों के प्रांगण में संगीत समारोह, नृत्य उत्सव और सांस्कृतिक मेलों का आयोजन होता है। इससे युवा पीढ़ी में पारंपरिक कलाओं के प्रति सम्मान की भावना पैदा होती है और संस्कृति जीवंत बनी रहती है।

**iii) पर्यावरणीय स्थिरता पर प्रभाव**

**(क) नकारात्मक प्रभावः**

अनियंत्रित पर्यटन से मंदिरों के आस–पास पर्यावरणीय असंतुलन उत्पन्न हो सकता है।

*** प्रदूषणः** बड़ी संख्या में आने वाले पर्यटकों से जल, ध्वनि और ठोस अपशिष्ट प्रदूषण की समस्या बढ़ती है।

*** संसाधनों पर दबावः** जल और ऊर्जा जैसे संसाधनों की खपत बढ़ती है, जिससे स्थानीय पारिस्थितिकी पर बोझ पड़ता है।

*** पर्यावरणीय क्षरणः** पेड़ों की कटाई, वन्यजीवों का पलायन और प्राकृतिक आवासों का नुकसान देखा जा सकता है।

**(ख) सकारात्मक प्रभावः**

यदि मंदिरों के आस–पास का क्षेत्र सुव्यवस्थित रूप से प्रबंधित किया जाए तो यह पर्यावरणीय स्थिरता का उदाहरण बन सकता है।

*** पर्यावरण संरक्षणः** कुछ मंदिरों के साथ जुड़े प्राकृतिक परिसर जैव–विविधता और हरियाली को संरक्षित करते हैं। अनेक मंदिर अपने परिसर में वृक्षारोपण, स्वच्छता और अपशिष्ट प्रबंधन को बढ़ावा देते हैं। कुछ मंदिरों ने "प्लास्टिक–मुक्त क्षेत्र" जैसी पहलें शुरू की हैं।

*** जागरूकताः** धार्मिक शिक्षा और आध्यात्मिकता के माध्यम से पर्यावरणीय जागरूकता फैलती है, जिससे लोग स्थायी पर्यटन व्यवहार अपनाते हैं। "स्वच्छ मंदिर.स्वस्थ पर्यावरण" जैसे अभियानों ने कई स्थानों पर सकारात्मक परिणाम दिए हैं।

**प्रबंधन और संरक्षण**

मंदिर प्रबंधन और स्थानीय प्रशासन को पर्यावरण–अनुकूल नीतियाँ अपनानी चाहिए – जैसे अपशिष्ट प्रबंधन, जल–संरक्षण, ऊर्जा–कुशल व्यवस्था और जन–जागरूकता अभियान। इन कदमों से पर्यटन के नकारात्मक प्रभावों को कम किया जा सकता है।

मंदिर प्रशासन और स्थानीय शासन को मिलकर ऐसे कदम उठाने चाहिए जो धार्मिक पर्यटन को सतत और जिम्मेदार बनाएँ। स्थानीय लोगों को प्रशिक्षण देकर उन्हें "हरित पर्यटन" की अवधारणा से जोड़ना भी आवश्यक है, ताकि वे स्वयं इस प्रक्रिया के भागीदार बन सकें।

**सतत विकास के लिए संतुलन**

*** सतत विकासः**

स्थानीय समुदायों के सहयोग से ऐसी योजनाएँ बनाई जानी चाहिए जो पर्यटन के साथ पर्यावरणीय संरक्षण भी सुनिश्चित करें। स्थायी विकास का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि धार्मिक पर्यटन से आर्थिक लाभ के साथ–साथ प्रकृति और संस्कृति दोनों की रक्षा हो। इसके लिए स्थानीय समुदायों को नीति–निर्माण में शामिल करना चाहिए।

*** योजना और प्रबंधनः**

सांस्कृतिक और प्राकृतिक संसाधनों के संतुलित उपयोग के लिए समेकित नीति और प्रबंधन आवश्यक है। पारंपरिक निर्माण तकनीकों और स्थानीय सामग्री के उपयोग से मंदिरों की मरम्मत अधिक पर्यावरण–अनुकूल बन सकती है।

*** वहन क्षमता का महत्वः**

पर्यटन स्थलों पर पर्यटकों की संख्या उनकी वहन–क्षमता के अनुसार सीमित होनी चाहिए ताकि पर्यावरण और अधोसंरचना पर अतिरिक्त दबाव न पड़े। हर तीर्थस्थल

की वहन क्षमता निर्धारित करनी चाहिए – यानी एक समय में कितने पर्यटक उस स्थान की संरचना और पर्यावरण को प्रभावित किए बिना आ सकते हैं।

**निष्कर्ष**

पर्यटन, संस्कृति और पर्यावरणीय स्थिरता के बीच गहरा और जटिल संबंध है। जहाँ यह आस्था और अर्थव्यवस्था दोनों को सुदृढ़ करता है, वहीं इसकी अनियंत्रित वृद्धि पर्यावरण और संस्कृति के लिए खतरा बन सकती है। समाधान जिम्मेदार पर्यटन में है – ऐसा पर्यटन जो श्रद्धा, संवेदना और संरक्षण तीनों को समान महत्व देता है। सतत विकास के लिए आवश्यक है कि सरकार, स्थानीय समुदाय, व्यवसाय और पर्यटक मिलकर कार्य करें, ताकि सांस्कृतिक विरासत, पर्यावरण संरक्षण और आर्थिक लाभ – तीनों के बीच एक स्वस्थ संतुलन बना रहे।

अंततः, मंदिर केवल ईश्वर के प्रति समर्पण का नहीं बल्कि पृथ्वी और प्रकृति के प्रति जिम्मेदारी का भी प्रतीक होने चाहिए।

**संदर्भ सूची**


*[1] K. A. Shinde and D. H. Olsen, "Reframing the Intersections of Pilgrimage, Religious Tourism and Sustainability," Sustainability, vol- 15, no- 1, p- 461, Jan- 2023. [Online]. Available: https://doi-org/10-3390/su15010461*

*[2] D. Iliev, "Analyzing an Impact of Temple Economics on GDP and Creating an Enabling Environment for Temple&Tourism in India," Int. J.Finance Manag. Res., vol- 4, no- 4, Apr. 2024. [Online]. Available: https://www-ijfmr-com/papers/2024/4/26190-pdf*

*[3] S. Padmanabhan Bachav, Religious Tourism: A Road Map for Sustainable Development. Mumbai, India: Excel Publication, 2016. [Online]. Available: https://excelpublication-com/wp&content/uploads/2016/03/Prof&Shreekala&Padmanabhan&Bachav.pdf*

*[4] R. Sharma and A. Singh, "A Study on Impacts of Pilgrimage Tourism with Respect to Annavaram Satya Narayana Swamy Temple in Andhra Pradesh," Heritage: J. Multidiscip. Stud. Archaeol., vol- 6, pp- 1126-1133, 2018. [Online]. Available: https://www-heritageuniversityofkerala-com/JournalPDF/Volume6/62.pdf*

*[5] I. Arbulú, et al., "Pro&Environmental Behavior of Religious Tourists: Moderating Role of Perceived Value and Moral Obligation," J. Sustain. Tour., vol- 31, no- 4, pp- 820-838, 2023. [Online]. Available: https://doi-org/10-1177/19389655231182090*

# INTERNATIONAL INTERDISCIPLINARY SEMINAR

**on**

## ENVIRONMENT, CULTURE AND SUSTAINABLE DEVELOPMENT

**17th & 18th FEBRUARY, 2024**

**Organized By : Hindi Vidyapith B.Ed. College, Deoghar, Jharkhand**

**In Academic collaboration with IGNOU Regional Centre, Deoghar, Jharkhand**

**&**

**Anuchintan Foundation**

# Certificate

This is to certify that Parinita Kumari
of P.K. University, Shivpuri (M.P.)
attended / chaired session / delivered Plenary lecture/ presented paper on
Baba Baidyanath Dham Mandir : Ek Sanskritik Vishleshan
in the above mentioned Seminar.

17.02.24

| Sri Krishnanand Jha | Dr. Saroj Kumar Mishra | Dr. Asha Mishra | Dr. Anil Thakur |
|---|---|---|---|
| Chairman, HVP B.Ed. College, Deoghar, Jharkhand | IGNOU, RC- Deoghar, Jharkhand | Principal HVP B.Ed. College, Deoghar, Jharkhand | Secretary Anuchintan Foundation |

SONA DEVI UNIVERSITY

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

# INTERNATIONAL INTERDISCIPLINARY SEMINAR

ON

## Dimensions of Indian Knowledge System : Doctrines & Trends

*29th & 30th December, 2024*

*Jointly Organized by*

**Sona Devi University Ghatsila Jharkhand, Dr. Jagannath Mishra College, Jasidih, Shubha Devi Memorial Trust, Deoghar & Anuchintan Foundation, Khagaria, Bihar In Academic Collaboration with IGNOU Regional Centre, Deoghar, Jharkhand**

## CERTIFICATE

This is to certify that परिणीता कुमारी, शोधार्थी

of पी० के० विश्वविद्यालय, शिवपुरी, मध्यप्रदेश

attended/ chaired session/ delivered Plenary lecture/ presented paper on _____

'झारखंड के ऐतिहासिक धरोहर : बाबा बैजनाथ धाम मंदिर'

in the above mentioned seminar.

30/12/2024

| Prof. (Dr.) J.P. Mishra | Dr. Saroj Kr. Mishra | Dr. R.K. Choudhary | Dr. Anil Thakur |
|---|---|---|---|
| *Vice Chancellor* | *IGNOU, RC- Deoghar* | *Coordinator, IGNOU* | *Secretary* |
| *Sona Devi University* | *Jharkhand* | *Dr. J.M. College, Jasidih* | *Anuchintan Foundation* |
| *Ghatsila* | | | *HOD, Eco. K.D.S. College, Gogri* |